MAHN302DST

दलित साहित्य
(विशेष अध्ययन)

एम.ए.
(तृतीय सेमेस्टर के लिए)
पेपर – 12

दूरस्थ शिक्षा निदेशालय
मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी
हैदराबाद-32, तेलंगाना, भारत

© **Maulana Azad National Urdu University, Hyderabad**

Course : Dalit Sahitya (Vishesh Adhyayan)

ISBN: 978-81-975411-7-9

First Edition: June, 2024

Publisher	:	Registrar, Maulana Azad National Urdu University
Edition	:	2024
Copies	:	500
Price	:	313/-
Copy Editing	:	Dr. Wajada Ishrat, MANUU, Hyderabad Dr. L. Anil, DDE, MANUU, Hyderabad
Cover Designing	:	Dr. Mohd. Akmal Khan, DDE, MANUU, Hyderabad
Printing	:	Print Time & Business Enterprises, Hyderabad

Dalit Sahitya (Vishesh Adhyayan)

For

M.A. Hindi

3rd Semester

On behalf of the Registrar, Published by:

Directorate of Distance Education

Maulana Azad National Urdu University

Gachibowli, Hyderabad-500032 (TS), Bharat

*Director:*dir.dde@manuu.edu.in *Publication:* ddepublication@manuu.edu.in

Phone number: 040-23008314 Website: manuu.edu.in

© All rights reserved. No part of this publication may be reproduced or transmitted in any form or by any means, electronically or mechanically, including photocopying, recording or any information storage or retrieval system, without prior permission in writing from the publisher (registrar@manuu.edu.in)

संपादक

डॉ. आफ़ताब आलम बेग
सहायक कुल सचिव,
दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, मानू

Editor

Dr. Aftab Alam Baig
Assistant Registrar
DDE, MANUU

संपादक-मंडल
(Editorial Board)

प्रो. ऋषभदेव शर्मा
पूर्व अध्यक्ष, उच्च शिक्षा और शोध संस्थान, दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, हैदराबाद
परामर्शी (हिन्दी), दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, मानू

Prof. Rishabha Deo Sharma
Former Head, P.G. and Research Institute, Dakshin Bharat Hindi Prachar Sabha, Hyderabad
Consultant (Hindi), DDE, MANUU

प्रो. श्याम राव राठोड़
अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
अंग्रेज़ी और विदेशी भाषा वि.वि.,हैदराबाद

Prof. Shyamrao Rathod
Head, Department of Hindi
EFL University, Hyderabad

प्रो. गंगाधर वानोडे
क्षेत्रीय निदेशक
केंद्रीय हिन्दी संस्थान, सिकंदराबाद, हैदराबाद

Prof. Gangadhar Wanode
Regional Director
Central Institute of Hindi
Secunderabad, Hyderabad.

डॉ. आफ़ताब आलम बेग
सहायक कुल सचिव,
दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, मानू

Dr. Aftab Alam Baig
Assistant Registrar, DDE, MANUU

डॉ. वाजदा इशरत
अतिथि प्राध्यापक/असिस्टेंट प्रोफ़ेसर (सं)
दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, मानू

Dr. Wajada Ishrat
Guest Faculty/Assistant Professor (Cont.)
DDE, MANUU

डॉ. एल. अनिल
अतिथि प्राध्यापक/असिस्टेंट प्रोफ़ेसर (सं)
दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, मानू

Dr. L. Anil
Guest Faculty/Assistant Professor (Cont.)
DDE, MANUU

पाठ्यक्रम-समन्वयक

डॉ. आफ़ताब आलम बेग
सहायक कुल सचिव, दूरस्थ शिक्षा निदेशालय
मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी, हैदराबाद

लेखक **इकाई संख्या**

- **डॉ. गुर्रमकोंडा नीरजा**, एसोसिएट प्रोफेसर, उच्च शिक्षा और शोध संस्थान, दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, चेन्नै 1,2,3
- **डॉ. इबरार खान**, असिस्टेंट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष,हिन्दी विभाग, मिर्ज़ा ग़ालिब कॉलेज, गया. 4
- **डॉ. शशिबाला**, पूर्व हिन्दी अध्यापक, केंद्रीय विद्यालय, राष्ट्रीय पुलिस अकादमी, हैदराबाद 5,6, 16
- **डॉ. डोड्डा शेषु बाबु,** एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, मानू 7,8,9
- **डॉ. वाजदा इशरत,** अतिथि प्राध्यापक/असिस्टेंट प्रोफेसर (सं), दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, मानू 10,15
- **डॉ. एल. अनिल,** अतिथि प्राध्यापक/असिस्टेंट प्रोफेसर(सं), दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, मानू, हैदराबाद 11, 12
- **डॉ. जी. वी रत्नाकर,** एसोसिएट प्रोफेसर, अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, मानू, हैदराबाद 13. 14

विषयानुक्रमणिका

संदेश	:	कुलपति	7
संदेश	:	निदेशक	9
भूमिका	:	पाठ्यक्रम–समन्वयक	11

खंड/ इकाई		विषय	पृष्ठ संख्या
खंड 1	:		
इकाई 1	:	दलित साहित्य : एक परिचय	13
इकाई 2	:	दलित आंदोलन : स्वतंत्रतापूर्व	25
इकाई 3	:	दलित आंदोलन : स्वातंत्र्योत्तर	39
इकाई 4	:	हिन्दी दलित कविता : एक परिचय (भाषा एवं शैली)	51
खंड 2	:		
इकाई 5	:	ओमप्रकाश वाल्मीकि : एक परिचय	71
इकाई 6	:	'बस्स! बहुत हो चूका' : आलोचना	86
इकाई 7	:	दलित आत्मकथा	103
इकाई 8	:	रूपनारायण सोनकर : व्यक्तित्व और कृतित्व	113
खंड 3	:		
इकाई 9	:	'नागफनी' की आलोचना	125
इकाई 10	:	दलित कहानी: एक परिचय	135
इकाई 11	:	जयप्रकाश कर्दम : एक परिचय	146
इकाई 12	:	'नो बार' : आलोचना	157

खंड 4 :

इकाई 13 : सुशीला टाकभौरे : एक परिचय 167

इकाई 14 : 'संघर्ष' कहानी का तात्विक विवेचन 180

इकाई 15 : ओमप्रकाश वाल्मीकि: एक परिचय 195

इकाई 16 : 'बैल की खाल' : आलोचना 208

परीक्षा प्रश्नपत्र का नमूना 220

प्रूफ रीडर:

प्रथम : डॉ. वाजदा इशरत, अतिथि प्राध्यापक/असिस्टेंट प्रोफ़ेसर(सं), दू. शि. नि., मानू

द्वितीय : डॉ. एल. अनिल, अतिथि प्राध्यापक/असिस्टेंट प्रोफ़ेसर (सं), दू. शि. नि., मानू

अंतिम : डॉ. आफ़ताब आलम बेग, सहायक कुलसचिव, दू. शि. नि., मानू.

संदेश

मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी की स्थापना 1998 में संसद के एक अधिनियम द्वारा की गई थी। यह NAAC मान्यता प्राप्त एक केंद्रीय विश्वविद्यालय है। विश्वविद्यालय का अधिदेश है: (1) उर्दू भाषा का प्रचार-प्रसार और विकास (2) उर्दू माध्यम से व्यावसायिक और तकनीकी शिक्षा (3) पारंपरिक और दूरस्थ शिक्षा के माध्यम से शिक्षा प्रदान करना, और (4) महिला शिक्षा पर विशेष ध्यान देना। यही वे बिंदु हैं जो इस केंद्रीय विश्वविद्यालय को अन्य सभी केंद्रीय विश्वविद्यालयों से अलग करते हैं और इसे एक अनूठी विशेषता प्रदान करते हैं, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में भी मातृभाषा और क्षेत्रीय भाषाओं में शिक्षा के प्रावधान पर जोर दिया गया है।

उर्दू माध्यम से ज्ञान-विज्ञान के प्रचार-प्रसार का एकमात्र उद्देश्य उर्दू भाषी समुदाय के लिए समकालीन ज्ञान और विषयों की पहुंच को सुविधाजनक बनाना है। लंबे समय से उर्दू में पाठ्यक्रम सामग्री का अभाव रहा है। इस लिए उर्दू भाषा में पुस्तकों की अनुपलब्धता चिंता का विषय रहा है। नई शिक्षा नीति 2020 के दृष्टिकोण के अनुसार उर्दू विश्वविद्यालय मातृभाषा / घरेलू भाषा में पाठ्यक्रम सामग्री प्रदान करने की राष्ट्रीय प्रक्रिया का हिस्सा बनने को अपना सौभाग्य मानता है। इसके अतिरिक्त उर्दू में पठन सामग्री की अनुपलब्धता के कारण उभरते क्षेत्रों में अद्यतन ज्ञान और जानकारी प्राप्त करने या मौजूदा क्षेत्रों में नए ज्ञान प्राप्त करने में उर्दू भाषी समुदाय सुविधाहीन रहा है। ज्ञान के उपरोक्त कार्य-क्षेत्र से संबंधित सामग्री की अनुपलब्धता ने ज्ञान प्राप्त करने के प्रति उदासीनता का वातावरण बनाया है जो उर्दू भाषी समुदाय की बौद्धिक क्षमताओं को मुख्य रूप से प्रभावित कर सकता है। ये वह चुनौतियां हैं जिनका सामना उर्दू विश्वविद्यालय कर रहा है। स्व-अध्ययन सामग्री का परिदृश्य भी बहुत अलग नहीं है। प्रत्येक शैक्षणिक वर्ष के प्रारंभ में स्कूल/कॉलेज स्तर पर भी उर्दू में पाठ्य पुस्तकों की अनुपलब्धता पर चर्चा होती है। चूंकि उर्दू विश्वविद्यालय की शिक्षा का माध्यम केवल उर्दू है और यह विश्वविद्यालय लगभग सभी महत्वपूर्ण विषयों के पाठ्यक्रम प्रदान करता है, इसलिए इन सभी विषयों की पुस्तकों को उर्दू में तैयार करना विश्वविद्यालय की सबसे महत्वपूर्ण जिम्मेदारी है। इन उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए मौलाना आज़ाद राष्ट्रीय उर्दू विश्वविद्यालय अपने दूरस्थ शिक्षा के छात्रों को स्व-अध्ययन सामग्री अथवा सेल्फ लर्निंग मैटेरियल (SLM) के रूप में पाठ्य सामग्री उपलब्ध कराता है। वहीं उर्दू माध्यम से ज्ञान प्राप्त करने के इच्छुक किसी भी व्यक्ति के लिए भी यह सामग्री उपलब्ध है। अधिकाधिक लोग इससे लाभान्वित हो सकें, इसके लिए उर्दू में इलेक्ट्रॉनिक पाठ्य सामग्री अथवा eSLM विश्वविद्यालय की वेबसाइट से मुफ़्त डाउनलोड के लिए उपलब्ध है।

मुझे अत्यंत प्रसन्नता है कि संबंधित शिक्षकों की कड़ी मेहनत और लेखकों के पूर्ण सहयोग के कारण पुस्तकों के प्रकाशन का कार्य उच्च-स्तर पर प्रारंभ हो चुका है। दूरस्थ शिक्षा के छात्रों की सुविधा के लिए, स्व-अध्ययन सामग्री की तैयारी और प्रकाशन की प्रक्रिया विश्वविद्यालय के लिए सर्वोपरि है। मुझे विश्वास है कि हम अपनी स्व-शिक्षण सामग्री के माध्यम से एक बड़े उर्दू भाषी समुदाय की आवश्यकताओं को पूरा करने में सक्षम होंगे और इस विश्वविद्यालय के अधिदेश को पूरा कर सकेंगे।

एक ऐसे समय जब हमारा विश्वविद्यालय अपनी स्थापना की 25वीं वर्षगांठ मना चुका है, मुझे इस बात का उल्लेख करते हुए हर्ष हो रहा है कि विश्वविद्यालय का दूरस्थ शिक्षा निदेशालय कम समय में स्व-अध्ययन सामग्री तथा पुस्तकें तैयार कर विद्यार्थियों को पहुंचा रहा है। देश के कोने कोने में छात्र विभिन्न दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रमों से लाभान्वित हो रहे हैं। यद्यपि पिछले वर्षों कोविड-19 की विनाशकारी स्थिति के कारण प्रशासनिक मामलों और संचार में भी काफी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा है लेकिन विश्वविद्यालय द्वारा दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रमों को सफलतापूर्वक संचालित करने के लिए सर्वोत्तम प्रयास किए गए हैं।

मैं विश्वविद्यालय से जुड़े सभी विद्यार्थियों को इस परिवार का अंग बनने के लिए हृदय से बधाई देता हूं और यह विश्वास दिलाता हूँ कि मौलाना आज़ाद राष्ट्रीय उर्दू विश्वविद्यालय का शैक्षिक मिशन सदैव उनके लिए ज्ञान का मार्ग प्रशस्त करता रहेगा। शुभकामनाओं सहित!

प्रो. सैयद ऐनुल हसन

कुलपति

संदेश

दूरस्थ शिक्षा प्रणाली को पूरी दुनिया में अत्यधिक कारगर और लाभप्रद शिक्षा प्रणाली की हैसियत से स्वीकार किया जा चुका है और इस शिक्षा प्रणाली से बड़ी संख्या में लोग लाभान्वित हो रहे हैं। मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी ने भी अपनी स्थापना के आरंभिक दिनों से ही उर्दू तबके की शिक्षा की स्थिति को महसूस करते हुए इस शिक्षा प्रणाली को अपनाया है। मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी का प्रारम्भ 1998 में दूरस्थ शिक्षा प्रणाली से हुआ और इस के बाद 2004 में विधिवत तौर पर पारंपरिक शिक्षा का आग़ाज़ हुआ। पारंपरिक शिक्षा के विभिन्न विभाग स्थापित किए गए।

देश की शिक्षा प्रणाली को बेहतर अंदाज़ से जारी रखने में UGC की अहम् भूमिका रही है। दूरस्थ शिक्षा (ODL) के तहत जारी विभिन्न प्रोग्राम UGC-DEB से मंजूर हैं।

पिछले कई वर्षों से यूजीसी-डीईबी (UGC-DEB) इस बात पर ज़ोर देता रहा है कि दूरस्थ शिक्षा प्रणाली के पाठ्यक्रम व व्यवस्था को पारंपरिक शिक्षा प्रणाली के पाठ्यक्रम व व्यवस्था से जोड़कर दूरस्थ शिक्षा प्रणाली के छात्रों के मेयार को बुलंद किया जाये। चूंकि मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी दूरस्थ शिक्षा और पारंपरिक शिक्षा का विश्वविद्यालय है, अतः इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए यूजीसी-डीईबी (UGC-DEB) के दिशा निर्देशों के मुताबिक़ दूरस्थ शिक्षा प्रणाली और पारंपरिक शिक्षा प्रणाली के पाठ्यक्रम को जोड़कर और गुणवत्तापूर्ण करके स्व-अध्ययन सामग्री को पुनः क्रमवार यू.जी. और पी.जी. के विद्यार्थियों के लिए क्रमशः 6 खंड- 24 इकाइयों और 4 खंड – 16 इकाइयों पर आधारित नए तर्ज़ की रूपरेखा पर तैयार किया गया है।

दूरस्थ शिक्षा निदेशालय यू.जी., पी.जी., बी.एड., डिप्लोमा और सर्टिफिकेट कोर्सेज़ पर आधारित कुल 17 पाठ्यक्रम चला रहा है। साथ ही तकनीकी हुनर पर आधारित पाठ्यक्रम भी शुरू किए जा रहे हैं। शिक्षार्थियों की सुविधा के लिए 9 क्षेत्रीय केंद्र (बेंगलुरु, भोपाल, दरभंगा, दिल्ली, कोलकत्ता, मुंबई, पटना, रांची और श्रीनगर) और 6 उपक्षेत्रीय केंद्र (हैदराबाद, लखनऊ, जम्मू, नूह, अमरावती और वाराणसी) का एक बहुत बड़ा नेटवर्क मौजूद है। इस के अलावा विजयवाड़ा में एक एक्सटेंशन सेंटर कायम किया गया है। इन क्षेत्रीय केन्द्रों के अंतर्गत 160 से अधिक अधिगम सहायक केंद्र (Learner Support Centre) और 20 प्रोग्राम सेंटर काम कर रहे हैं, जो शिक्षार्थियों को शैक्षिक और प्रशासनिक सहयोग उपलब्ध कराते हैं। दूरस्थ शिक्षा निदेशालय (DDE) अपने शैक्षिक और व्यवस्था से संबन्धित कार्यों में आई.सी.टी. का इस्तेमाल कर रहा है। साथ ही सभी पाठ्यक्रमों में प्रवेश सिर्फ़ ऑनलाइन तरीके से ही दिया जाता है।

दूरस्थ शिक्षा निदेशालय की वेबसाइट पर शिक्षार्थियों को स्व-अध्ययन सामग्री की सॉफ्ट कॉपियाँ भी उपलब्ध कराई जा रही हैं। इसके अतिरिक्त ऑडियो-वीडियो रिकॉर्डिंग का लिंक भी वैबसाइट पर उपलब्ध है। इसके साथ-साथ शिक्षार्थियों की सुविधा के लिए SMS और व्हाट्सएप्प ग्रुप एवं ईमेल की व्यवस्था भी की गयी है। जिसके द्वारा शिक्षार्थियों को पाठ्यक्रम के विभिन्न पहलुओं जैसे- कोर्स के रजिस्ट्रेशन, दत्तकार्य, काउंसेलिंग, परीक्षा आदि के बारे में सूचित किया जाता है। गत वर्षों से रेगुलर काउंसेलिंग के अतिरिक्त एडिशनल रेमेडियल क्लासेस(ऑनलाइन) उपलब्ध कराये जा रहे हैं। ताकि शिक्षार्थियों के मेयार को बुलंद किया जा सके।

आशा है कि देश की शैक्षणिक और आर्थिक रूप में पिछड़ी आबादी को आधुनिक शिक्षा की मुख्यधारा से जोड़ने में दूरस्थ शिक्षा निदेशालय की भी मुख्य भूमिका होगी। आने वाले दिनों में शैक्षणिक जरूरतों के अनुरूप नई शिक्षा नीति (NEP 2020) के अंतर्गत विभिन्न पाठ्यक्रमों में परिवर्तन किया जायेगा और आशा है कि यह दूरस्थ शिक्षा को अत्यधिक प्रभावी और कारगार बनाने में मददगार साबित होगा।

प्रो. मो. रज़ाउल्लाह ख़ान
निदेशक, दूरस्थ शिक्षा निदेशालय

भूमिका

'दलित साहित्य (विशेष अध्ययन) शीर्षक यह पुस्तक मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी, हैदराबाद के **एमए (हिन्दी) तृतीय सत्र** के दूरस्थ शिक्षा माध्यम के छात्रों के निमित्त **बारहवें प्रश्नपत्र** की स्व-अध्ययन सामग्री के रूप में तैयार की गई है। इसकी संपूर्ण योजना विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यूजीसी) के निर्देशों के अनुसार, नियमित माध्यम के पाठ्यक्रम के अनुरूप रखी गई है।

यह पुस्तक निर्धारित पाठ्यचर्या के अनुरूप चार खंडों में विभाजित है। हर खंड में चार-चार इकाइयाँ शामिल हैं। इस समस्त पाठ सामग्री का विकास अत्यंत वैज्ञानिक और तर्कपूर्ण ढंग से किया गया है। आरंभिक तीन इकाइयों में दलित साहित्य की अवधारणा और सैद्धांतिकी का परिचय देते हुए भारत में दलित आंदोलन के इतिहास को समझाया गया है। हिन्दी दलित कविता संबंधी खंड में दलित कविता की भाषा-शैली पर गहन चर्चा करते हुए कवि ओमप्रकाश वाल्मीकि और उनकी रचना 'बस्स! बहुत हो चुका' पर आलोचनात्मक चर्चा की गई है। इसी प्रकार आत्मकथा विषयक खंड में दलित आत्मकथा की विशेषताओं को बताते हुए रूपनारायण सोनकर के व्यक्तित्व-कृतित्व और उनकी आत्मकथा 'नागफनी' पर प्रकाश डाला गया है। इसी सिलसिले में दलित कहानी के वैशिष्ट्य को उभारते हुए जयप्रकाश कर्दम, सुशीला टाकभौरे तथा ओमप्रकाश वाल्मीकि के कहानीकार के रूप में योगदान पर अलग-अलग इकाइयों में प्रकाश डाला गया है। साथ ही, इन तीनों कहानीकारों की एक-एक प्रतिनिधि कहानी की विवेचना दलित विमर्श की कसौटी पर की गई है।

इस पाठ सामग्री के अध्ययन से अध्येताओं को हिन्दी में दलित विमर्श के स्वरूप और विकास की प्रामाणिक जानकारी मिल सकेगी। वे दलित साहित्य के महत्व को समझ सकेंगे तथा विभिन्न विधाओं के साहित्य की विवेचना दलित विमर्श की कसौटी पर करने की योग्यता हासिल कर सकेंगे।

दूरस्थ माध्यम के छात्रों की सुविधा को ध्यान में रखते हुए इस पाठ सामग्री को यथासंभव सरल, सहज, सुबोध, तर्कसंगत और प्रवाहपूर्ण बनाने का प्रयास किया गया है।

इस समस्त पाठ सामग्री को तैयार करने में हमें जिन विद्वान इकाई लेखकों, आचार्यों, ग्रंथों, ग्रंथकारों और पत्र-पत्रिकाओं से सहायता मिली है, उन सबके प्रति हम कृतज्ञ हैं।

-डॉ. आफ़ताब आलम बेग
पाठ्यक्रम समन्वयक

दलित साहित्य

(विशेष अध्ययन)

इकाई 1 : दलित साहित्य : एक परिचय

इकाई की रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 मूल पाठ : दलित साहित्य : एक परिचय

1.3.1 दलित कौन?

1.3.2 भारत में दलितों की संवैधानिक स्थिति

1.3.3 दलित साहित्य की अवधारणा

1.3.4 दलित साहित्य की उपयोगिता

1.3.5 स्वानुभूति बनाम सहानुभूति

1.4 पाठ सार

1.5 पाठ की उपलब्धियाँ

1.6 शब्द संपदा

1.7 परीक्षार्थ प्रश्न

1.8 पठनीय पुस्तकें

1.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रो! आजकल दलित साहित्य बहुचर्चित विषय हो चुका है। अलग-अलग दृष्टिकोणों से भी इस पर चर्चा हो रही है। सदियों से उपेक्षित, तिरस्कृत, दबी-कुचली गई जनता आज अपनी मूलभूत अधिकारों के लिए आवाज उठा रही है। आप जानते ही हैं कि भारतीय समाज वर्ण-व्यवस्था, जातिवाद, ऊँच-नीच के भेदभाव के कारण बँटा हुआ है। भारतीय समाज में अछूत और शूद्र कहकर निम्न जाति वालों को सदियों से दबाकर रखा गया। उनके अस्तित्व पर बड़ा प्रश्न चिह्न लग गया। लोगों को गुलाम बनाने का यह एक तरह से षड्यंत्र ही तो है। आप इस इकाई में दलित साहित्य की अवधारणा का अध्ययन करेंगे।

1.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई के अध्ययन से आप -

- दलित कौन है - यह समझ सकेंगे।
- भारत में दलितों की संवैधानिक स्थिति की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- दलित साहित्य के बारे में विभिन्न विद्वानों के विचारों से अवगत हो सकेंगे।
- दलित साहित्य की मूल दृष्टि के बारे में जान सकेंगे।
- दलित साहित्य की उपयोगिता से परिचित हो सकेंगे।

- दलित साहित्य के अंतर्गत स्वानुभूति और सहानुभूति के बारे में भी जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- दलित चेतना से परिचित हो सकेंगे।
- वर्ण व्यवस्था और जाति व्यवस्था के आधार पर बनी सामाजिक व्यवस्था के आयामों के बारे में जान सकेंगे।

1.3 मूल पाठ : दलित साहित्य : एक परिचय

प्रिय छात्रो! भारतीय समाज वर्ण-व्यवस्था के कारण वर्गों में बँटा हुआ है। धर्म के नाम पर समाज में बहुत कुछ घटित होता है। जातिवाद की जड़ें बहुत गहरी तक जम चुकी हैं। उन्हें निकालकर फेंकना आसान नहीं है। जाति-व्यवस्था की इस सीढ़ी में सबसे नीचे पायदान पर शूद्र अथवा अछूत हैं। उनमें भी सबसे दयनीय और सोचनीय स्थिति सफाई कर्मचारियों की है। डॉ. भीमराव अंबेडकर अपना आक्रोश व्यक्त करते हुए कहते हैं कि "ऐसी कोई चीज नहीं जो अछूत को पवित्र बना सके। वे अपवित्र ही पैदा होते हैं; वे जन्म भर अपवित्र बने रहते हैं; वे अपवित्र ही बने रहकर मर भी जाते हैं; और वे जिन बच्चों को जन्म देते हैं, वे बच्चे भी अपवित्रता का टीका माथे पर लगाए ही जन्म ग्रहण करते हैं। यह एक स्थायी वंशानुगत कलंक है, जो किसी तरह धुल नहीं सकता।" (सं. महीप सिंह, साहित्य और दलित चेतना, पृ.8)। दलित साहित्य को समझने से पहले भारतीय समाज व्यवस्था व दलित शब्द पर चर्चा करना अनिवार्य है। पहले यह समझने की कोशिश करेंगे कि दलित कौन हैं?

1.3.1 दलित कौन?

यह प्रश्न बार-बार उठता है कि दलित कौन है? किसे दलित कहा जाए? निम्न जाति वाले ही दलित हैं क्या? आखिर किसे माने दलित, अस्पृश्य और अपवित्र? वस्तुतः समाज में जाति व्यवस्था व्यवसाय के आधार पर बना। लेकिन धीरे-धीरे यह परंपरागत रूढ़ि के रूप में बदल गया। शूद्र सदियों से लज्जित, अपमानित, तिरस्कृत और उपेक्षित रहा। यंत्रणापूर्ण जीवन जीने के लिए अभिशप्त रहा।

यदि शब्द कोश में देखेंगे तो 'दलित' शब्द का अर्थ इस प्रकार पाया जाता है - 'संक्षिप्त शब्द सागर' में दलित शब्द के लिए कुचला हुआ, मसला हुआ, मर्दित, दबाया, रौंदा हुआ, खंडित, विनष्ट किया हुआ आदि दिए गए हैं। इसी प्रकार 'भारतीय हिंदी कोश' में दलित शब्द के आगे कुचला हुआ और पदक्रांत दिया हुआ है। इससे यह स्पष्ट होता है कि दलित वह है जिसे सदियों से दबाया गया है।

'दलित' शब्द की व्युत्पत्ति पर दृष्टि केंद्रित करने से यह स्पष्ट होता है कि इसकी व्युत्पत्ति 'दलन' शब्द से हुई। इसकी धातु है 'दल'। इस शब्द का सामान्य अर्थ है किसी वस्तु को जबरदस्ती कूटना, पीसना, दलना। आटा बनाने के लिए दाल को चक्की में दला जाता है। उसी तरह समाज के एक वर्ग को उच्च वर्ग और मध्य वर्ग नामक दो पाटों के बीच पीसा जा रहा है। 'नालंदा विशाल शब्द सागर' में दलित के लिए टूटा हुआ, रौंदा या कुचला हुआ का प्रयोग किया गया है।

भारतीय संविधान में दलित शब्द के स्थान पर अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति का प्रयोग हुआ है। उच्चतम न्यायालय ने दलित शब्द को असंवैधानिक घोषित किया। सरकार एवं उच्चतम न्यायालय द्वारा संवैधानिक दृष्टि से मान्यता न दी जाने के बावजूद समाज में अछूत, दलित आदि शब्दों का प्रयोग किया जाता है। कुछ स्वनाम धन्य लोगों की स्वार्थ-पूर्ति के लिए निम्न वर्ग के लोगों को अस्पृश्य (अछूत) माना गया और उन्हें मूलभूत मानव अधिकारों से वंचित रखा गया। जो स्पृश्य हैं, उनके लिए अनेक अवसर हैं। लेकिन अस्पृश्यों के लिए सब रास्ते बंद हो जाते हैं। कर्मठ व्यक्ति भी आगे नहीं बढ़ सकता।

बाबूराव बागुल 'दलित' शब्द के संबंध में कहते हैं कि "दलित शब्द से अनेक प्रकार का बोध होता है, जैसे - दुख-बोध, अपमान-बोध, दैन्य-दासत्व-बोध, विश्व-बंधुत्व-बोध और क्रांति-बोध।" (सं. पुन्नी सिंह, भारतीय दलित साहित्य : परिप्रेक्ष्य, पृ. 25)।

दलित शब्द की व्याख्या करते हुए शरण कुमार लिंबाले कहते हैं कि "दलित केवल हरिजन या नव बौद्ध नहीं हैं। गाँव की सीमा के बाहर रहने वाली सभी अछूत जातियाँ, आदिवासी, भूमिहीन, खेत मजदूर, श्रमिक, कष्टकारी जनता और यायावर जातियाँ सभी की सभी 'दलित' शब्द की परिभाषा में आती हैं। दलित शब्द की परिभाषा में केवल अछूत जाति का उल्लेख करने से नहीं चलेगा। इसमें आर्थिक दृष्टि से पिछड़े हुए लोगों का भी समावेश करना होगा।" (ओमप्रकाश वाल्मीकि, दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, पृ. 42)।

चंद्रकांत बांदिवडेकर का कहना है कि "दलित यानी अनुसूचित जातियाँ, बौद्धिक कष्ट उठानेवाली जनता, मजदूर, भूमिहीन गरीब किसान, खानाबदोश जातियाँ, आदिवासी आदि" (सं. कुसुम यदुलाल, दलित शिक्षा का परिदृश्य, पृ.18) हैं। लक्ष्मणशास्त्री जोशी का मत है कि "दलित मानवीय प्रगति में सबसे पीछे पड़ा हुआ और पीछे धकेला गया सामाजिक वर्ग है।" (वही, पृ.18)। श्योराज सिंह बेचैन का मत है कि दलित वह व्यक्ति है जिसे भारतीय संविधान ने अनुसूचित जाति का दर्जा दिया है। (रामशंकर खतरिया, दलित साहित्य : नई चुनौतियाँ, पृ.7)

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि जो भी व्यक्ति आर्थिक दृष्टि से पिछड़े हुए हो वह दलित है। दलित शब्द का प्रयोग oppressed, दबाया हुआ, सताया हुआ, रौंदा हुआ व वश में किया हुआ के लिए किया जाता है। यहाँ यह भी समझना जरूरी है कि आज 'दलित' शब्द का प्रयोग जिन संदर्भों में किया जा रहा है, वे सर्वथा नए हैं। लेकिन सामान्य रूप से परंपरागत वर्ण व्यवस्था में शूद्र व पंचम वर्ण के अंतर्गत आने वाले जिस समुदाय को सवर्ण अस्पृश्य मानते थे, वह दलित कहलाता है। दलित मानवीय प्रगति में सबसे पिछले धकेला गया वर्ग है। इस वर्ग को सामाजिक न्याय नहीं मिलता। शरण कुमार लिंबाले की अनुसार दलित अर्थात केवल हरिजन और नव बौद्ध ही नहीं, बल्कि गाँव की सीमा के बाहर रहने वाली तमाम अछूत जातियों, आदिवासी, भूमिहीन, खेत-मजदूर श्रमिक, दुखी जनता और बहिष्कृत जाति आदि हैं। (सं. पुन्नी सिंह, भारतीय दलित साहित्य का परिप्रेक्ष्य, पृ. 242)

दलित एक सामाजिक अवधारणा है। अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, धर्मांतरित मुस्लिम, धर्मांतरित दलित-ईसाई-सिक्ख-बौद्ध आदि को किसी न किसी आधार पर दलित कहा जा सकता है। देश की जनसंख्या का कुल लगभग 50% जनसमुदाय दलित है। इस दृष्टि से यह

समाज बहुजन समाज है। जन्म से कोई वर्ग और वर्ण नहीं होते। कर्म के कारण ही मनुष्य वस्तुतः विभिन्न वर्गों में बँटता है। कर्म के आधार पर ही वर्ण व्यवस्था का निर्माण हुआ। लेकिन धीरे-धीरे जन्म के आधार पर विभाजन होने लगा तथा यह व्यवस्था सामाजिक रूढ़ि बन गई।

भारत अपनी उपजाऊ भूमि के कारण विदेशी आक्रमणों का शिकार होने लगा। युद्ध में जीते गए प्रदेशों में से बंदी बनाए गए व्यक्तियों से गलियों की सफाई, कूड़ा करकट और मरे हुए जानवरों को उठवाना जैसे हेय समझे जाने वाले काम करवाए जाने लगे। इन कामों को हेय समझने वाली उच्च वर्गीय मानसिकता के कारण ये जातियाँ अस्पृश्य मानी जाने लगीं। गाँवों से बहिष्कृत लोग भी इसी जाति के अंतर्गत ही आने लगे। सामाजिक और राजनीतिक रूप से वर्ण व्यवस्था को बढ़ावा मिलने के कारण छुआछूत कलंक बनकर भारतीय समाज में स्थायी रूप से जम गया। डॉ. भीमराव अंबेडकर ने 1956 को नागपुर मैं बौद्ध धर्म में धर्मांतरण करके अनेक निम्न जाति वालों को बौद्ध धर्म में दीक्षित होने की प्रेरणा दी। बुद्ध ने समाज में फैली विसंगतियों और उच्च वर्गीय अहंकार युक्त मानसिकता को कुचलने के लिए तीन शिक्षाएँ दी थीं - सामाजिक समानता, वर्ण व्यवस्था का उन्मूलन और अहिंसा। इसीलिए अंबेडकर ने बौद्ध धर्म को वर्ण व्यवस्था के उन्मूलन की दिशा में एक उत्तम प्रयास माना।

बोध प्रश्न

- भारतीय समाज में पहले जाति व्यवस्था किस आधार पर बना?
- दलित शब्द की व्युत्पत्ति किस शब्द से माना जाता है? और इसका सामान्य अर्थ क्या है?
- आपकी दृष्टि में दलित कौन हैं?
- डॉ. भीमराव अंबेडकर ने बौद्ध धर्म को वर्ण व्यवस्था के उन्मूलन की दिशा में उत्तम प्रयास क्यों माना?

1.3.2 भारत में दलितों की संवैधानिक स्थिति

प्रिय छात्रो! हम सब यह भलीभाँति जानते ही हैं कि 26 जनवरी, 1950 को भारत का संविधान लागू हुआ। इसके भाग 3 में मौलिक अधिकारों के अंतर्गत अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजाति के अधिकार की भी व्यवस्था की गई है जो इस प्रकार है -

- भारतीय संविधान की धारा 14 के अंतर्गत कानून के समक्ष सभी बराबर हैं।
- संविधान की धारा 15 के अंतर्गत धर्म, जाति, लिंग, जन्म, स्थान आदि के आधार पर किसी भी सार्वजनिक स्थान में प्रवेश पर प्रतिबंध लगाया नहीं जा सकता। इसी धारा के अंतर्गत राज्य को सामाजिक व आर्थिक रूप से पिछड़े व्यक्तियों, अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति के व्यक्तियों के उत्थान के लिए विशेष कानून बनाने का अधिकार है।
- धारा 16 के अंतर्गत सार्वजनिक रोजगार पाने के समान अधिकार है।
- धारा 17 के अंतर्गत अस्पृश्यता उन्मूलन कानून के अनुसार छुआछूत का व्यवहार दंडनीय अपराध है।
- धारा 23 के अंतर्गत बंधुआ मजदूरी पर प्रतिबंध है।
- धारा 24 के अंतर्गत 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों को रोजगार में लगाने पर प्रतिबंध है।

संविधान के भाग 14 में राज्य के लिए नीति निर्देशक सिद्धांतों के तहत दलितों तथा गरीबों के पक्ष में योजनाएँ बनाने का आदेश है जो इस प्रकार हैं -

- धारा 46 के अंतर्गत राज्य को समाज के कमजोर वर्गों विशेष रूप से अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के विकास एवं उन्नति के लिए विशेष प्रयास करने का निर्देश है। राज्य पर इन वर्गों को शोषण एवं सामाजिक अन्याय के विरुद्ध संरक्षण देने का उत्तरदायित्व है।
- धारा 330-332 के अंतर्गत लोकसभा तथा राज्यसभा में सदस्य पदों के लिए अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के सदस्यों के लिए आरक्षण का प्रावधान है।
- धारा 335 के अंतर्गत अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के लिए सरकारी सेवाओं में चयन के लिए आरक्षण का प्रावधान है।
- धारा 338 के अंतर्गत अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के लिए विशेष अधिकारी की नियुक्ति का प्रावधान है। (1990 के संविधान संशोधन में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति आयोग के गठन का आदेश दिया गया।)

'अनुसूचित जाति' शब्द प्रथम बार 1935 के भारत सरकार अधिनियम में प्रयोग हुआ। भारतीय संविधान की स्थापना के बाद भारत के राष्ट्रपति ने संविधान की धारा 341 एवं 342 के अंतर्गत अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजातियों की सूची की अधिसूचना जारी की। इसके अनुसार अनुसूचित जातियाँ उन जातियों, संप्रदायों व समूहों का प्रतिनिधित्व करती हैं जो परंपरागत अस्पृश्यता से अभिशापित हैं। इसके अलावा नागरिक अधिकार सुरक्षा कानून, अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति क्रूरता निवारण कानून विशेष प्रावधान हैं जो सामाजिक सुरक्षा प्रदान करते हैं।

बोध प्रश्न

- अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति की सामाजिक सुरक्षा के लिए भारत सरकार ने क्या कदम उठाए?

1.3.3 दलित साहित्य की अवधारणा

साहित्य वह है जिसमें सबका हित हो। ऐसे में मन में यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि दलित साहित्य क्या है? क्या इसे देखने के लिए अलग चश्मा पहनना पड़ेगा? साहित्य को भी खेमों में बाँटकर देखने की क्या आवश्यकता है? फिर भी दलित, स्त्री, आदिवासी, प्रवासी, पर्यावरण, अल्पसंख्यक, वृद्ध, मीडिया आदि अनेक विषयों के आधार पर साहित्य को विभाजित करके अध्ययन किया जा रहा है।

प्रिय छात्रो! हम दलित साहित्य की अवधारणा पर दृष्टि केंद्रित करेंगे और यह समझने का प्रयास करेंगे कि दलित साहित्य क्या है और इसका उदय किन परिस्थितियों में हुआ है। हमने 'दलित' शब्द की चर्चा करते समय यह पाया है कि दलित वह है जो सदियों से दला हुआ, दबाया हुआ, उपेक्षित एवं तिरस्कृत है। इस दृष्टि से यह कहा जा सकता है कि दलित साहित्य वह है जो इस तिरस्कृत समुदाय की आवाज है। बाबूराव बागुल के अनुसार दलित साहित्य वह लेखन है "जो वर्ग-व्यवस्था के विरोध में और उसके विपरीत मूल्यों के लिए संघर्षरत मनुष्य से प्रतिबद्ध है।" (सं. पुन्नी सिंह, भारतीय दलित साहित्य : परिप्रेक्ष्य, पृ.25)। इससे यह स्पष्ट होता

है कि इस साहित्य में उपेक्षित वर्गों का आक्रोश है उस व्यवस्था के विरोध में जो उनकी मूलभूत अधिकारों को कुचलने में आगे है। शरण कुमार लिंबाले कहते हैं कि "दलितों का दुख, परेशानी, गुलामी, अधःपतन और उपहास के साथ ही दरिद्रता का कलात्मक शैली से चित्रण करने वाला साहित्य ही दलित साहित्य है।" (ओम प्रकाश वाल्मीकि, दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, पृ.18)।

दलितों को वस्तुतः दया या भीख नहीं बल्कि अधिकार चाहिए। दलित साहित्य में हम उस समाज की सच्चाई को देख सकते हैं जो सदियों से अपमानित और तिरस्कृत होने का दंश झेल रहा है। इस तबके के लोगों को कम से कम मनुष्य के रूप में भी नहीं देखा जा रहा है। हर स्तर पर इन्हें अपमान के घूंट पीने पड़ते हैं। दलित साहित्य केवल विद्रोह, नकार या निषेध से भरा हुआ साहित्य नहीं है, बल्कि वह अस्मितामूलक साहित्य है। अस्तित्व की लड़ाई का साहित्य है।

दलित साहित्य के संबंध में कँवल भारती की मान्यता है कि दलित साहित्य वह है जिसमें दलितों ने स्वयं अपनी पीड़ा को शब्दबद्ध किया है। अपने जीवन में उन्होंने जिस यातना से गुजरा उसका यथार्थ अंकन दलित साहित्य है। इस दृष्टि से यह जीवन का साहित्य है, जिजीविषा का साहित्य है। (कँवल भारती, युद्धरत आम आदमी, अंक 41-42, 1998, पृ.41)। इस दृष्टि से यह कहा जा सकता है कि स्वानुभूति का साहित्य दलित साहित्य है अर्थात दलितों द्वारा दलितों के लिए लिखा गया साहित्य।

स्वानुभूति के साहित्य को ही यदि दलित साहित्य मानें तो यह दृष्टि संकुचित हो जाएगी। ऐसे में हम उस साहित्य को किस कोटि में रखेंगे जिसमें दलितों, वंचितों और पीड़ितों के लिए गैर-दलितों लेखकों द्वारा आवाज उठाई गई। सहानुभूतिपरक साहित्य को किस श्रेणी में रखेंगे?

ओम प्रकाश वाल्मीकि दलित साहित्य को जनसाहित्य की संज्ञा देते हुए कहते हैं कि यह "लिटरेचर ऑफ एक्शन है जो मानवीय मूल्यों की भूमिका पर सामंती मानसिकता के विरुद्ध आक्रोशजनित संघर्ष है। इसी संघर्ष और विद्रोह से उपजा है दलित साहित्य।" (ओम प्रकाश वाल्मीकि, दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, पृ.15)।

सामंती व्यवस्था के कारण दलितों को अनेक तरह की यातनाओं का शिकार होना पड़ा। पीढ़ियों तक अपने अस्तित्व एवं अस्मिता की लड़ाई लड़नी पड़ी। शिक्षा से वंचित रहना पड़ा। लेकिन यह कब तब! वे भी जागृत हुए, अपने अधिकारों को जानने लगे और रूढ़ सामंती व्यवस्था के खिलाफ विद्रोह करने लगे। उनके इस जीवन संघर्ष और विद्रोह को जिस साहित्य में देखा जा सकता है उसे दलित साहित्य की संज्ञा से अभिहित किया जा सकता है। इस दृष्टि से मोहनदास नैमिशराय का कथन उल्लेखनीय है। उनका कहना है कि "दलित साहित्य पीड़ा, वेदना अथवा मुक्ति का ही साहित्य नहीं, बल्कि वह अपने अधिकारों, अस्मिता और पहचान के लिए संघर्ष करने वालों का साहित्य है।" (मोहनदास नैमिशराय, मराठी और हिंदी आत्मकथाएँ, पृ. 19)।

उपर्युक्त कथनों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि दलित साहित्य केवल स्वानुभूतिपरक अथवा सहानुभूतिपरक साहित्य ही नहीं है, वह मनुष्य को पूर्वाग्रहों से मुक्त करने वाला साहित्य है। विरोध से उपजा हुआ प्रतिरोध का साहित्य है। अमानवीय व्यवस्था के विरुद्ध बुलंद आवाज है। मुक्तिबोध ने कहा था कि अभिव्यक्ति के खतरे उठाने ही होंगे, तोड़ने ही

होंगे मठ और गढ़ सब। इसी तर्ज पर दलित साहित्य ने सामंती व्यवस्था के गढ़ तोड़ना शुरू किया। दलित अस्मिता और अस्तित्व की आवाज है दलित साहित्य। वह मानवता और विश्वबंधुता को स्थापित करने का साहित्य है। वह विद्रोह का उन्मेष है। 'स्व' की खोज है। अतः इसे परंपरागत साहित्यिक मानदंडों के आधार पर कसने का प्रयत्न नहीं किया जा सकता।

बोध प्रश्न

- दलित साहित्य किसे कहते हैं?
- दलित साहित्य को जनसाहित्य की संज्ञा किसने दी?

1.3.4 दलित साहित्य की उपयोगिता

दलित साहित्य परंपरागत साहित्य से बिल्कुल अलग है। अतः इस साहित्य को उन मानदंडों से नहीं कसा जा सकता है। नाट्यशास्त्र के प्रणेता भरतमुनि ने नाट्य (काव्य) के लक्षण निर्धारित करते हुए कहते हैं कि नाट्य धर्म, यश और आयु का साधक, हितकारक, बुद्धिवर्धक और लोकोपदेशक होता है। भामह की मान्यता है कि काव्य (साहित्य) धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष रूप के चार पुरुषार्थों के साथ-साथ समस्त कलाओं में निपुणता, आनंद तथा कीर्ति प्रदान करता है। पारंपरिक रूप से साहित्य को रसानुभूति का माध्यम माना जाता है। लेकिन दलित साहित्य को इन कसौटियों के आधार पर नहीं देख सकते हैं। दलित साहित्य चारों पुरुषार्थों को नकारता है, साथ ही भाग्यवाद, भगवान, अंधविश्वास, पुनर्जन्म, परंपरागत आस्थाओं, विकृत सामाजिक एवं धार्मिक रूढ़ियों को नकारता है। मनुष्य की पीड़ा और दुख-दर्द के लिए जिम्मेदार कारकों की पड़ताल करके उन पर प्रहार करता है। क्योंकि दलित सदियों से समाज की मुख्य धारा से कटे हुए हैं। मूलभूत अधिकारों से वंचित हैं। तिरस्कृत एवं अपमान के घूंट पीकर जीवन यापन करने के लिए मजबूर हैं।

बोध प्रश्न

- दलित साहित्य किन पर प्रहार करता है?

दलित शब्द साहित्य के साथ जुड़कर मानवीय संवेदनाओं को अभिव्यक्त करने वाला साहित्य बन जाता है। इसका धरातल व्यापक बन जाता है। यह वस्तुतः दासता से मनुष्य की मुक्ति का साहित्य है। दलित साहित्य में लालित्य नहीं मिल सकता है। यह आक्रोश से उत्पन्न साहित्य है, अतः इसमें लालित्य के स्थान पर दालित्य को देखा जा सकता है। दंश और दलन के प्रति आक्रोश और उस पीड़ा से मुक्त होने की छटपटाहट स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। दलित साहित्य में प्रेम, शृंगार, रम्य प्रकृति चित्रण के स्थान पर समाज की विसंगतियाँ, अमानुषिक व्यवहार से त्रस्त मनुष्यता का कारुणिक चित्र दिखाई देता है। दलितों में सदियों से सोई हुई चेतना को जगाना, खोई हुई आत्मसम्मान को लौटाना, दलितों को सम्मान से जीने की व्यवस्था करना, वंचित मानवाधिकारों को दिलाना दलित साहित्य का मुख्य प्रयोजन है। आक्रोश और वेदना ही वे तत्व हैं जो दलित साहित्य में आदि से लेकर अंत तक दिखाई देते हैं। यह साहित्य आनंद और सौंदर्यानुभूति के स्थान पर वेदना की मार्मिक और हृदयस्पर्शी अभिव्यक्ति करता है।

बोध प्रश्न

- दलित साहित्य में आदि से लेकर अंत तक दिखाई देने वाले तत्व कौन से हैं?

- दलित साहित्य में पीड़ा, आक्रोश और संघर्ष ही क्यों दिखाई देता है?
- दलित साहित्य का मुख्य प्रयोजन क्या है?

1.3.5 स्वानुभूति बनाम सहानुभूति

विमर्शात्मक साहित्य को लेकर काफी चर्चा-परिचर्चा होती ही रहती है। स्त्री, दलित, आदिवासी, अल्पसंख्यक साहित्य किसे माना जाए! यहाँ हम दलित साहित्य पर विशेष रूप से दृष्टि केंद्रित करेंगे। हम देख ही चुके हैं कि कुछ विद्वान सिर्फ 'स्व' के अनुभव को व्यक्त करने वाले साहित्य को दलित साहित्य कहना उचित मानते हैं। ऐसे लोगों का तर्क है कि निजी पीड़ा को जिस तरह से व्यक्ति अभिव्यक्त कर सकता है, उस तरह कोई नहीं कर सकता। थोड़ी देर के लिए हम यह मानकर चलते हैं। इसमें संदेह नहीं कि भोगे हुए यथार्थ को जब शब्दबद्ध करेंगे तो उसका प्रभाव ज्यादा रहता है। आपबीती को हम सही तरीके से अभिव्यक्त कर सकते हैं और इस तरह की अभिव्यक्ति में सच से आमना-सामना होता है। ऐसी स्थिति में 'स्व' अनुभूति को ज्यादा महत्व देना उचित भी है। तो उस साहित्य का क्या जिसे दलितेतर साहित्यकारों ने सहानुभूति के तर्ज पर दलितों के पक्ष में लिखा है? क्या उसे छोड़ दें। ऐसा नहीं हो सकता। यदि हम सिर्फ एक पक्ष को लेकर ही आगे जाएँगे तो न्याय संगत नहीं होगा। पक्षधरता ठीक नहीं है। क्योंकि जब हम खेमों में बँटकर किसी विषय को देखेंगे तो हमें दूसरा पक्ष गलत ही नजर आएगा। दूसरे पक्ष के लिए घृणावादी धारणा उत्पन्न हो सकती है। ऐसी स्थिति में मूल उद्देश्य से भटक सकते हैं।

भारतीय समाज में सामंतवादी व्यवस्था के करण निचले पायदान पर स्थित कई लोगों के साथ अन्यायपूर्ण और अमानवीय व्यवहार हुआ है। उनमें दलित भी एक हैं। इनके साथ इतना अन्याय हुआ है कि शब्दों में उसे अभिव्यक्त करना कठिन है। यह भी निर्विवाद सत्य है कि अनेक समाज सुधारकों और गैर-दलित साहित्यकारों ने इस वंचित वर्ग के लिए आवाज उठाई है। भारतीय नवजागरण के पुरोधा ने भी वर्ण व्यवस्था का खुलकर विरोध किया, लेकिन डॉ. भीमराव अंबेडकर, ज्योतिबा फूले और रामस्वामी पेरियार ने जिस दृष्टिकोण से भोगे हुए इस दर्द को जिस तरह से अभिव्यक्त किया है, किसी और ने उस तरह नहीं किया। प्रेमचंद, नागार्जुन, निराला, रांगेय राघव जैसे साहित्यकारों ने भी दलितों के पक्ष में बात रखी। उनके लेखन में दलितों के प्रति सहानुभूति दिखाई देती है। क्योंकि इन संवेदनशील रचनाकारों ने दलितों के दुख-दर्द को सुनकर और देखकर उसे अभिव्यक्त करने की कोशिश की। यह साहित्य भी महत्वपूर्ण है। सहानुभूति मूलक दलित लेखन में प्रेमचंद का स्थान सर्वोपरि है। सहानुभूति मूलक लेखन में वह छटपटाहट, वह बेचैनी, वह आक्रोश दिखाई नहीं पड़ता जो दलित साहित्यकारों की रचनाओं में दिखाई देता है क्योंकि सहे हुए दुख को अभिव्यक्त करने और दूसरे के दुख से द्रवित होकर उसे शब्दबद्ध करने में जमीन-आसमान का अंतर होता है। जब हम किसी व्यक्ति को देखते हैं तो बाहरी घाव दिखाई पड़ते हैं और हम द्रवित हो उठते हैं तथा थोड़ी देर के लिए ही सही उसके बारे सोचने लगते हैं। यह सहानुभूति है। लेकिन हम अपमानित और तिरस्कृत होने के कारण जो पीड़ा मानसिक पीड़ा उत्पन्न होती है उसे समझ नहीं सकते। उस पीड़ा की अभिव्यक्ति सिर्फ वही व्यक्ति कर सकता है जिसने अपमान के घूंट पिये हो। उस पीड़ा से उपजी साहित्य स्वानुभूति साहित्य है जिसमें पीड़ा से उत्पन्न आक्रोश और उस आक्रोश के कारण सुलगती

चिंगारी को देखा जा सकता है। स्वानुभूति मूलक दलित लेखन में ओम प्रकाश वाल्मीकि, मोहनदास नैमिशराय, सौराज सिंह बेचैन, सुशीला टाकभौरे, तुलसीराम आदि उल्लेखनीय हैं।

भारतीय साहित्य के संदर्भ में दलित साहित्य की शुरुआत मूलतः मराठी में 1960 के आसपास हुई। लेकिन इतिहास के पन्ने पलटने से यह स्पष्ट होता है कि 1914 की 'सरस्वती' पत्रिका में एक कविता प्रकाशित हुई थी जो एक अछूत (दलित) द्वारा रचित है। उसमें अछूतों (दलितों) की दशा का मार्मिक अंकन है। कमला प्रसाद के शब्दों में "भोजपुरी भाषा की यह पहली रचना है। हिंदी में यद्यपि उस समय तक दलित साहित्य जैसी कोई चीज नहीं थी और किसी डोम के द्वारा इस तरह के तेवर वाली कविता लिखने की तो कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। कई विद्वान इस कविता की विषय वस्तु और उसके तेवर को देखते हुए इसको हिंदी दलित साहित्य की पहली कविता मानते हैं।" (सं. पुन्नी सिंह, भारतीय दलित साहित्य : परिप्रेक्ष्य, पृ. 65-66)। इस कविता का शीर्षक है 'अछूत की शिकायत' और रचनाकार है हीरा डोम।

प्रिय छात्रो! साहित्य को स्वानुभूति और सहानुभूति के खेमों में बाँटकर देखना उचित नहीं है। साहित्य वह है जिसमें सबका हित निहित हो। संवेदना हो। अतः स्वानुभूति और सहानुभूति के द्वंद्व से ऊपर उठाकर साहित्य को दलितों की पीड़ा को अभिव्यक्त करने के दस्तावेज के रूप में देखना उचित होगा। दलितों द्वारा लिखे गए साहित्य ही यदि दलित साहित्य कहेंगे तो अन्य लेखकों द्वारा दलितों की पीड़ा को सशक्त रूप से अभिव्यक्त करने वाले साहित्य के साथ अन्याय होगा। अतः इस वाद के कटघरे से बाहर निकालना चाहिए। नहीं तो लक्ष्य से भटकना निश्चित है। रत्नकुमार साँभरिया दलितों द्वारा लिखे गए स्वानुभूतिपरक साहित्य को ही दलित साहित्य कहने पर आपत्ति करते हैं क्योंकि उनकी दृष्टि से समय और परिस्थिति के अनुसार अनुभूतियाँ बदलती हैं। वे इस अतिवादी और संकुचित दृष्टिकोण का खंडन करते हैं। कहने का आशय है कि सभी को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता है। अपनी को अभिव्यक्त कर सकते हैं और संवेदनशील व्यक्ति पर-पीड़ा को भी महसूस करके अभिव्यक्त कर सकता है। अतः संकुचित मानसिकता को दूर करके हमें एक व्यापक दृष्टिकोण अपनाना होगा।

बोध प्रश्न

- स्वानुभूतिपरक साहित्य किसे कहते हैं?
- सहानुभूतिपरक साहित्य किसे कहते हैं?

1.4 पाठ सार

प्रिय छात्रो! आप जान ही चुके हैं कि दलित कहे जाने वाले लोग सदियों से समाज की मुख्य धारा से दूर जीवन यापन करने के लिए अभिशप्त हैं। सामंती समाज ने इन्हें शिक्षा से वंचित रखा। परिणाम स्वरूप ये लोग बंधुआ मजदूरों की तरह पीढ़ी-दर-पीढ़ी अपमान और तिरस्कार की जिंदगी जीने के लिए विवश हुए। लेकिन शिक्षा ने उनके जीवन को बदल दिया। शिक्षित लोग अपने अधिकारों के प्रति जागरूक हुए। सदियों से अपमान के घूंट पीने वालों में निराशा ने झकझोर दिया। निराशा के कारण आक्रोश की चिंगारी सुलगी। उस आक्रोश से संघर्ष करने की शक्ति उभरी। परिणाम स्वरूप सदियों से मूक बने रहकर पीड़ा भोगने वाला वर्ग

आवाज उठाने लगा। अपनी पीड़ा को धार देने लगा। यदि यह कहें कि हजार सालों से मूक लोगों की अभिव्यक्ति जिस साहित्य में दिखाई देता है वह दलित साहित्य है तो गलत नहीं होगा। इसका अर्थ यह नहीं कि सिर्फ दलितों द्वारा लिखी गई आपबीती को ही दलित साहित्य की परिधि के अंतर्गत रखा जा सकता है। सहानुभूतिपरक दलितों के पक्ष में लिखा गया साहित्य जो उनके अधिकारों की बात करता है वह भी इसी परिधि के अंतर्गत ही आता है। अतः इससे कोई फर्क नहीं पड़ना चाहिए कि दलित लिख रहा है या गैर-दलित। दलित साहित्य में शोषण के प्रति विद्रोह, मानवतावादी मान्यताएँ होनी चाहिए।

1.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए -

1. दलित सदियों से सामंतवादी व्यवस्था के हाथों दबा हुआ, कुचला हुआ वर्ग है।
2. हजार सालों से मूक लोगों की अभिव्यक्ति जिस साहित्य में दिखाई देता है वह दलित साहित्य है। इसमें लालित्य के स्थान पर दालित्य को देखा जा सकता है। यह साहित्य आनंद और सौंदर्यानुभूति के स्थान पर वेदना की मार्मिक और हृदयस्पर्शी अभिव्यक्ति करता है।
3. दलित साहित्य में उपेक्षित वर्गों के आक्रोश और उससे उपजा हुआ संघर्ष को देखा जा सकता है। अतः इसके मूलभूत तत्व हैं आक्रोश और पीड़ा।
4. दलित साहित्य मनुष्य की पीड़ा और दुख-दर्द के लिए जिम्मेदार कारकों की पड़ताल करके उन पर प्रहार करता है। अतः यह कहा जा सकता है कि मनुष्यता को केंद्र में रखकर लिखा जाने वाला साहित्य दलित साहित्य है।
5. दलित साहित्य के अंतर्गत जहाँ स्वानुभूति साहित्य को रखा जा सकता है वहीं सहानुभूति परक साहित्य को भी रखा जा सकता है। क्योंकि सिर्फ दलितों ने ही नहीं बल्कि गैर-दलितों ने भी दलितों के लिए, उनके मूलभूत अधिकारों के लिए आवाज उठाई।
6. स्वानुभूति मूलक दलित लेखन में ओम प्रकाश वाल्मीकि, मोहनदास नैमिशराय, सौराज सिंह बेचैन, सुशीला टाकभौरे, तुलसीराम आदि उल्लेखनीय हैं तथा सहानुभूति मूलक दलित लेखन में प्रेमचंद का स्थान सर्वोपरि है।
7. दलित साहित्य में शोषण के प्रति विद्रोह तथा मानवतावादी मान्यताएँ होनी चाहिए।
8. दलितों में सदियों से सोई हुई चेतना को जगाना, खोई हुई आत्मसम्मान को लौटाना, दलितों को सम्मान से जीने की व्यवस्था करना, वंचित मानवाधिकारों को दिलाना दलित साहित्य का मुख्य प्रयोजन है।

1.6 शब्द संपदा

1. अतिवादी = किसी भी कार्य या बात में अति करने वाला
2. आक्रोश = आवेश, क्रोध युक्त उत्तेजना
3. बंधुआ = बंदी
4. लालित्य = रमणीयता
5. शोषण = अत्याचार

6. संघर्ष = आगे बढ़ने के लिए किया जाने वाला प्रयत्न
7. सहानुभूति = हमदर्दी, संवेदना
8. सामंत = अधिकार भोगने वाला
9. सामंती = सामंत से संबद्ध
10. स्वानुभूति = स्व अर्थात स्वयं की अनुभूति

1.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. दलित कौन है? इस पर प्रकाश डालिए।
2. दलित साहित्य की अवधारणा को स्पष्ट कीजिए।
3. दलित साहित्य के संदर्भ में स्वानुभूति बनाम सहानुभूति साहित्य पर प्रकाश डालिए।
4. दलित साहित्य को परंपरागत मानदंडों के आधार पर क्यों नहीं देखा जा सकता है?

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. 'दलित' शब्द की व्याख्या करते हुए यह स्पष्ट कीजिए कि वास्तव में दलित हैं?
2. भारत में दलितों की संवैधानिक स्थिति पर प्रकाश डालिए।
3. दलित साहित्य के बारे में विभिन्न विद्वानों के विचारों पर प्रकाश डालिए।
4. गैर-दलितों के द्वारा लिखा गया साहित्य के संदर्भ अपना मत प्रकट कीजिए।
5. दलित साहित्य आक्रोश और विद्रोह का साहित्य क्यों है?
6. दलित साहित्य की उपयोगिता पर प्रकाश डालिए।
7. 'दलित साहित्य जिजीविषा का साहित्य है।' इस उक्ति को निरूपित कीजिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए

1. दलित साहित्य किस समुदाय की आवाज है? ( )
   (अ) सवर्ण (आ) सामंती (इ) तिरस्कृत (ई) मनुवादी
2. दलित साहित्य को जनसाहित्य की संज्ञा किसने दी? ( )
   (अ) रत्नकुमार साँभरिया (आ) मोहनदास नैमिशराय
   (इ) बाबूराव बागुल (ई) ओम प्रकाश वाल्मीकि
3. दलित साहित्य किसके प्रति विद्रोह है? ( )
   (अ) शोषण (आ) अस्मिता (इ) अस्तित्व (ई) वेदना
4. दलित साहित्य का अमुख्य प्रयोजन क्या है? ( )
   (अ) शोषण (आ) आत्मसम्मान (इ) पीड़ा (ई) सौंदर्य

5. दलित साहित्य का मूलभूत तत्व क्या है? ( )

(अ) आक्रोश (आ) सौंदर्य (इ) आनंद (ई) संकुचित मानसिकता

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए

1. 'दलित' शब्द की व्युत्पत्ति ..... शब्द से हुई।
2. दलित साहित्य ..... को केंद्र में रखकर लिखा जाने वाला साहित्य है।
3. दलितेतर साहित्यकारों ने ..... के तर्ज पर दलितों के पक्ष में लिखा है।
4. दलित साहित्य में ..... के स्थान पर दालित्य को देखा जा सकता है।
5. सहानुभूति मूलक दलित लेखन में ..... का स्थान सर्वोपरि है।

III. सुमेल कीजिए

1. दलित साहित्य	(अ) स्वानुभूति मूलक दलित साहित्यकार
2. अछूत की शिकायत	(आ) दबाया हुआ
3. दलित	(इ) सहानुभूति मूलक साहित्यकार
4. ओम प्रकाश वाल्मीकि	(ई) हीरा डोम
5. प्रेमचंद	(उ) अस्मितामूलक साहित्य

1.8 पठनीय पुस्तकें

1. दलित का सौंदर्यशास्त्र : ओम प्रकाश वाल्मीकि
2. दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र : शरणकुमार लिंबाले
3. भारतीय दलित साहित्य - परिप्रेक्ष्य : सं. पुन्नी सिंह
4. साहित्य और दलित चेतना : सं. महीप सिंह, चंद्रकांत बांदिवडेकर

इकाई 2 : दलित आंदोलन : स्वतंत्रतापूर्व

इकाई की रूपरेखा

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 मूल पाठ : दलित आंदोलन : स्वतंत्रतापूर्व
2.3.1 दलित चेतना
2.3.2 दलित आंदोलन की पृष्ठभूमि
2.3.3 भारत में दलित आंदोलन का उदय
2.3.4 स्वतंत्रतापूर्व दलित आंदोलन की स्थिति
2.3.5 विभिन्न दलित आंदोलन
2.4 पाठ सार
2.5 पाठ की उपलब्धियाँ
2.6 शब्द संपदा
2.7 परीक्षार्थ प्रश्न
2.8 पठनीय पुस्तकें

2.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रो! दलित वह वर्ग है जो अपने मूलभूत अधिकारों से वंचित है। उत्पीड़ित है। शोषित है। सामंतवादी व्यवस्था ने इस वर्ग को बुरी तरह से कुचल दिया था। यह वर्ग बेरहमी से शोषण का शिकार हुआ। सभ्य समाज ने इस वर्ग के प्रति अमानवीय व्यवहार का प्रदर्शन किया। आखिर कब तक कोई शोषण, दबाव आदि को सह सकता है? कभी-न-कभी तो उसे आवाज उठानी ही पड़ती है। हाँ, दलित भी अपने प्रति हो रहे अन्याय और अत्याचार का विरोध करने लगे। परिणामस्वरूप अनेक आंदोलनों का सूत्रपात हुआ। आप इस इकाई में भारतीय परिप्रेक्ष्य में स्वतंत्रतापूर्व दलित आंदोलन की पृष्ठभूमि और विभिन्न दलित आंदोलनों का अध्ययन करेंगे।

2.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई के अध्ययन से आप -

- दलित चेतना को समझ सकेंगे।
- दलित आंदोलन की पृष्ठभूमि से अवगत हो सकेंगे।
- भारत में दलित आंदोलन के उदय से परिचित हो सकेंगे।
- स्वतंत्रतापूर्व दलित आंदोलन की स्थिति को जान सकेंगे।
- समाज में स्वतंत्रतापूर्व उत्पन्न विविध दलित आंदोलनों की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- दलित आंदोलनों में सम्मिलित समस्याओं से अवगत हो सकेंगे।

2.3 मूल पाठ : दलित आंदोलन : स्वतंत्रतापूर्व

दलितों की सामाजिक व राजनैतिक स्थिति में परिवर्तन लाने के लिए एक संघर्ष के रूप में दलित आंदोलन शुरू हुआ। सदियों से मूलभूत अधिकारों से वंचित समुदाय उस अन्याय और अत्याचार के खिलाफ आक्रोश से भर उठा और अपने आक्रोश को अभिव्यक्त करने के लिए आंदोलन करने लगा। वस्तुतः दलित आंदोलन दलितों के अधिकारों पर जोर देने वाला आंदोलन है।

2.3.1 दलित चेतना

तथाकथित समाज ने दलितों को शिक्षा से तथा मूलभूत मानवाधिकारों से वंचित रखा। उनका शोषण करता रहा। अपने स्वार्थ के लिए उनका उपभोग करता रहा। गरीबी और लाचारी के कारण दलित भी अत्याचार सहते रहे। आखिर कब तक झेला जा सकता है! यंत्रणापूर्ण जीवन से त्रस्त दलित का आक्रोश से भर उठना स्वाभाविक है। जैसे ही वे शिक्षित हुए, शिक्षा ने उनके भीतर आत्मविश्वास जगाया। इसी आत्मविश्वास ने उन्हें स्वावलंबी बनाया। परिणामस्वरूप वे अपनी अस्मिता के लिए आवाज उठाने लगे। दासता की जंजीरों से मुक्त होने के लिए छटपटाने लगे।

छात्रो! वस्तुतः चेतना शब्द आध्यात्मिक एवं वैज्ञानिक क्षेत्रों से जुड़ा हुआ शब्द है। अतः यहाँ हम चेतना की परिभाषा व उसके अर्थ पर ध्यान देने के बजाय सीधे दलित चेतना को दलित जागरण के परिप्रेक्ष्य में समझने की कोशिश करेंगे।

दलित जब शोषण का शिकार होता है और उन परिस्थितियों से आक्रांत होकर अपने आपको लाचार महसूस करता है तो यह दलित चेतना का पूर्व पक्ष है। जब वह इन स्थितियों से बाहर निकलने की कोशिश करता है और शोषण के प्रति विद्रोह करता है तो यह चेतना का उत्तर पक्ष है। जब कोई व्यक्ति अपनी अस्मिता के लिए संघर्ष करना शुरू कर देता है तो चेतना का उत्तर पक्ष प्रबल हो जाता है और पूर्व पक्ष धीरे-धीरे धुंधला जाता है। अतः जब दलित चेतना की बात होती है तो उत्तर पक्ष पर ही विस्तार से चर्चा करना समीचीन होगा।

छात्रो! हम सब जानते ही हैं कि अपनी संपन्नता के कारण भारत सदियों से आक्रमण झेलता आया है। अनुकूल जलवायु, उपजाऊ भूमि आदि से आकृष्ट होकर अनेक आक्रमणकारियों ने यहाँ अपना पैर जमा लिया। यहाँ पहले से ही चार वर्णों के लोग विद्यमान थे। उन वर्णों के साथ उप-जातियों के रूप में ये बसने लगे। युद्ध में जिनको बंदी बनाई जाती है, उनसे गलियाँ साफ करवाना, कूड़ा-करकट और मारे हुए जानवरों को उठवाना जैसे काम करवाने लगे। ये वस्तुतः हेय समझने वाले काम हैं। उच्च वर्ण की मानसिकता से ग्रस्त लोग इस तरह के काम करने वालों को हेय दृष्टि से देखने लगे। इतना ही नहीं गाँव से बहिष्कृत और निर्वासित लोगों को भी इस तरह के काम करने पड़ते हैं। चांडाल जाति के लोग इस श्रेणी में आते हैं। वर्तमान समय में तो मेहतर, भंगी, डोम, चमार, मल्लाह, जुलाहा आदि लोगों को इसी श्रेणी के अंतर्गत रखने लगे। लोगों के मन में इस तरह के काम करने वालों के प्रति अवहेलना का भाव जागने लगा और

उन्हें अस्पृश्य कहकर समाज से दूर रखने लगे। इस तरह की गंदी प्रथा के विरुद्ध कुछ महापुरुष आवाज उठाने लगे। उन महापुरुषों में गौतम बुद्ध अग्रणी हैं। उन्होंने अपने उपदेशों में जात-पाँत का विरोध किया तथा समानता का समर्थन किया। भले ही भारत के बाहर बौद्ध धर्म का खूब प्रचलन हुआ, भारत में तो वर्ण संकीर्णता से ग्रस्त निरंकुश शासकों ने बौद्ध धर्म के विरुद्ध शास्त्र और शस्त्र के बल अभियान छेड़ा था।

बोध प्रश्न

- दलित चेतना से क्या अभिप्राय है?
- बौद्ध धर्म के विरुद्ध अभियान क्यों छिड़ा?

2.3.2 दलित आंदोलन की पृष्ठभूमि

भारत में दलितों और स्त्रियों को समाज के हाशिये पर स्थित वर्गों के अंतर्गत वर्गीकृत किया गया है। भारतीय समाज की तथाकथित ऊँची जातियों द्वारा ये सभी जातियाँ (चमार, महार, भंगी आदि) शोषित एवं उत्पीड़ित हैं। इतिहास के पन्नों को पलटने से पता चलता है कि इसका मूल कारण 'जाति व्यवस्था' का गठन है। निम्न जाति के लोगों को मूलभूत अधिकारों से वंचित करके उन्हें 'मुख्यधारा' से दूर रखा गया। अर्थात विकास प्रक्रिया से बाहर धकेल दिया गया। ऐसे लोगों की अस्मिता, सांस्कृतिक पहचान को छिन्न-भिन्न कर दिया गया। उन्हें अपने 'मनुष्य' होने की लड़ाई लड़नी पड़ती है। किसी 'वर्ण विशेष' की इच्छाओं और आकांक्षाओं से उत्पन्न मान्यताओं का परिणाम है।

दलित समाज का संबंध उत्पादन से जोड़कर देखा जा सकता है क्योंकि प्रकृति, श्रम तथा उत्पादन का परस्पर संबंध है और दलित इन तीनों से गहरे जुड़ा हुआ है। वस्तुतः भारत में दलित आंदोलन सामाजिक-राजनैतिक परिस्थितियों में परिवर्तन लाने के लिए एक मुहिम के रूप में शुरू हुआ। सदियों तक दलित उच्च जातियों द्वारा अमानवीय व्यवहार का शिकार होता रहा। इन दबे, कुचले वर्गों के लिए ज्योतिराव फुले ने 'दलित' शब्द का प्रयोग किया।

ध्यान देने की बात है कि उच्चवर्गीय मानसिकता से ग्रस्त लोगों ने दलितों को अपनी भूमि और साधनों से वंचित कर दिया था। अपनी मूलभूत अधिकारों से वंचित दलित समाज सदियों तक यह अवहेलना झेलती रही। लेकिन कुछ लोगों ने उच्चवर्गीय मानसिकता का विरोध किया। यह विरोध धीरे-धीरे आंदोलन के रूप में परिवर्तित होने लगा। कुछ शिक्षित दलित संगठित होकर इस आंदोलन को प्रखर बनाया। अब हम आगे भारत में दलित आंदोलन के उद्भव से संबंधित कुछ बातों को जानने का प्रयास करेंगे।

बोध प्रश्न

- उच्चवर्गीय मानसिकता से ग्रस्त लोगों ने निम्नवर्ग के प्रति किस प्रकार का व्यवहार किया?
- निम्नवर्ग के लोग उच्चवर्गीय मानसिकता का विरोध क्यों करने लगे?
- दलितों की लड़ाई किस प्रकार की लड़ाई है?

2.3.3 भारत में दलित आंदोलन का उदय

प्रिय छात्रो! अब तक हम दलित चेतना और दलित आंदोलन की पृष्ठभूमि पर चर्चा कर चुके हैं। अब भारत में दलित आंदोलन कैसे और किन परिस्थितियों में शुरू हुआ इस पर थोड़ा-सा विचार करेंगे। दबे कुचले और वंचित वर्ग के उत्थान के लिए उठे आंदोलन को दलित आंदोलन से अभिहित किया जाता है. वस्तुतः दलित आंदोलन एक सामाजिक क्रांति है। इसका प्रमुख लक्ष्य है उदारता, समानता और सामाजिक न्याय की भावना पर बल देना, सदियों पुराने रूढ़िगत अंधमान्यताओं में परिवर्तन लाना तथा समाज को चेताना। सदियों से चले आ रहे सामाजिक-सांस्कृतिक बहिष्कार, आर्थिक अभाव और राजनैतिक शोषण के कारण दलित इन पूर्वाग्रहों को तोड़ने पर मजबूर हो गए। यही दलित आंदोलन के रूप में प्रबल हुआ।

भारत में दलित आंदोलन दलितों की स्थिति में सामाजिक-राजनैतिक परिवर्तन लाने के लिए, एक विरोध के रूप में शुरू हुआ। शिक्षाविदों, समाजशास्त्रियों आदि ने हाशियाकृत समुदायों का अध्ययन करना शुरू किया। दलित आंदोलन भारत के सामाजिक आंदोलनों में से एक महत्वपूर्ण आंदोलन है। विभिन्न नेताओं और संवेदनशील समाज सुधारकों ने संगठन के माध्यम से दलित समुदाय को एकत्र किया, उन्हें अपने अधिकारों के प्रति चेताया और प्रेरित किया। इसका प्रमुख उद्देश्य एक सुगठित समावेशी समाज की स्थापना था। जो दलित अपने अधिकारों के प्रति सजग हुए वे लोकतांत्रिक चुनाव प्रक्रिया में भाग लेने के लिए अग्रसर हुए। राजनैतिक क्षेत्र में आगे बढ़ने तथा अपने समाज के लिए आरक्षण बनाए रखने के लिए दलित नेताओं ने आंदोलन शुरू किया था। इसे 'दलितों का नया राजनैतिक आंदोलन' भी कहा जा सकता है। दलित आंदोलन ने भारतीय समाज की जाति संरचना का कायापलट किया और आत्मसम्मान की लड़ाई पर जोर दिया।

बोध प्रश्न

- आंदोलन से क्या अभिप्राय है?
- दलित आंदोलन का क्या अर्थ है?
- दलित आंदोलन के कारण भारतीय समाज की जातिगत संरचना का क्या हुआ?

2.3.4 स्वतंत्रतापूर्व दलित आंदोलन की स्थिति

भारतीय समाज में दलित सदियों से शोषण का शिकार होता रहा। अनेक महापुरुषों और समाज-सुधारकों ने दलित समुदाय के अत्याचार के विरुद्ध आवाज उठाई। स्वतंत्रतापूर्व समय में दलित आंदोलन राष्ट्रीय एवं प्रांतीय स्तर पर हुआ था। राष्ट्रीय स्तर पर डॉ. बाबासाहब भीमराव अंबेडकर और महात्मा गांधी ने दलितों की समस्याओं को जानकर उनके पक्ष में आवाज उठाई, उन्हें सुलझाने के लिए भिन्न-भिन्न मार्ग अपनाए। जब भारत अंग्रेजों के अधीन थी तब कुछ शिक्षित अनुसूचित जातियों के लोग अंग्रेजों से मिलकर काम करते थे। काम करते-करते उन लोगों ने तकनीकी ज्ञान प्राप्त कर लिया था। उन लोगों ने अंग्रेजों की दमन नीति को पहचाना और उसके विरुद्ध संघर्ष के लिए संगठित हुए।

वस्तुतः गौतम बुद्ध को दलित क्रांति का पहला सूत्रधार माना जाता है। उन्होंने ब्राह्मणों के वर्चस्व को चुनौती दी। कर्मकांड, पाखंड और अंधविश्वासों के प्रति आवाज उठाई। उन्होंने सीधे-सादे बौद्ध धर्म की शिक्षा दी, जिसमें मनुष्य के आचरण की शुद्धता पर बल दिया जाता है। यह भी कहना गलत नहीं होगा कि भारत में गौतम बुद्ध ने अपने क्रांतिकारी विचारों द्वारा ऊँच-नीच तथा छुआछूत के विरुद्ध आवाज उठाई। उनके धर्म में सभी के लिए स्थान था, चाहे डाकू हो या वेश्या। कहने का आशय है कि समाज से बहिष्कृत एवं वंचित लोगों के लिए आदरपूर्वक स्थान बौद्ध धर्म में प्राप्त था। गौतम बुद्ध मनुष्यों के बीच कोई भेदभाव नहीं मानते थे। जैन तीर्थंकरों ने भी मनुष्यों को समान दृष्टि से ही देखा। संतों ने भी इस तरह के भेदभाव का खंडन किया। राजराम मोहन राय, स्वामी दयानंद सरस्वती और पं. गंगाराम आदि ने दलितों, निम्नवर्ग के लोगों, शोषितों एवं पीड़ितों की आवाज बनकर समाने आए। छात्रो! आगे हम स्वातंत्र्यपूर्व काल के विभिन्न दलित आंदोलनों की चर्चा करेंगे।

बोध प्रश्न

- गौतम बुद्ध को दलित क्रांति का पहला सूत्रधार क्यों माना जाता है?

2.3.5 विभिन्न दलित आंदोलन

प्रिय छात्रो! स्वतंत्रता से पहले भारतीय समाज में घटित विभिन्न दलित आंदोलनों में प्रमुख हैं भक्ति आंदोलन, सत्यशोधन आंदोलन, महाड़ आंदोलन, आत्मसम्मान आंदोलन, जस्टिस पार्टी और गैर-ब्राह्मण आंदोलन, आंध्र का ब्राह्मणेतर उद्यमम् (गैर-ब्राह्मण आंदोलन), नायर आंदोलन, हरिजन आंदोलन, कैवर्त आंदोलन आदि प्रमुख हैं। अब इनके बारे में जानने की कोशिश करेंगे।

भक्ति आंदोलन

भक्ति आंदोलन 15 वीं शताब्दी का प्रसिद्ध आंदोलन है। इसने समाज के सभी वर्गों से समान व्यवहार किया। भक्ति आंदोलन दो रूपों में विभाजित है - निर्गुण और सगुण। सूरदास और तुलसीदास जैसे भक्ति कवि सगुण भगवान विष्णु और शिव की मूर्ति रूप में वैष्णव और शैव संप्रदायों से संबद्ध रहे। ये संप्रदाय एक तरह से वर्णाश्रम व्यवस्था से जुड़े रहे। जबकि कबीर और रैदास जैसे निर्गुण ब्रह्म के अनुयायी उस निराकार ईश्वरीय शक्ति को मानते थे जो सर्वत्र व्याप्त हैं। बीसवीं सदी के आरंभ में शहरों के दलितों के बीच यह निर्गुणवाद लोकप्रिय हुआ क्योंकि निर्गुण सभी को समान मानकर उच्च-नीच के भेदभाव पर प्रहार करता है। इसमें कोई संदेह नहीं कि भक्ति आंदोलन ने दलितों को प्रेरित किया और दलित आंदोलन की शुरूआत की नींव पड़ी। सामाजिक रूढ़ियों के प्रति विरोध करने के लिए साधन प्रदान किया।

चोखामेला (1300-1400) महाराष्ट्र के संत को भारत का दलित-महार जाति का पहला कवि कहा जाता है। भक्ति-काल के दौर में उन्होंने सामाजिक भेदभाव को सब के सामने रखा। उनकी रचनाओं से यह स्पष्ट होता है कि वे दलित समाज के लिए चिंतित थे। वे वारकरी संप्रदाय के थे। वारकरी का अर्थ है यात्री। इस संप्रदाय के लोग हर वर्ष पंढ़रपुर की यात्रा पद गाते हुए

नंगे पैर करते हैं। उन्होंने अपने पदों में अनेक सामाजिक विसंगतियों और रूढ़ियों पर प्रहार किया। भक्ति आंदोलन से निश्चित रूप से निम्न कही जाने वाली जातियों को बल मिला।

बोध प्रश्न

- भक्ति आंदोलन से किस प्रकार से निम्न कही जाने वाली जातियों को बल मिला?
- महाराष्ट्र के किस संत को भारत का दलित-महार जाति का पहला महान कवि कहा जाता है?

सत्यशोधन आंदोलन

छात्रो! ध्यान देने की बात है कि महाराष्ट्र में दलित आंदोलन सांस्कृतिक आंदोलन के रूप में सामने आया था। महाराष्ट्र में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र नामक वर्गों की असमान व्यवस्था के आधार पर समाज का विभाजन किया गया था। इससे विभिन्न जातियों के बीच पवित्रता और अपवित्रता के नियमों का सख्त पालन किया जाने लगा। इस जाति व्यवस्था में ब्राह्मण जाति सबसे ऊपर थी जिसे सभी तरह की सुविधाएँ प्राप्त थीं। परिणामस्वरूप समाज में अंधविश्वासों और अमानवीय आचारों को वैधता प्राप्त हुई। इस जाति व्यवस्था में सबसे निचले पायदान पर शूद्र या अछूत रखे गए थे। वे शिक्षा और अन्य मूलभूत अधिकारों से वंचित रहे। भक्ति-आंदोलन से निश्चित रूप से निम्न कही जाने वाली जातियों को बल मिला।

ब्रिटिश काल के दौरान उच्च वर्ग के लोगों ने कई अंग्रेजी शिक्षा को सफलतापूर्वक अपनाया तथा उपनिवेशवादी शासन में छा गए। वे महत्वपूर्ण पदों पर बने रहे। इस प्रकार के वातावरण ने निम्न जाति तथा गैर-ब्राह्मण जातियों में डर पैदा कर दिया। ईसाई मशीनरियों और बुद्धिजीवियों ने इस तरह की व्यवस्था पर खुलकर प्रहार किया। जोतिराव गोविंदराव फुले (जोतिबा फुले) ने समानता और तर्कबुद्धि के सिद्धांतों के आधार पर पारंपरिक संस्कृति और समाज में क्रांतिकारी पुनर्गठन की कोशिश की। फुले की अतिसुधारवादी परंपरा ने ही महाराष्ट्र में गैर ब्राह्मण आंदोलन को जन्म दिया। उन्होंने सत्यशोधक समाज की स्थापना करके दलित वर्ग के छात्रों के लिए शैक्षिक संस्थान तथा छात्रावास शुरू करवाकर, छात्रवृत्ति देकर उन्हें आगे बढ़ाया। इस प्रकार उन्होंने गैर-ब्राहमण आंदोलन को आगे बढ़ाया। सत्यसाधक समाज एक छोटे से समूह के रूप में शुरू हुआ और इसका उद्देश्य शूद्र एवं अस्पृश्य जाति के लोगों को विमुक्त करना था। इस आंदोलन को सत्यशोधक आंदोलन भी कहा जाता है। बाद में यह आंदोलन अपने मूल उद्देश्य से भटक गया क्योंकि फुले की एक कमी थी। वे ब्रिटिश उपनिवेशवादी शासन की नीति को समझ नहीं सके।

बोध प्रश्न

- महाराष्ट्र में दलित आंदोलन किस रूप में शुरू हुआ?
- जोतिराव गोविंदराव फुले ने किन के सिद्धांतों के आधार पर पारंपरिक संस्कृति और समाज में क्रांतिकारी पुनर्गठन की कोशिश की?
- सत्यसाधक समाज की स्थापना किसने की और इसका मुख्य उद्देश्य क्या था?

महाड़ आंदोलन

प्रिय छात्रो! आप जान ही चुके होंगे कि दलितों को सभ्य समाज से दूर जीवन यापन करना पड़ता है। वे सार्वजनिक स्थानों पर नहीं आ सकते। उनकी बस्तियाँ गाँव से दूर रहती हैं। वहाँ हवा और रोशनी भी नदारद होती है। उन्हें उस कुएँ या तालाब से पानी पीने का अधिकार नहीं रहता जिससे सवर्ण पीते हैं। सवर्णों के समक्ष वे चल भी नहीं सकते। उन्हें हेय दृष्टि से देखा जाता है। 20 मार्च 1927 को महाराष्ट्र के रायगढ़ जिले के महाड़ स्थान पर अंबेडकर के नेतृत्व में दलितों के अधिकारों का आंदोलन शुरू हुआ। दलितों को सार्वजनिक चवदार तालाब से पानी पीने और उपयोग करने का अधिकार दिलाने के लिए किया गया आंदोलन है यह। यह अस्पृश्यता के खिलाफ किया गया आंदोलन है।

बोध प्रश्न

- महाड़ आंदोलन किसके नेतृत्व में शुरू हुआ था?

आत्मसम्मान आंदोलन

तमिलनाडु के आत्मसम्मान आंदोलन एक सामाजिक आंदोलन था। इसका मुख्य उद्देश्य समकालीन हिंदू सामाजिक व्यवस्था को जाति, धर्म और ईश्वरीय आस्था के बिना एक नए समग्र एवं तर्कसंगत समाज में परिवर्तित करना था। 1925 में ई.वी. रामास्वामी नाइकर (पेरियार) ने आत्मसम्मान आंदोलन की शुरूआत की। इस आंदोलन ने उच्च वर्ग के आधिपत्य को तोड़ने का काम किया। समाज में पिछड़े वर्गों और महिलाओं के लिए समान अधिकारों तथा तेलुगु, तमिल, कन्नड और मलयालम आदि द्रविड़ भाषाओं के पुनरुत्थान पर इसने ज़ोर दिया। आंदोलन के माध्यम से अस्पृश्यता को पूरी तरह से समाप्त करने और भाईचारे की भावना के आधार पर एकजुट समाज की स्थापना करने पर बल दिया गया। पेरियार द्वारा रूढ़िवाद के खिलाफ किए गए प्रचार के कारण उच्च वर्ग की प्रभुसत्ता एवं एकाधिकार का प्रभाव धीरे-धीरे खत्म होता गया। सामाजिक अन्याय के खिलाफ लड़ने के लिये यह आंदोलन आत्म-सम्मान की भावना से परिपूर्ण था। इसने अंतर-जातीय और अंतर-धार्मिक विवाह को बढ़ावा देने का काम किया। इतना ही नहीं ब्राह्मण पुजारियों के बिना विवाहों के कानूनीकरण को बढ़ावा दिया। स्वतंत्रता के बाद तमिलनाडु में एक कानून पारित किया गया तथा यह ब्राह्मण पुजारी के बिना हिंदू विवाह को वैध बनाने वाला पहला राज्य बन गया। यह आंदोलन स्त्रियों और निम्न जाति के लोगों को मुक्त करने एवं उन्हें समान अधिकार दिलाने में विफल रहा। यह गरीब और दबे हुए वर्गों की आर्थिक स्थिति को मजबूत करने में भी विफल रहा। यह आंदोलन तमिलनाडु तक ही सीमित था इसलिए इसका प्रभाव भी बहुत ही सीमित रहा।

बोध प्रश्न

- तमिलनाडु में आत्मसम्मान आंदोलन की शुरूआत किसने की?
- आत्मसम्मान आंदोलन का मुख्य उद्देश्य क्या था?
- आत्मसम्मान आंदोलन क्यों विफल रहा?

जस्टिस पार्टी और गैर-ब्राह्मण आंदोलन

मद्रास में 1916 में गैर-ब्राह्मणों ने दक्षिण भारतीय उदारतावादी संघ का गठन किया। इसे जस्टिस पार्टी के नाम से जाना जाता है। इसका दावा था कि मद्रास प्रेसिडेंसी के मुसलमानों, ईसाइयों और अछूतों सहित सभी गैर-ब्राह्मणों के हितों के लिए कार्य करना। टी. एन. नायर, पी. तयगराज चेतती, सी. नटेश मुदलियार आदि इस संगठन के संस्थापक थे। जस्टिस पार्टी गैर-ब्राह्मणों के राजनैतिक तथा शैक्षिक प्रभाव के लिए संघर्ष करने हेतु अस्तित्व में आई। ब्रिटिश शासन ने इस जस्टिस पार्टी को ब्राह्मणों की बढ़ती शक्ति को काटने के लिए प्रयोग किया। 1920 में इस संगठन के भीतर कलह पैदा हुआ था। 1944 में आत्मसम्मान आंदोलन का जस्टिस पार्टी आंदोलन में विलय कर द्रविड कलगम का गठन किया गया।

बोध प्रश्न

- जस्टिस पार्टी क्यों अस्तित्व में आई?
- जस्टिस पार्टी के संस्थापक का नाम बताइए।

ब्राह्मणेतर उद्यमम् (गैर-ब्राह्मण आंदोलन)

आंध्र प्रदेश में गैर-ब्राह्मणों ने 'ब्राह्मणेतर उद्यमम्' (गैर-ब्राह्मण आंदोलन) शुरू किया था। यह आंदोलन मूल रूप से कम्मा, रेड्डी, बलिजा और वेलमा जैसी गैर-ब्राह्मण जातियों के द्वारा चलाया गया। यह एक तरह से सामाजिक उत्थान का आंदोलन है। आंध्र प्रदेश में गैर-ब्राह्मण जमींदारों और उच्च वर्ग के धनवानों को शूद्रों के साथ मिलाकर उनका शोषण करने लगे। कहा जाता है कि आंध्र प्रदेश के कृष्णा जिले में कट्टर ब्राह्मण समुदाय के लोगों ने कम्मा, रेड्डी, बलिजा और वेलमा जाति के विद्यार्थियों को वेद अध्ययन से वंचित रखा। उन्होंने एक पंजीकृत नोटिस दायर की कि इन गैर-ब्राह्मण जातियों के लोगों को संस्कृत पढ़ने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए। प्रसिद्ध साहित्यकार त्रिपुरनेनी रामस्वमी चौधरी (1887-1943) ने अपने साहित्य में अपने निजी अनुभवों का उल्लेख किया। एक शिक्षक ने उन्हें यह कहकर धिक्कारा कि वह शूद्र है और उन्हें श्लोक पढ़ने और लिखने की अनुमति नहीं है। ऐसा करना पाप है क्योंकि संस्कृत ईश्वर की भाषा है। यही वह सामाजिक और सांस्कृतिक वातावरण था जिसने आत्मसम्मान आंदोलन को मजबूत बनाया। त्रिपुरनेनी रांसवामी चौधरी ने आंध्र प्रदेश के आत्मसम्मान आंदोलन के प्रचार-प्रसार में आजीवन जुटे रहे। उन्होंने 'ब्रह्मणवाद' पर प्रहार किया था, न कि ब्राह्मणों पर। वे स्त्रियों और शूद्रों को शास्त्रों की दासता से मुक्ति दिलाने के पक्षधर थे। इस आत्मसम्मान आंदोलन ने अंतरजातीय विवाह, अंतरजातीय विधवा विवाह और आधुनिक शिक्षा के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

बोध प्रश्न

- आंध्र प्रदेश में गैर-ब्राह्मण आत्मसम्मान आंदोलन क्यों शुरू हुआ था?
- त्रिपुरनेनी रांसवामी चौधरी ने किस पर प्रहार किया?

नायर आंदोलन

त्रावणकोर राज्य में सी. वी. रमन पिल्लै, के. रामकृष्ण पिल्लै और एम. पद्मनाभ पिल्लै के नेतृत्व में 1861 में नंबूदरी ब्राह्मणों और गैर-मलयाली ब्राह्मणों (तमिल और मराठा) के वर्चस्व के खिलाफ नायर आंदोलन शुरू हुआ था। यह भी एक ब्राह्मणवाद विरोधी आंदोलन ही था। 1891 में रमन पिल्लै ने सरकारी नौकरियों में ब्राह्मण वर्चस्व के खिलाफ मलयाली स्मारक का निर्माण किया था। 1941 में नायर सर्विस सोसाइटी की स्थापना पद्मनाभ पिल्लै ने की। यह विशेष रूप से नायरों की सामाजिक-राजनैतिक विकास के लिए कार्य करती थी।

बोध प्रश्न

- नायर आंदोलन कहाँ और क्यों शुरू हुआ था?
- नायर सर्विस सोसाइटी की स्थापना किसने की?

हरिजन आंदोलन

महात्मा गांधी के नेतृत्व में हरिजन आंदोलन की शुरूआत हुई। गांधी जी यह मानते थे कि मनुष्य की मिथ्या अहंकार ने अस्पृश्यता को जन्म दिया। 1933 में अस्पृश्यता को जड़ से मिटाने ले लिए हरिजन आंदोलन शुरू किया। उन्होंने निम्न जाति को लोगों को हरिजन (भगवान की जनता) कहकर संबोधित किया। उन्होंने 'हरिजन' नामक साप्ताहिक पत्रिका का भी प्रकाशन किया। 1932 में उन्होंने 'अखिल भारतीय छुआछूत विरोधी लीग' की स्थापना की।

बोध प्रश्न

- महात्मा गांधी ने हरिजन आंदोलन किस उद्देश्य से शुरू किया था?

कैवर्त आंदोलन

कैवर्त आंदोलन को वरेंद्र विद्रोह के रूप में भी जाना जाता है। यह उत्तरी बंगाल के सामंती राजा कैवर्त सरदार दिव्या (दिब्याक) के नेतृत्व में राजा महिपाल द्वितीय के खिलाफ किया गया आंदोलन है। इस विद्रोह से कैवर्त वरेंद्र को पकड़ने में सफल हुए। यह विद्रोह संभवतः भारतीय इतिहास का पहला किसान विद्रोह था। यह बंगाल के प्रारंभिक इतिहास की एक महत्वपूर्ण घटना थी।

कर्नाटक में दलित आंदोलन

कर्नाटक में 1901 की जनगणना में प्रधान जाति वोक्कालिंग जाति का उपविभाजन हुआ था। इस वर्गीकरण से गैर-ब्राह्मण आंदोलनकर्ताओं को सामूहिक रूप से संगठित होने का आधार मिला। 1905 में लिंगायत जाति के लोगों ने मैसूर लिंगायत शिक्षा निधि संघ की स्थापना की। 1906 में वोक्कालिंग जाति ने कोक्कालिगार संघ बनाया। यह भी एक गैर-बाहमण आंदोलन था। 1916 में धारवाड़ में कर्नाटक लिबरल एजुकेशन सोसाइटी की स्थापना हुई। इन संस्थाओं के माध्यम से शिक्षा का प्रचार-प्रसार हुआ। शिक्षा के साथ-साथ लोगों में जातीय भावना भी

पनपी। कर्नाटक में गैर-ब्राहमण आंदोलन का जन्म लगभग 1918 में हुआ। वोक्कालिंग और लिंगायत जाति के लोगों ने इस आंदोलन को आगे बढ़ाया। मैसूर राज्य में कांग्रेस आंदोलन की शरूआत के साथ-साथ गैर-ब्राह्मण आंदोलन धीरे-धीरे राष्ट्रीय मुक्ति संघर्ष की ओर बढ़ने लगा। 1930 और 40 के दशकों के दौरान यह आंदोलन अपनी शक्ति खोने लगा। प्रत्येक जाति वर्ग ने अपने लिए प्रतिनिधि सभा और सरकारी सेवाओं में अलग से प्रतिनिधित्व की माँग करना शुरू कर दिया। इस तरह, 1940 के दशक से गैर-ब्राह्मण आंदोलन पिछड़ी जातियों के आंदोलन में बदल गया। विशेष रूप से 1950 के बाद वोक्कालिंग और लिंगायत आपस में लड़ने लगे।

तुलनात्मक अध्ययन

प्रिय छात्रो! अब तक आपने महाराष्ट्र, तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश, केरल और कर्नाटक के राज्यों में घटित विविध गैर-ब्राह्मण आंदोलनों का अध्ययन कर चुके हैं। अब तक तो आपको यह स्पष्ट हो चुका होगा कि जाति व्यवस्था के कारण असमानताएँ उत्पन्न होने लगीं। निम्न जाति की सामाजिक-सांस्कृतिक अधीनता भी इसी के कारण पनपा। सभी आंदोलनों में एक बात समान है और वह गैर-ब्राह्मण जातियों का दमन। हर क्षेत्र में सवर्ण का आधिपत्य।

भक्ति आंदोलन ने संपूर्ण सामाजिक परिदृश्य को बदल दिया था। दलितों के बीच यह निर्गुणवाद लोकप्रिय हुआ क्योंकि निर्गुण सभी को समान मानकर उच्च-नीच के भेदभाव पर प्रहार करता है। भक्ति आंदोलन ने दलितों को प्रेरित किया और सामाजिक रूढ़ियों के प्रति विरोध करने के लिए साधन प्रदान किया। महाराष्ट्र के संत कवि चोखामेला को दलित-महार जाति का पहला कवि कहा जाता है। उन्होंने अपने पदों में अनेक सामाजिक विसंगतियों और रूढ़ियों पर प्रहार किया।

महाराष्ट्र में जोतिबा फुले ने सामाजिक असमानताओं का गहन विश्लेषण किया। उन्होंने सत्यशोधक समाज की स्थापना करके दलित वर्ग के छात्रों के लिए शैक्षिक संस्थान तथा छात्रावास शुरू करवाकर, छात्रवृत्ति देकर उन्हें आगे बढ़ाया। फुले की एक कमी थी। ब्रिटिश उपनिवेशवादी शासन की नीति को समझ नहीं सके। महाराष्ट्र के रायगढ़ जिले के महाड़ स्थान पर अंबेडकर के नेतृत्व में दलितों के अधिकारों का आंदोलन शुरू हुआ। यह भी अस्पृश्यता के खिलाफ किया गया आंदोलन है।

तमिलनाडु में ई.वी. रामास्वामी नाइकर (पेरियार) के नेतृत्व में आत्मसम्मान आंदोलन शुरू हुआ। इस आंदोलन ने उच्च वर्ग के आधिपत्य को तोड़ने का काम किया। उनके नेतृत्व यह आत्मसम्मान आंदोलन जाति पद्धति को अस्वीकार कर विवाह पद्धति को सुधार कर सबको संगठित करने का प्रयास किया। यह आंदोलन तमिलनाडु तक सीमित होने के करण विफल रहा। तमिलनाडु में जस्टिस पार्टी गैर-ब्राह्मणों के राजनैतिक तथा शैक्षिक प्रभाव के लिए संघर्ष करने हेतु अस्तित्व में आई। आंध्र प्रदेश के गैर-ब्राह्मण आंदोलन भी शिक्षा के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

केरल में सरकारी नौकरियों में आरक्षण के लिए नायर के नेतृत्व में आंदोलन शुरू हुआ। बंगाल का कैवर्त आंदोलन भारतीय इतिहास का पहला किसान विद्रोह था। कर्नाटक में लिंगायत और वोक्कालिंग के बीच आंदोलन हुआ। इस आंदोलन में धर्म निरपेक्ष माँगों को पेश करने के लिए भी जाति का सहारा लिया जाने लगा। यह नकारात्मक प्रवृत्ति थी। यह प्रवृत्ति स्वतंत्रता के बाद और भी प्रबल हो गई।

छात्रो! इन सभी आंदोलनों का तुलनात्मक अध्ययन करने से निम्नलिखित बातें स्पष्ट होती हैं-

1. ब्राह्मण्यवादी के प्रभुत्व के खिलाफ किया गया आंदोलन।
2. निम्न जातियों की मुक्ति के लिए, उनके उत्थान के लिए किया गया आंदोलन।
3. निम्न जातियों के आरक्षण के लिए किया गया आंदोलन।
4. जाति व्यवस्था और पक्षपातपूर्ण दृष्टिकोण के विरुद्ध आंदोलन।
5. अस्पृश्यता के खिलाफ किया गया आंदोलन।
6. निम्न और पिछड़े वर्गों की सामाजिक स्थिति को ऊपर उठाने के लिए किया गया आंदोलन था।

2.4 पाठ सार

भारत में दलित समुदाय के उत्थान के लिए संघर्ष स्वतंत्रता से पूर्व ही शुरू हो चुका था। संसाधनों एवं मूलभूत अधिकारों से वंचित समुदाय शिक्षा के कारण जागृत होने लगे। परिणामस्वरूप वे अपने प्रति हो रहे अन्याय को देखकर आक्रोश से भर उठे। उसी आक्रोश के कारण संघर्ष शुरू हुआ। समाज में अपनी दयनीय स्थिति को सुधारने के लिए एकजुट होकर निम्न जाति के लोग काम करने लगे। अनेक समाज सुधारकों एवं महापुरुषों ने दलित समाज के अत्याचार के विरोध में आवाज उठाई। जिस समय भारत पराधीन था उस समय अंग्रेजों के साथ मिलकर कुछ अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लोग काम करते थे। उन्होंने शिक्षा और तकनीक के क्षेत्रों में कुछ ज्ञान हासिल किया और परिणामस्वरूप अपने अधिकारों के लिए लड़ने लगे। गौतम बुद्ध को दलित क्रांति का सबसे पहला सूत्रधार माना जाता है। उन्होंने कर्मकांड, पाखंड आदि पर प्रहार किया। वे मनुष्य और मनुष्य के बीच किसी भी तरह का भेदभाव नहीं देखते। कबीरदास, रैदास, चोखामेला आदि संतों के साथ-साथ महात्मा गांधी, ज्योतिबा फुले, अंबेडकर, पेरियार, त्रिपुरनेनी रामस्वमी चौधरी, सी. वी. रमन पिल्लै, के. रामकृष्ण पिल्लै और एम. पद्मनाभ पिल्लै आदि समाज सुधारकों ने भी इस तरह के भेदभाव का विरोध किया। सभी लोगों ने दलितों को नागरिक समानता के अधिकार दिलाने के लिए आंदोलन किए।

2.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन के बाद निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए -

1. भारतीय समाज वर्णों के आधार पर विभाजित था।

2. पारंपरिक सामाजिक व्यवस्था में निम्न जाति के लोगों और स्त्रियों के दमन के कारण अनेक आंदोलनों का सूत्रपात हुआ।
3. राजनैतिक षड्यंत्रों के कारण सुधारवादी वातावरण कम होता गया तथा आत्मसम्मान आंदोलनों का जन्म हुआ।
4. गैर-ब्राह्मण आंदोलन कभी भी स्वतंत्र रूप से विकसित नहीं हो पाया।
5. निम्न जातियों की मुक्ति संघर्ष विभिन्न क्षेत्रों में भिन्न था। केरल में ब्राह्मणवादी के प्रभुत्व के खिलाफ आंदोलन का जन्म हुआ तो महाराष्ट्र में निम्न जातियों और विधवाओं के मुक्ति के लिए। तमिलनाडु का आंदोलन वहीं तक सीमित था तो आंध्र प्रदेश का आत्मसम्मान आंदोलन ने अंतरजातीय विवाह, अंतरजातीय विधवा विवाह और आधुनिक शिक्षा के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

2.6 शब्द संपदा

1. अमानवीय = पशुता
2. अवसादग्रस्त = अवसाद पीड़ित, विषाद
3. अस्पृश्य = जिसका स्पर्श न हो, अछूत
4. अस्मिता = अपनी सत्ता की पहचान
5. उत्पीड़न = अत्याचार
6. उपनिवेश = अन्य स्थान से ये ही लोगों की बस्ती
7. दासता = पराधीनता
8. निरंकुश = अनियंत्रित
9. निर्वासित = देश या किसी भू-भाग से निकाला गया
10. प्रभुता = प्रधानता
11. मनावाधिकार = मानव जाति का अधिकार
12. विद्रोह = क्रांति
13. वैधता = विधि के अनुसार मान्य होने की अवस्था
14. संघर्ष = आगे बढ़ने के लिए करने वाला प्रयास
15. सामंतवाद = शासन प्रणाली जिसके अंतर्गत जमींदारों को कृषि भूमि एवं अन्य अधिकार प्राप्त होते हैं और वे इसके बदले में राज्य को सैन्य बल देते हैं।

2.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग <u>500</u> शब्दों में दीजिए।

1. स्वातंत्र्यपूर्व दलित आंदोलन की पृष्ठभूमि पर प्रकाश डालिए।

2. विभिन्न दलित आंदोलनों का तुलनात्मक विश्लेषण करके उनके बीच निहित अंतर को स्पष्ट कीजिए।

3. 'भारतीय समाज वर्णों के आधार पर विभाजित होने के कारण निम्न जाति के लोग दमन नीति के शिकार हुए।' इस पर प्रकाश डालिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग <u>200</u> शब्दों में दीजिए।

1. दलित चेतना से क्या अभिप्राय है?
2. भारत में दलित आंदोलन का उदय किन परिस्थितियों में हुआ?
3. तमिलनाडु और आंध्र प्रदेश के गैर-ब्राह्मण आंदोलनों का तुलनात्मक विश्लेषण कीजिए।
4. 'भक्ति आंदोलन से निश्चित रूप से निम्न कही जाने वाली जातियों को बल मिला।' इस उक्ति का निरूपण कीजिए।
5. सत्यशोधक एवं महाड़ आंदोलनों पर प्रकाश डालिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए

2. कैवर्त आंदोलन कहाँ संपन्न हुआ ? ( )
   (अ) आंध्र (आ) बंगाल (इ) तमिलनाडु (ई) केरल

3. महात्मा गांधी ने निम्न जाति के लोगों को ..... कहकर संबोधित किया। ( )
   (अ) दलित (आ) अनुसूचितजाति (इ) अछूत (ई) हरिजन

4. जस्टिस पार्टी की स्थापना कहाँ हुई? ( )
   (अ) धारवाड़ (आ) हैदराबाद (इ) मद्रास (ई) केरल

5. चोखामेला किस संप्रदाय के संत थे? ( )
   (अ) सगुण (आ) निर्गुण (इ) बौद्ध (ई) वारकरी

6. दलित क्रांति का पहला सूत्रधार कौन हैं? ( )
   (अ) चोखामेला (आ) गौतम बुद्ध (इ) कबीर (ई) दयानंद सरस्वती

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए

1. महाराष्ट्र के संत ..... को भारत का दलित-महार जाति का पहला महान कवि कहा जाता है।
2. दलित आंदोलन ने ..... की लड़ाई पर जोर दिया।
3. ..... ने दलित शब्द का प्रयोग किया।

4. ..... भारतीय इतिहास का पहला किसान विद्रोह था।

III. सुमेल कीजिए

1. सत्यशोधक आंदोलन	(अ) पेरियार
2. महाड़ आंदोलन	(आ) जोतिबा फुले
3. आत्मसम्मान आंदोलन	(इ) रामस्वामी चौधरी
4. ब्राह्मणेतर उद्यमम्	(ई) पद्मनाभ पिल्लै
5. नायर आंदोलन	(उ) पेरियार

2.8 पठनीय पुस्तकें

1. आधुनिकता के आईने में दलित : सं. अभय कुमार दुबे
2. दलित संघर्ष : पवित्र कुमार शर्मा

इकाई 3 : दलित आंदोलन : स्वातंत्र्योत्तर

इकाई की रूपरेखा

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 मूल पाठ : दलित आंदोलन : स्वातंत्र्योत्तर

3.3.1 दलित आंदोलन के मुख्य कारण

3.3.2 भारतीय दलित आंदोलन की गतिशीलता

3.3.3 दलित साहित्यिक आंदोलन

3.3.4 स्वतंत्रता के बाद दलित आंदोलन

3.4 पाठ सार

3.5 पाठ की उपलब्धियाँ

3.6 शब्द संपदा

3.7 परीक्षार्थ प्रश्न

3.8 पठनीय पुस्तकें

3.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रो! अब तक आपने दलित साहित्य की अवधारणा तथा स्वतंत्रता पूर्व दलित आंदोलन की स्थितियों का अध्ययन कर चुके हैं। आप यह समझ भी चुके होंगे कि दलितों ने अपनी अस्मिता एवं अस्तित्व के लिए संघर्ष किया। वस्तुतः राजनैतिक षड्यंत्रों के कारण सुधारवादी वातावरण कम होता गया और आत्मसम्मान आंदोलनों का जन्म हुआ। इस इकाई में आप भारतीय परिप्रेक्ष्य में स्वातंत्र्योत्तर दलित आंदोलन की पृष्ठभूमि और विभिन्न दलित आंदोलनों का अध्ययन करेंगे।

3.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई के अध्ययन से आप -

- दलित आंदोलन के प्रमुख कारणों से परिचित हो सकेंगे।
- भारतीय दलित आंदोलन की गतिशीलता को समझ सकेंगे।
- दलित आंदोलन में महात्मा गांधी और अंबेडकर के योगदान को जान सकेंगे।
- दलित साहित्यिक आंदोलन की पृष्ठभूमि से परिचित हो सकेंगे।
- स्वतंत्रता के बाद विकसित विभिन्न दलित आंदोलनों से अवगत हो सकेंगे।

3.3 मूल पाठ : दलित आंदोलन : स्वातंत्र्योत्तर

दलित आंदोलन के कारण भारतीय समाज में बहुत बड़ा परिवर्तन हुआ। विभिन्न जातियों के बीच समानता, स्वतंत्रता और समता के लोकतांत्रिक आदर्शों को बल प्राप्त हुआ। दलित आंदोलनों ने दलितों की अस्मिता, राजनैतिक व सामाजिक क्षेत्रों में उनके एक निजी पहचान, शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार तथा सरकारी नौकरियों में आरक्षण से संबंधित अनेक मुद्दों को उठाया। सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, धार्मिक, सांस्कृतिक परिवर्तन लाने के लिए दलित आंदोलन एक शक्तिशाली अस्त्र बन गया। आइए, अब हम दलित आंदोलन के प्रमुख कारणों की चर्चा करेंगे।

3.3.1 दलित आंदोलन के मुख्य कारण

छात्रो! इस तथ्य से मुँह नहीं मोड़ा जा सकता है कि उच्चवर्गीय संकीर्ण मानसिकता से त्रस्त लोग अपने अधिकारों के लिए आवाज उठाने लगे। निम्नवर्ग के लोगों को अछूत कहकर उनके लिए कुछ ऐसी 'विशेष जिम्मेदारियों' को आरक्षित किया गया कि उन्हें निभाते-निभाते यह वर्ग यह भी भूल गया कि वह भी मनुष्य है। वह एक तरह से सामाजिक मल को ढोने के लिए विवश हो गया था। वह अपने आरक्षित व्यवसाय के कारण सामान्य मानवाधिकारों से भी वंचित हो गया। आर्थिक रूप से यह वर्ग पिछड़ा हुआ वर्ग है। अपनी भूख मिटाने के लिए उसे जी-तोड़ मेहनत करना ही पड़ता है। उसके पास न ही साधन है, और न ही संसाधन। उसके पास है तो सिर्फ और सिर्फ जिजीविषा और मेहनत। उच्च वर्ग उसकी इसी इच्छा और मेहनत का फायदा उठाना जानता है। उच्च वर्ग के पास भरपूर साधन है, और संसाधन भी। वह उनकी सहायता से निम्न वर्ग के श्रम को खरीद रहा है। निम्न वर्ग के पास खोने के लिए कुछ नहीं है, बजाय उनके श्रम और स्वतंत्रता के। असमानता और शोषण के आधार पर श्रम-विभाजन हुआ। लोग मजदूरी करने के लिए विवश हो गए। जाति व्यवस्था ने दलित जीवन को दयनीय स्थिति में बदल दिया, जहाँ व्यवसाय जातियों में बदल गया। सदियों से, दलितों को मुख्यधारा के समाज से बाहर रखा गया था। उन्हें केवल छोटे-मोटे व्यवसायों को आगे बढ़ाने की अनुमति दी गई थी। सफाई-कर्मचारी बनना उनकी मजबूरी बन गई। ये लोग गाँवों में रहते थे, इसलिए जनजातियों की तरह भौगोलिक अलगाव का लाभ उठा नहीं सकते थे। उच्च वर्ग की मानसिकता के कारण उन्हें एक तरफ धक्का दिया गया। गाँवों के बाहरी क्षेत्रों में रहने के लिए वे विवश हो गए। गाँव की मुख्य भूमि में उन्हें प्रवेश करने से रोक दिया गया था।

यह भी निर्विवाद सत्य है कि धर्म के नाम पर उन पर कई अत्याचार किए गए। इसके अलावा, देवदासी-व्यवस्था प्रचलन में थी। यदि कोई दलित गलती से मंत्रोच्चारण कर लेता तो उनके जीभ काट दिया जाता था और कानों में पिघला हुआ सीसा डाला जाता था। निम्नवर्गीय लोगों पर आधिपत्य बनाए रखने के लिए उन्हें शिक्षा से दूर रखा गया था। उच्चवर्गीय लोगों ने दहशत फैलाकर अपना एकाधिकार बनाए रखा। दलितों के प्रति अमानवीय व्यवहार किया गया। आखिर कब तक सहा जा सकता था! इसी अमानवीय व्यवहार के कारण दलितों ने शोषण के विरुद्ध आवाज उठाई। स्वतंत्रतापूर्व ही दलित आंदोलन की शुरूआत हो चुकी थी, लेकिन

स्वतंत्रता के बाद उसने गति पकड़ी। यह आंदोलन वस्तुतः सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और राजनैतिक समानता की माँग करने वाला आंदोलन है।

बोध प्रश्न

- दलित आंदोलन के कुछ प्रमुख कारणों का उल्लेख कीजिए।

(अ) पाश्चात्य पृष्ठभूमि

अस्पृश्यता सिर्फ भारत में ही नहीं बल्कि संपूर्ण विश्व में पाया जाता है। पश्चिम की पृष्ठभूमि में यह आंदोलन अश्वेत आंदोलन के रूप में सामने आया। गोरे और कालों के लिए अलग-अलग नियम होते थे। जहाँ गोरों को महत्व दिया जाता था, वहीं काले लोगों को हीन दृष्टि से देखा जाता है। अश्वेत आंदोलन वस्तुतः एक राजनैतिक और सामाजिक आंदोलन है। लोगों के शारीरिक रंग के आधार पर लोगों का विभाजन किया जाता था। अश्वेत लोगों को मताधिकार से भी वंचित रखा गया। रंगभेद प्रणाली अश्वेत लोगों के लिए एक दमनकारी नीति थी। ये लोग श्वेत लोगों की बस्तियों में या उनके क्षेत्रों में काम नहीं कर सकते। परमिट होने पर ही ये लोग काम के लिए जा सकते हैं।

अमेरिका में अश्वेत लोगों की अवमानना चरम पर पहुँची। उनको दासता से मुक्ति दिलाने के लिए सबसे पहले अब्राहम लिंकन ने आवाज उठाई। 1896 में उन्होंने समानता के सिद्धांत पर आधारित तथा एक अलग प्रतिष्ठा के लिए नीग्रो लोगों के लिए एक अधिनियम पारित किया था। यह उनकी दासता की समाप्ति के लिए था। अश्वेतों का पहला नेता बूकर वाशिंगटन ने अश्वेतों की सामाजिक व्यवस्था में प्रगति करने की सलाह दी। एक अन्य नेता विलियम डुबोइस ने नीग्रो लोगों के दास समुदाय में आत्मसम्मान तथा आत्मविश्वास पैदा करने का काम किया। परिणामस्वरूप 1905 में नियाग्रा आंदोलन सामने आया। यह नागरिक अधिकारों का आंदोलन है। संयुक्त राज्य अमेरिका में अश्वेतों पर लगातार हो रहे उत्पीड़न की प्रतिक्रिया के रूप में 20वीं सदी की शुरुआत में यह आंदोलन अस्तित्व में आया। अमेरिकी गृहयुद्ध के दौरान मुक्ति के बाद हुई प्रगति के बावजूद अधिकांश अश्वेतों को वोट देने का अधिकार प्राप्त नहीं हुआ। इतना ही नहीं कई अन्य नागरिक अधिकारों का भी अभाव था। कई लोगों को नस्लीय हिंसा का भी सामना करना पड़ा। जॉर्जिया में 1885 और 1906 के बीच 260 अश्वेतों को पीट-पीट कर मार डाला गया था। पाश्चात्य देशों में नस्ल भेद चरम सीमा पर थी।

कानूनी तौर पर नस्लभेद के तीन स्तंभ थे - रेस क्लासिफ़िकेशन एक्ट, मिक्स्ड मैरिज एक्ट और ग्रुप एरियाज़ एक्ट। रेस क्लासिफ़िकेशन एक्ट के अनुसार हर उस नागरिक का वर्गीकरण किया जाता है जिस पर गैर-यूरोपीय होने का संदेह होता है। मिक्स्ड मैरिज एक्ट के अनुसार अलग-अलग नस्ल के लोगों के बीच विवाह पर प्रतिबंध लगाया गया था। ग्रुप एरियाज़ एक्ट के अनुसार कुछ तय नस्ल के लोगों को सीमित इलाक़ों में रहने के लिए बाध्य किया गया थ। अश्वेत लोगों के अधिकारों के लिए 1912 में अफ़्रीकन नेशनल कांग्रेस की स्थापना हुई थी। इस संस्था से नेल्सन मंडेला 1942 में जुड़े। उन्होंने 1955 में फ़्रीडम चार्टर लिखा था। उन्होंने यह घोषित किया कि श्वेत और अश्वेत सभी बराबर है। दक्षिण अफ्रीका सभी का है। सरकार ने इस आंदोलन को कुचलने के लिए मंडेला को गिरफ़्तार करके उम्र कैद की सजा सुनाई। लेकिन

70 के दशक में आक्रामक अश्वेत चेतना आंदोलन का जन्म हुआ। इस आंदोलन के संस्थापकों में से छात्र कार्यकर्ता स्टीव बिको की हिरासत में मौत ने मंडेला और एएनसी में लोगों की रुचि को फिर से जगाया।

बोध प्रश्न

- अश्वेत लोगों का पहला नेता कौन हैं?
- नियाग्रा आंदोलन का प्रमुख कारण क्या है?
- कानूनी तौर पर नस्लभेद के तीन स्तंभ क्या-क्या हैं?
- अश्वेत लोगों के अधिकारों के लिए 1912 में किसकी स्थापना की गई?

(आ) भारतीय पृष्ठभूमि

भारत में प्रमुख रूप से यह आंदोलन जाति आधारित आंदोलन था। उच्च जाति के लोग निम्न जाति के लोगों को मूलभूत मानवाधिकारों से वंचित करके रखा था। अस्पृश्यता सबसे अमानवीय प्रथा है। इसने दलितों को बेहद अमानवीय परिस्थितियों में रहने को मजबूर कर दिया था। परिणामस्वरूप दलितों ने अपने प्रति हो रहे अमानवीय कृत्यों के प्रति आवाज उठाने लगे। भारत में दलितों ने समान अधिकार का माँग करते हुए आंदोलन किया।

शिक्षा के आगमन और ईसाई मिशनरियों के प्रभाव से दलितों का पलायन शुरू हुआ। समानता और स्वतंत्रता के आदर्श सामने आए। शोषण के खिलाफ उठी आवाज आंदोलन का रूप धारण करने लगी। भारत के संदर्भ में दलित आंदोलन मूलतः अधिकारों को हासिल करने का आंदोलन था। शिक्षित दलित धीरे-धीरे शोषण के बारे में, अधिकारों के बारे में, समानता के बारे में सोचने लगे। संचार माध्यमों की वृद्धि, नवीन शिक्षा प्रणाली, नूतन प्रशासन व्यवस्था, बाजारीकरण आदि कारकों ने अछूतों की स्थिति में बदलाव लाने में योगदान दिए।

महाराष्ट्र में ज्योति राव फूले और केरल में श्री नारायण गुरु के नेतृत्व में लोगों ने जातिगत असमानता पर सवाल उठाने लगे। गांधीजी ने अस्पृश्यता उन्मूलन के मुद्दे को राष्ट्रीय आंदोलन में एकीकृत किया था। डॉ. बी. आर. अंबेडकर ने 1942 में अखिल भारतीय अनुसूचित जाति महासंघ का गठन किया था। जगजीवन राम ने भी दलितों के उद्धार के लिए कार्य किया था। 70 की दशक में महाराष्ट्र में दलित पैंथर्स के रूप में एक नई प्रवृत्ति सामने आई। प्रिय छात्रो! आप इन सब के बारे हम विस्तार से जानने की कोशिश करेंगे।

बोध प्रश्न

- अछूतों की स्थिति में बदलाव लाने में सहायक कारकों के नाम बताइए।
- किसने अखिल भारतीय अनुसूचित जाति महासंघ का गठन किया था?

3.3.2 भारतीय दलित आंदोलन की गतिशीलता

दलित आंदोलन की रणनीतियाँ, विचारधाराएँ, दृष्टिकोण आदि नेता, स्थान और समय के आधार पर भिन्न-भिन्न थे। शुरुआत से लेकर भारत में दलित आंदोलन की स्थितियाँ समय-समय पर बदलती रहीं। बड़ी संख्या में दलितों को ईसाई धर्म में परिवर्तित किया गया। वे बौद्ध

धर्म भी अपनाए। भारत में स्वतंत्रता प्राप्त होते ही अस्पृश्यता निवारण के कानून बने। आगे हम दलित आंदोलन में महात्मा गांधी और अंबेडकर के योगदान के बारे में जानने की कोशिश करेंगे।

(अ) महात्मा गांधी का योगदान

महात्मा गांधी जब दक्षिण अफ्रीका गए तब उन्होंने सामाजिक भेदभाव को महसूस किया। वस्तुतः गांधी जी छुआछूत, वर्ण भेद और वर्ग भेद आदि को नहीं मानते थे। उनके अनुसार राष्ट्र का विकास ही अत्यंत महत्वपूर्ण है। और यह तभी संभव है जब निम्न वर्ग अथवा दलितों की सामाजिक स्थिति ऊपर उठेगी। गांधी जी ने जेल में भी सत्याग्रह शुरू किया था। अस्पृश्यता निवारण के लिए उन्होंने देश भर में यात्रा की थी। उन्होंने हमेशा अस्पृश्यता को समाज से दूर करने के लिए प्रयत्न किया। उनकी आत्मकथा से यह स्पष्ट होती है कि वे अस्पृश्यता को नहीं मानते थे। उनका मन यह स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं था कि एक इंसान और दूसरे इंसान के बीच इतना भेद हो सकता है! गांधी जी दलितों को हरिजन कहकर संबोधित करते थे। उनके उत्थान के लिए उन्होंने 1932 में जेल में रहते हुए हरिजन सेवक संघ की नींव रखी थी। गांधी जी ने अपनी पत्रिकाओं का नाम भी हरिजन, हरिजनबंधु और हरिजनसेवक रखा। गांधी जी के प्रयासों के कारण ही हरिजनों का मंदिर व पाठशाला में प्रवेश आदि संभव हुआ।

बोध प्रश्न

- अस्पृश्यता निवारण के लिए गांधी जी ने क्या किया?

(आ) अंबेडकर का योगदान

अंबेडकर ने कमजोर वर्गों की सामाजिक-आर्थिक उन्नति के लिए काम किया। उनके अधिकारों के लिए उन्होंने स्वतंत्र रूप से वकालत आरंभ की। दलितों के अधिकारों के संघर्ष के समर्थन में उन्होंने पत्र-पत्रिकाएँ आरंभ की। 1920 में उन्होंने मराठी पाक्षिक 'मूकनायक' आरंभ किया और 1924 में बहिष्कृत हितकारिणी सभा की स्थापना की। दलितों के सामाजिक न्याय के लिए वे केवल लेखन कार्य से संतुष्ट नहीं हुए। उन्होंने धीरे-धीरे आंदोलन का रास्ता अपनाया। उन्होंने 1927 में कोलाबा जिले के महद में दलितों के लिए सार्वजनिक तालाब चावडर तालेन से पानी लेने का नागरिक अधिकार प्राप्त करने के लिए सत्याग्रह का नेतृत्व किया। 1927 में ही उन्होंने बहिष्कृत भारत नामक एक अन्य मराठी पाक्षिक का आरंभ किया। सवर्ण और अवर्ण के बीच समानता स्थापित करने के लिए उन्होंने समाज समता संघ नामक संगठन की स्थापन की। 1929 में संगठन के अंग के रूप में 'समता' नामक पत्रिका प्रारंभ की। 1936 में इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी का गठन किया। 1942 में दलितों के हितों के लिए अखिल भारतीय अनुसूचित जाति संघ का गठन किया। उनका नारा था - 'शिक्षित बनो, आवाज उठाओ और संगठित रहो।' अछूत विद्यार्थियों के लिए उन्होंने छात्रावास खोले, निःशुल्क पुस्तकें तथा वस्त्र उपलब्ध करवाए। उन्होंने 'द पीपल्स एजुकेशन सोसइटी' की भी स्थापना की। उन्होंने दलितों के उत्थान के लिए अनेक कार्य किया।

बोध प्रश्न

- दलितों के उत्थान हेतु अंबेडकर ने किन संस्थाओं की स्थापना की?

3.3.3 दलित साहित्यिक आंदोलन

उच्च वर्ग निम्न वर्ग के लोगों को कुछ कहने का अधिकार नहीं देता। अतः वे अपनी आवाज को जनता तक पहुँचाने के लिए स्वयं कलम उठाने लगे। पत्र-पत्रिकाएँ चलाने लगे। दलित मुक्ति के अंग के रूप में दलित लेखन उभरने लगा। उसने समूचे भारत के परिदृश्य को बदल दिया। अनेक संवेदनशील साहित्यकारों ने साहित्यिक रचनाओं के माध्यम से दलितों की व्यथा-कथा को उजागर किया। यह प्रश्न उठने लगा कि दलित साहित्य किसे माना जाए? क्या वह साहित्य दलित साहित्य है जिसमें दलितों की पीड़ा और संघर्ष की गाथा है अथवा वह साहित्य जिसे स्वयं एक दलित साहित्यकार ने अपने निजी वेदना को अभिव्यक्त किया है! कुछ लोग यह भी कहने लगे कि गैर-दलितों द्वारा लिखा गया साहित्य दलित साहित्य नहीं है। लेकिन प्रेमचंद, शिवप्रसाद सिंह जैसे संवेदनशील रचनाकारों के साहित्य में जो दलितों के प्रति संवेदना उभरी है क्या उसको नकारा जा सकता है? नहीं, यह सहानुभूतिपरक साहित्य है। इसका भी उतना ही महत्व है जितना स्वानुभूति के साहित्य का है।

भारतीय साहित्य के संदर्भ में बात करें तो स्पष्ट होता है कि दलित विमर्श की शुरुआत मराठी में 1960 के आसपास हुई। यह निर्विवाद सत्य है कि मराठी लेखकों के अनुकरण से हिंदी में भी आत्मकथा लेखन से दलित लेखन आरंभ हुआ। मराठी में बाबु राव वागुल को दलित साहित्य के अग्रदूत माने जाते हैं। बाबु राव वागुल ने 'जीवाह मिजाव चोराली' (जब मैंने अपनी जाति छुपाई, 1963) में संग्रहीत अपनी लघुकथाओं के माध्यम से सामाजिक शोषण को पाठकों के समक्ष रखकर उन्हें सोचने पर बाध्य किया। इन लघुकथाओं ने साहित्य की पारंपरिक ढाँचे को तोड़ा। बाद में नामदेव ढसाल ने दलित साहित्य आंदोलन को विस्तार दिया। उन्होंने मुंबई में दलित पैंथर नाम की संस्था बनाई। दलित पैंथर्स के गठन के साथ दलित साहित्य में बदलाव आने लगा। दलितों की पीड़ा, अस्तित्व के लिए उनका संघर्ष, अपने अधिकारों के लिए न्याय सम्मत लड़ाई ने दलित कविताओं और कहानियों की एक शृंखला को फलने-फूलने के लिए अवसर प्रदान किया। हिंदी की पहली दलित कविता के रूप में 'अछूत की शिकायत' (हीरा डोम) को माना जाता है, तो प्रथम दलित कहानी होने का श्रेय 'वचनबद्ध' (सतीश) को जाता है।

दलित लेखकों द्वारा लिखित साहित्य में अकसर यह तर्क दिया जाता है कि उनकी लड़ाई उच्च वर्ण और वर्ग के लोगों के साथ-साथ उन सब के खिलाफ है जो शोषण करता हो तथा उस शोषण-चक्र को मजबूत करता हो। दलित लेखन के रूप में नए क्रांतिकारी गीत, कविताएँ, कहानियाँ, आत्मकथाएँ सामने आने लगीं। पढ़े-लिखे दलित और बुद्धिजीवी बिना किसी हिचकिचाहट के अपने अनपढ़ भाइयों को समाज में व्याप्त दोहरी नीति के बारे में समझाने और समाज में आवश्यक परिवर्तन लाने की कोशिश करने लगे। ध्यान देने की बात है कि दलित साहित्यकारों ने समाज में अपनी स्थिति को उजागर करके विभिन्न वर्णों के बीच नफरत की आग नहीं फैलाने चाहते, बल्कि यथार्थ को उजागर करके अपने अस्तित्व को बचाए रखना चाहते हैं।

बोध प्रश्न

- आप दलित साहित्य किसे मानते हैं?
- मुंबई में दलित पैंथर्स का गठन किसने किया?
- दलित लेखन का मुख्य उद्देश्य क्या है?

3.3.4 स्वतंत्रता के बाद दलित आंदोलन

ध्यान देने की बात है कि स्वतंत्रता से पहले और स्वतंत्रता के बाद दलित आंदोलन में काफी बदलाव देखने को मिलता है। आजादी के बाद सामाजिक स्थितियाँ बदलने लगीं। लोगों की जरूरतें बदलने लगीं। उच्च वर्ग और धनाढ्य वर्ग सीढ़ी चढ़ने लगे, लेकिन निम्न वर्ग की स्थिति तो बद से बदतर होने लगी। छात्रो! अब हम आजादी के बाद के दलित आंदोलन की जानकारी प्राप्त करेंगे।

(अ) अंबेडकर और बौद्ध धर्म

डॉ. बी. आर. अंबेडकर - भारतीय दलित आंदोलन के अग्रदूत। उन्होंने अपने जीवन के हर पल दलितों के उत्थान के लिए ही समर्पित किया था। उन्होंने भारत के संविधान का निर्माण किया। अंबेडकर द्वारा निर्मित संवैधानिक नियम व्यापक रूप से हर नागरिक को संवैधानिक गारंटी और सुरक्षा प्रदान करते हैं। उन्होंने अस्पृश्यता को गैरकानूनी बताया। उन्होंने स्त्रियों के कानूनन अधिकारों के लिए संघर्ष किया। अनुसूचित जातियों और जनजातियों के सदस्यों के आरक्षण दिलवाने की कोशिश की जो एक प्रकार से सकारात्मक गतिविधि थी।

पहले अंबेडकर ने सिख धर्म अपनाने पर विचार किया था। पर उन्होंने जब यह पाया कि सिख के रूप में धर्मांतरण के परिणामस्वरूप सिखों के बीच उनका दर्जा 'दोयम दर्जे' का हो सकता है, तो उन्होंने यह सोच त्याग दी। उन्होंने जीवन भर बौद्ध धर्म का अध्ययन किया। वे बौद्ध धर्म के पक्षधर थे। 1950 में 'वर्ल्ड फेलोशिप ऑफ बुद्धिस्ट' में भाग लेने हेतु उन्होंने श्रीलंका की यात्रा की। 1955 में उन्होंने भारतीय बुद्ध महासभा का गठन किया। उन्होंने 'भगवान बुद्ध और उनका धम्म' शीर्षक प्रसिद्ध ग्रंथ का सृजन किया। उन्होंने अपनी पत्नी के साथ बौद्ध धर्म अपनाया। फिर अपने समर्थकों का भी धर्मांतरण किया। उन्हें यह विश्वास था कि बौद्ध धर्म दलितों और अन्य शोषित वर्गों के लिए एक अलग पहचान दिलाने में सक्षम होगा। उनकी मान्यता थी कि धर्मांतरण के माध्यम से स्थिति में सुधार लाया जा सकता है। उन्होंने यह महसूस किया कि जाति व्यवस्था की नींव धर्म है और जब तक दलित हिंदू बनकर रहेंगे तब तक भोजन, पानी, सामाजिक न्याय आदि के लिए संघर्ष करते ही रहेंगे। अतः उन्होंने दलितों को धर्मांतरण के लिए संगठित किया। ध्यान देने की बात है कि जातिगत अत्याचारों के कारण 1981 में तमिलनाडु में लगभग 1000 दलित इस्लाम धर्म अपनाए। इसी प्रकार जब 2002 में गाय को मारने के संदेह में चार दलितों को भीड़ ने पीट-पीट कर मार डाला तो दक्षिण में बड़ी संख्या में धर्मांतरण हुआ। 2014 में मध्य प्रदेश में दलितों ने इस्लाम धर्म अपनाया। 2001 की जनगणना के अनुसार भारत में 70 लाख बौद्ध हैं, तो 2011 की जनगणना के अनुसार 85 लाख। और यह संख्या 2023 तक पहुँचते-पहुँचते 99 लाख तक पहुँच गई। इससे स्पष्ट है कि भारत में अधिकांश संख्या में धर्म-परिवर्तन हो रहा है।

पहले बौद्ध धर्म का पुनर्जागरण दो राज्यों तक सीमित था - अंबेडकर का जन्म स्थान महाराष्ट्र और आचार्य मेधारथी का स्थान उत्तर प्रदेश। बाद में कानपुर में राजेंद्रनाथ अहरवार सशक्त दलित नेता के रूप में उभरे। दीपांकर के आगमन से कानपुर में दलित आंदोलन को गति मिली। महाराष्ट्र दलित पैंथर से प्रेरित होकर दलित पैंथर उत्तर प्रदेश शाखा की स्थापना हुई।

बोध प्रश्न

- अंबेडकर ने बौद्ध धर्म क्यों अपनाया?
- भारत में अधिकांश लोग धर्म-परिवर्तन क्यों कर रहे हैं?

(आ) दलित पैंथर

दलित पैंथर आंदोलन वस्तुतः एक सामाजिक आंदोलन है। इसने सैद्धांतिक रूप में अंबेडकर के जीवन दर्शन को स्वीकार किया। दलित पैंथर जातिगत भेदभाव के विरुद्ध संघर्ष करने वाली सामाजिक संस्था है। इसकी स्थापना भारत में 29 मई, 1972 में नामदेव ढसाल और पवार ने महाराष्ट्र में की। ध्यान देने की बात है कि दलित पैंथर 'ब्लैक पैंथर पार्टी' से प्रेरित थी। 'ब्लैक पैंथर पार्टी' आत्मरक्षा की पार्टी थी। यह अमेरिकी मार्क्सवादी-लेनिनवादी और ब्लैक पावर राजनैतिक संगठन थी। इसकी स्थापना 1966 में हुई। इस संस्था ने नस्लीय भेदभाव के विरुद्ध लड़ाई की थी। भारत के दलित पैंथर संगठन में ज्यादातर युवा ही थे जो अंबेडकर, ज्योति राव फूले और कार्ल मार्क्स की विचारधाराओं के हिमायती थे। दलित पैंथर्स ने निम्न जाति के संदर्भ में 'दलित' शब्द के प्रयोग पर बल दिया। यह आंदोलन एक क्रांतिकारी आंदोलन के रूप में शुरू हुआ। आत्मरक्षा के रूप में ब्लैक पैंथर पार्टी के योगदानों के सकारात्मक पक्ष भी दिखाई देती थी। साथ ही हठधर्मिता, आर्थिक आधार की अनदेखी, ढुलमुल प्रवृत्तियाँ जैसे अनेक नकारात्मक पक्ष भी सामने आए। परिणामस्वरूप दलितों के बीच आपसी कलह शुरू हुआ।

बोध प्रश्न

- ब्लैक पैंथर क्या है?

(इ) बसपा और अन्य जाति आधारित दलों का विकास

कांशीराम ने अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, अन्य पिछड़े हुए वर्ग और अल्पसंख्यक कर्मचारियों की कल्याण हेतु एक संघ की स्थापना की। 1973 में उन्होंने 'बामसेफ' (Backward And Minority Communities Employees Federation - BAMCEF) की स्थापना की। इसने अंबेडकर के विचारों और उनकी मान्यताओं को फैलाने के लिए एक आधार के रूप में कार्य किया। 1980 में उन्होंने 'अंबेडकर मेला' के रूप में नुक्कड़ नाटक का प्रदर्शन किया जिसमें अंबेडकर के जीवन और विचारों पर प्रकाश डाला गया। उन्होंने 1981 में 'दलित शोषित समाज संघर्ष समिति' की गठन की थी। 1984 में भारत में बसपा (बहुजन समाज पार्टी - BSP) का गठन किया। इसका मुख्य उद्देश्य था जातिवाद समाप्त करना। कांशीराम के बाद मायावती ने भी पार्टी के लक्ष्य के लिए काम किया। बाबू जगजीवन राम, के. आर. नारायण, के. जी. बालकृष्णन आदि ने दलितों के उत्थान के लिए काम किया। इन व्यापक

राजनीतिक रुझानों के अलावा आंध्र प्रदेश में दलित महासभा, महाराष्ट्र में जन आंदोलन, बिहार में दलित सेना और अन्य कई क्षेत्रीय संगठन सामने आए।

बोध प्रश्न

- 'दलित शोषित समाज संघर्ष समिति' का गठन किसने किया?
- बसाप का मुख्य उद्देश्य क्या था?

(ई) दलित और भारतीय राजनीति

दलितों के सामाजिक और आर्थिक उत्थान के लिए भारतीय संविधान में अनेक प्रावधान किए गए। विशेष रूप से अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लिए आरक्षण का प्रावधान। फिर भी ये प्रावधान सब के लिए आसानी से उपलब्ध नहीं होते। इन प्रावधानों से भी 'कुछ' ही वर्ग लाभ उठाने में सक्षम हैं। ये उन दलितों तक सीमित हैं जो हिंदू बनकर ही रह जाते हैं। जो दलित धर्म परिवर्तन कर लेते हैं उनके लिए ये प्रावधान कोसों दूर हैं। जिन दलितों ने दूसरे धर्मों को अपना लिया उन लोगों ने भी माँग की कि उन्हें भी वे तमाम अधिकार प्राप्त होने चाहिए जो उनके ही जाति के अन्य भाई-बहन पा रहे हैं। कहा जाता है कि दलितों का धर्मांतरण किसी सामाजिक या धार्मिक प्रेरणा के कारण नहीं, बल्कि शिक्षा और नौकरियों जैसे प्रलोभनों के कारण होता है। विद्यालयों और विश्वविद्यालयों में दलितों के प्रवेश हेतु सरकार ने आरक्षण का प्रवेश किया। यह एक तरह से सकारात्मक पहलू है। राष्ट्रीय और राज्य संसदों में सीटें अनुसूचित जाति और जनजाति के उम्मीदवारों के लिए आरक्षित हैं। परिणामस्वरूप अनेक दलित राजनैतिक क्षेत्र में आए और मुख्य पदों पर आसीन हुए। भेदभाव विरोधी कानूनों के बावजूद, कई दलित अभी भी सामाजिक कलंक और भेदभाव से पीड़ित हैं।

बोध प्रश्न

- दलितों के सामाजिक उत्थान के लिए भारत सरकार ने क्या किया?

3.4 पाठ सार

प्रिय छात्रो! अब तक के अध्ययन से आप समझ ही चुके होंगे कि भारतीय समाज में बृहत परिवर्तन लाने में दलित आंदोलन की महती भूमिका है। इस आंदोलन ने विभिन्न जातियों और वर्गों के बीच सामाजिक न्याय, समता और बंधुता को स्थापित करने पर बल दिया। दबी कुचली शोषित जनता आखिर कब तक खामोश रह सकती है! कभी न कभी तो उसे आवाज उठानी ही पड़ती है न! अतः दलितों ने भी अपने प्रति हो रहे अन्याय के विरुद्ध बिगुल बजाया। अपनी अस्मिता की लड़ाई लड़ने लगे। अपने अधिकारों को प्राप्त करने में सक्षम हुए। स्वतंत्रता के बाद राजनैतिक क्षेत्रों में भी दलितों ने अपना स्थान बना लिया। दलितों ने उच्च वर्ण और वर्ग के लिए चुनौती बनकर सामने आए। संपूर्ण विश्व में सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और राजनैतिक परिवर्तन लाने में दलित आंदोलन ने सफलता अर्जित की।

3.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन के बाद निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए -

6. सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, धार्मिक, सांस्कृतिक परिवर्तन लाने के लिए दलित आंदोलन एक शक्तिशाली अस्त्र बन गया।
7. पश्चिम में गोरे और कालों में अलग-अलग नियम थे। परिणामस्वरूप अश्वेत आंदोलन का जन्म हुआ। पश्चिम का आंदोलन जहाँ रंग भेद पर आधारित था, वहीं भारत में प्रमुख रूप से यह आंदोलन जाति आधारित आंदोलन था।
8. दलित आंदोलन ने समाज के उन तथाकथित अपरिवर्तनीय सवर्ण ढाँचों को चुनौती दी।
9. दलित साहित्य तमाम विरोधों के बावजूद दलितों की अस्मिता के लिए आवाज उठाने में सक्षम रहा।
10. शोषण के प्रति नकार और प्रतिरोध के स्वर ने दलित आंदोलन को गति प्रदान की।

3.6 शब्द संपदा

1. अस्तित्व	=	होने का भाव
2. अस्पृश्यता	=	छुआछूत
3. अस्मिता	=	अपनी सत्ता की पहचान
4. उत्थान	=	समृद्ध स्थिति
5. जिजीविषा	=	जीने की इच्छा
6. दमनकारी	=	उत्पीड़न/ अत्याचार करने वाला
7. परमिट	=	आधिकारिक अनुमति जो सरकार द्वारा दी जाती है
8. बाजारीकरण	=	वस्तुकरण
9. सहानुभूति	=	दया, करुणा
10. स्वानुभूति	=	स्वयं की अनुभूति

3.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

4. भारतीय दलित आंदोलनों की गतिशीलता का परिचय दीजिए।
5. भारत में स्वतंत्रता बाद दलित आंदोलनों में परिलक्षित बदलाव को रेखांकित कीजिए।
6. 'सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, धार्मिक, सांस्कृतिक परिवर्तन लाने के लिए दलित आंदोलन एक शक्तिशाली अस्त्र बन गया।' इस उक्ति से क्या आप सहमत हैं? स्पष्ट कीजिए।
7. भारत में राजनैतिक दाव-पेंच के कारण दलितों को किन-किन परिस्थितियों का सामना करना पड़ा? स्पष्ट कीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

6. दलित आंदोलनों के प्रमुख कारणों पर प्रकाश डालिए।
7. अश्वेत आंदोलन के संबंध में प्रकाश डालिए।
8. भारतीय दलित आंदोलन में महात्मा गांधी के योगदान को रेखांकित कीजिए।
9. भारतीय दलित आंदोलन में अंबेडकर की भूमिका को स्पष्ट कीजिए।
10. भारतीय दलित साहित्यिक आंदोलन से आप क्या समझते हैं? स्पष्ट कीजिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए

1. अश्वेतों का पहला नेता कौन हैं? ( )
   (अ) बूकर वाशिंगटन (आ) विलियम डुबोइस (इ) अब्राहम लिंकन (ई) मंडेला
2. मराठी में दलित साहित्य के अग्रदूत कौन हैं? ( )
   (अ) बाबु राव वागुल (आ) नामदेव ढसाल (इ) अंबेडकर (ई) नारायणन
3. मराठी पाक्षिक 'मूकनायक' का आरंभ किसने किया? ( )
   (अ) ज्योति राव फूले (आ) अंबेडकर (इ) तिलक (ई) गांधी
4. 'शिक्षित बनो, आवाज उठाओ और संगठित रहो' - यह किसका नारा है? ( )
   (अ) ज्योति राव फूले (आ) अंबेडकर (इ) तिलक (ई) गांधी

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए

1. समानता सिद्धांत के आधार पर ..... ने नीग्रो लोगों के लिए अधिनियम पारित किया था।
2. नियाग्रा आंदोलन ..... अधिकारों का आंदोलन है।
3. 1927 में ही ..... ने बहिष्कृत भारत नामक एक अन्य मराठी पाक्षिक का आरंभ किया।
4. हिंदी की पहली दलित कविता के रूप में ..... को माना जाता है।
5. दलित पैंथर ..... पार्टी से प्रेरित थी।

III. सुमेल कीजिए

1. वचनबद्ध	(अ) महात्मा गांधी
2. भगवान बुद्ध और उनका धम्म	(आ) दलित कहानी
3. अछूत की शिकायत	(इ) कांशीराम
4. बामसेफ	(ई) अंबेडकर
5. हरिजनबंधु	(उ) हीरा डोम

3.8 पठनीय पुस्तकें

3. आधुनिकता के आईने में दलित : सं. अभय कुमार दुबे
4. दलित संघर्ष : पवित्र कुमार शर्मा
5. भारत में पिछड़ा वर्ग : आंदोलन और परिवर्तन का नया समाजशास्त्र : हरिनारायण ठाकुर

इकाई- 4 हिंदी दलित कविता : एक परिचय (भाषा एवं शैली)

इकाई की रूपरेखा

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 मूलपाठ : हिंदी दलित कविता : एक परिचय (भाषा एवं शैली)
4.3.1 दलित शब्द का अर्थ व परिभाषा
4.3.2 दलित शब्द के पर्यायवाची
4.3.3 हिंदी दलित कविता की भाषा एवं शैली
4.4 पाठसार
4.5 पाठ की उपलब्धियाँ
4.6 शब्द संपदा
4.7 परीक्षार्थ प्रश्न
4.8 पठनीय पुस्तकें

4.1 प्रस्तावना

हिंदी साहित्य की विभिन्न विधाओं में सबसे महत्वपूर्ण और प्राचीन विधा कविता है। कविता का इतिहास देखने पर पता चलता है कि ये सातवीं-आठवीं शताब्दी में लिखी जाती रही है और तब से लेकर आज तक लिखी जा रही है। समय के साथ इसका रूप और विषय दोनों बदले हैं। एक समय में कविता के केंद्र में राजा का युद्ध और उसका वर्णन था तो एक समय में ईश्वर हो गया। फिर यह स्थान नायिकाओं ने ले लिया। आधुनिक काल में समाज का निचला तबका उसकी परेशानियाँ सामने आने लगीं।

वर्तमान दौर विमर्शों का दौर है। आज हिंदी साहित्य में विविध विमर्शों की चर्चा होती है। वर्तमान में दलित विमर्श अत्यधिक महत्वपूर्ण विमर्श है। इसके अंतर्गत विविध विधाओं में सृजन हो रहा है। कविता के माध्यम से भी दलित साहित्यकार अपनी उपस्थिति दर्ज करा रहे हैं। इस इकाई में हम 'हिंदी दलित कविता' विशेष रूप से उसकी भाषा शैली पर विचार कर रहे हैं।

4.2 उद्देश्य

प्रिय विद्यार्थियो ! इस इकाई को पढ़ने के बाद आप-

- दलित शब्द का अर्थ और परिभाषा बता सकेंगे।
- दलित शब्द के पर्यायवाची शब्दों के विषय में संक्षेप में बता सकेंगे।
- भाषा और शैली के विषय में संक्षेप में जान सकेंगे।
- हिंदी दलित कविता की भाषा और शैली पर आलोचनात्मक दृष्टि से विचार कर सकेंगे।
- दलित कविता के उद्भव और विकास से भी संक्षेप में परिचित हो सकेंगे।

4.3 मूलपाठ : हिंदी दलित कविता : एक परिचय (भाषा एवं शैली)

प्रिय विद्यार्थियो ! 'हिंदी दलित कविता : एक परिचय (भाषा एवं शैली)' विषय को हम निम्न उपशीर्षकों के अंतर्गत विचार करेंगे-

4.3.1 दलित शब्द का अर्थ व परिभाषा

4.3.1.1 दलित शब्द का अर्थ

दलित शब्द पर काफी विवाद की स्थिति रही है। कुछ आलोचकों का मत है कि जिसका दारूण-दलन हुआ है वह दलित है जबकि कुछ अन्य आलोचकों का मत है कि जाति के आधार पर शस्त्र तथा शास्त्र द्वारा जिसका शोषण हुआ वह दलित है। दलित शब्द को संकुचित तथा व्यापक दो अर्थों में लिया जाता है। दलित शब्द का अर्थ स्पष्ट करते हुए ओमप्रकाश वाल्मीकि लिखते हैं- 'दलित शब्द का अर्थ है - जिसका दलन और दमन हुआ है, दबाया गया है, उत्पीड़ित, शोषित, सताया हुआ, गिराया हुआ, उपेक्षित, घृणित, रौंदा हुआ, मसला हुआ, कुचला हुआ, विनिष्ट, मर्दित, पस्त-हिम्मत, हतोत्साहित, वंचित आदि।' ध्यान देने योग्य विषय यह है कि यहाँ धर्म की बात नहीं की गई है। ये सब शब्द परिस्थितिजन्य हैं और इस प्रकार की परिस्थितियाँ किसी भी धर्म के व्यक्ति के साथ हो सकती हैं। इस विषय में बजरंग बिहारी तिवारी लिखते हैं- 'दलित शब्द एक सामाजिक स्थिति का सूचक है।' बजरंग बिहारी तिवारी आगे लिखते हैं- 'दलित' शब्द का प्रयोग बाबासाहेब के परिनिर्वाण के बाद चलन में आया। जानकारों के अनुसार बाबासाहेब ने अपने जीवन काल में दो-तीन बार ही इस शब्द का इस्तेमाल किया था।' दलित शब्द के प्रयोग के पहले शूद्र, अस्पृश्य/अछूत, अन्त्यज, अपवित्र, हरिजन, पंचम् आदि शब्दों का प्रयोग होता रहा है।

4.3.1.2 दलित शब्द का संकुचित अर्थ

दलित शब्द के संकुचित अर्थ पर विचार करें तो सरकार द्वारा अनुसूचित जाति की श्रेणी में रखी गयी जातियाँ ही दलित हैं। इसके अंतर्गत चमार, पासी, भंगी, डोम, महार आदि जातियाँ आती हैं। इस विषय में डॉ. जी.वी. रत्नाकर लिखते हैं- 'अस्पृश्य या हरिजन आदिवासी ही दलित हैं। युगों से उच्च वर्ण के लोगों द्वारा पैरों तले कुचला गया है वही दलित है, उनका स्पर्श भी निषिद्ध है।' इस विषय में कँवल भारती का मत है कि 'दलित वह है जिस पर अस्पृश्यता का नियम लागू किया गया है। जिसे कठोर और गन्दे कार्य करने के लिए बाध्य किया गया है। जिसे शिक्षा ग्रहण करने और स्वतंत्र व्यवसाय करने से मना किया गया और जिस पर सछूतों ने सामाजिक निर्योग्यताओं की संहिता लागू की, वही और वही दलित है, और इसके अंतर्गत वही जातियाँ आती हैं, जिन्हें अनुसूचित जातियाँ कहा जाता है।' इसके व्यापक अर्थ पर हम आगे विचार करेंगे।

बोध प्रश्न

- दलित शब्द के संकुचित अर्थ पर प्रकाश डालिए।
- कंवल भारती ने दलित के रूप में किसे स्वीकार किया है?

4.3.1.3 दलित शब्द का व्यापक अर्थ

दलित शब्द को व्यापक अर्थ में लिया जाए तो केवल अनुसूचित जाति में आने वाली जातियाँ ही दलित नहीं हैं। सामाजिक तथा धार्मिक दृष्टि से जिनका शोषण होता है वह भी दलित हैं। स्वतंत्रता, समता और प्रगति से अपरिचित रहकर अपने मालिक की दासता स्वीकार करता है। अनुसूचित जातियों की भाँति कष्टकारक जीवन व्यतीत करने को मजबूर सभी मजदूर नारियाँ, बेघर जैसे लोग दलित श्रेणी में आते हैं। इसके साथ आर्थिक विपन्नता के कारण मनुष्य की भाँति जीवन न व्यतीत कर पाने वाले सभी लोग दलित हैं। कई विद्वानों ने स्त्रियों को भी दलित माना है। 'राजेन्द्र यादव दलित शब्द को काफी व्यापक दायरे में देखते हैं। वे स्त्रियों को भी दलित मानते हैं। पिछड़ी जातियों को भी दलितों में शामिल करते हैं।' दलित शब्द को व्यापकता में देखते हुए ओमप्रकाश वाल्मीकि लिखते हैं 'दलित शब्द व्यापक अर्थबोध की अभिव्यंजना देता है। भारतीय समाज में जिसे अस्पृश्य माना गया वह व्यक्ति ही दलित है। दुर्गम पहाड़ों, वनों के बीच जीवन यापन करने के लिए बाध्य जनजातियाँ और आदिवासी, जरायमपेशा घोषित जातियाँ सभी इस दायरे में आती हैं। सभी वर्गों की स्त्रियाँ दलित हैं। बहुत कम श्रम मूल्य पर चौबीसों घंटे काम करने वाले श्रमिक, बंधुआ मजदूर दलित की श्रेणी में आते हैं।' डॉ. शरण कुमार लिंबाले दलित शब्द की व्याख्या निश्चित करते हुए लिखते हैं- 'सर्वप्रथम दलित साहित्य में 'दलित' शब्द की व्याख्या निश्चित करनी होगी। दलित केवल हरिजन और नवबौद्ध नहीं। गाँव की सीमा के बाहर रहने वाली सभी अछूत जातियाँ, आदिवासी, भूमिहीन, खेत मजदूर, श्रमिक, कष्टकारी जनता और यायावर जातियाँ सभी की सभी 'दलित' शब्द की परिभाषा में आती है। दलित शब्द की परिभाषा में केवल अछूत जाति का उल्लेख करने से नहीं चलेगा। इसमें आर्थिक दृष्टि से पिछड़े हुए लोगों का भी समावेश करना होगा।' आर्थिक दृष्टि से पिछड़े हुए लोगों की बात तो मार्क्सवाद भी करता है। इस दृष्टि से मार्क्सवाद दलित का पक्षधर सिद्ध होता है। वर्तमान समय में दलित के बदलते हुए स्वरूप पर सुशीला टॉकभौरे ने बड़ी ही सटीक टिप्पणी की है- 'दलित वह व्यक्ति है, जो सवर्ण हिन्दुओं द्वारा शोषित और पीड़ित था। बीसवीं सदी के उत्तरार्ध तक आकर 'दलित' की परिभाषा बदल गयी है। अब दलित वह है, जो अपनी स्थिति को पहचान गया है और अपने अधिकारों को पाने के लिए सचेत हो गया है। अब वह संगठित होकर, लगातार आगे बढ़ रहा है। अपनी सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, राजनैतिक स्थिति में प्रगति-परिवर्तन के लिए, अपने अस्तित्व, अपनी अस्मिता के लिए लड़ रहा है और संघर्ष कर रहा है .... दलित अब पुराने अर्थों में दलित बनाकर नहीं रखे जा सकते।'

बोध प्रश्न

- दलित के अंतर्गत स्त्रियों को क्यों स्वीकार किया जाता है?
- दलित स्त्री के संबंध में अपने विचार संक्षेप में बताएँ।

4.3.1.4 दलित की परिभाषा

विभिन्न विद्वानों ने दलित की परिभाषा इस प्रकार दी है-

1.नामदेव ढसाल के अनुसार- 'अनुसूचित जातियाँ, बौद्ध श्रमिक, भूमिहीन कृषक व भटकने वाली सभी जातियाँ दलित हैं।'

नामदेव ढसाल की परिभाषा पर गौर करें तो हम दलित को व्यापक अर्थ में समझ सकते हैं। 'भटकने वाली जातियाँ' शब्द से पता चलता है कि ये बंजारा जाति का उल्लेख है। इनके रहने का कोई निश्चित स्थान नहीं है। कुछ बंजारे अब एक गाँव आदि वाली स्थिति में रहने लगे हैं। उत्तर प्रदेश में उस स्थान को 'डेरा' तथा आंध्रप्रदेश/तेलंगाना में 'टांडा' कहते हैं। ये आदिवासी समाज में गिने जाते हैं। अर्थात् नामदेव ढसाल आदिवासियों को भी दलित मानते हैं जबकि वर्तमान में दलित तथा आदिवासी दोनों अलग-अलग बिन्दु पर हैं। दोनों की अलग-अलग स्थिति है।

बोध प्रश्न

- नामदेव ढ़साल के अनुसार दी गई दलित की परिभाषा को स्पष्ट करें

2.नारायण सुर्वे के अनुसार 'दलित शब्द की मिली-जुली कई परिभाषाएँ हैं। इसका अर्थ केवल बौद्ध या पिछड़ी जातियाँ ही नहीं हैं, समाज में जो भी पीड़ित है, वे सभी दलित हैं।'

नारायण सुर्वे की परिभाषा व्यापक दृष्टिकोण अपनाते हुए चलती है। यहाँ उन्होंने एक सीमा को तोड़ने का प्रयास किया है। वे 'बौद्ध या पिछड़ी जातियों' के अलावा जो हैं चाहे वे किसी भी समाज या धर्म के हों उन सभी को दलित की सीमा में सम्मिलित किया है।

बोध प्रश्न

- नाराय सुर्वे की दलित की परिभाषा को अपने शब्दों में स्पष्ट करें।

3.केशव मेश्राम के अनुसार- 'हजारों वर्ष जिन लोगों पर अत्याचार हुआ ऐसे अछूतों को दलित कहना चाहिए।'

केशव मेश्राम अछूतों को दलित मानने के पक्ष में हैं परन्तु अछूतपन आने के बाद ही कोई व्यक्ति अछूत बनता है। अपवित्र हो जाने पर लोग उससे दूर रहना बेहतर समझते हैं। प्रश्न यह है कि अछूत के पहले क्या शूद्र (दलित) नहीं थे? थे बिल्कुल थे तो मात्र अछूतों को ही दलित मानना न्यायसंगत नहीं है।

बोध प्रश्न

- केशव मेश्राम की परिभाषा को अपने शब्दों में समझाइए।

4.3.2 दलित शब्द के पर्यायवाची

दलित शब्द के पर्यायवाची शब्दों में शूद्र, अपवित्र, अस्पृश्य/अछूत, अन्त्यज, दास, आदि हिंदू, हरिजन आदि प्रमुख हैं। आगे दलित शब्द के विभिन्न पर्यायवाची शब्दों के साथ-साथ उनके प्रयोग पर भी विचार किया जाएगा।

(क) दास

आर्थिक रूप से कमजोर व्यक्ति को हर जगह समस्याओं का सामना करना पड़ता है। दास वास्तव में आर्थिक रूप से कमजोर व्यक्ति ही होता है। इसके लिए गुलाम शब्द का प्रयोग भी

किया जाता है। कुछ लोग नौकर शब्द को भी दास के ही अर्थ में स्वीकार करते हैं। इस्लामी व्यवस्था में भी गुलाम की चर्चा आती है। इस्लामी व्यवस्था में गुलामी की प्रथा (दास प्रथा) को समाप्त करने पर विशेष बल नहीं है अपितु गुलामों के साथ अच्छा व्यवहार करने पर बल दिया गया है। दास के पर्यायवाची के रूप में दस्यु शब्द का प्रयोग होता है। भीमराव अम्बेडकर ने लिखा है- 'ऋग्वेद में दास शब्द 54 बार और दस्यु शब्द 78 बार आया है।' आंग्ल भाषा में दास के लिए स्लेव (Slave) शब्द का प्रयोग किया जाता है। यह व्यवस्था भारत में ही नहीं बल्कि बाहर भी रही है। कृष्णदत्त पालीवाल लिखते हैं- 'दासों को यूरोप में 'स्लाव' कहा जाता है। यही 'स्लाव' इंग्लैंड में 'स्लेव' हो गया हो तो आश्चर्य क्या।'

बोध प्रश्न

- इस्लामी व्यवस्था में दासों (गुलामों) के संदर्भ में क्या बातें कही गई हैं? संक्षेप में बताएँ।

(ख) शूद्र

हिन्दू धर्म की वर्णव्यवस्था में चौथे क्रम पर आने वाला शूद्र कहलाता है। यथा-ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र। इसका काम अपने ऊपर के तीनों अर्थात ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य की सेवा करना था। रामशरण शर्मा का कथन है- 'मोटे तौर पर हम कह सकते हैं कि बहुत दिनों तक शूद्र शब्द का प्रयोग उन बहुविध मजदूर वर्गों के लिए सामूहिक रूप से किया जाता रहा, जो तीन उच्च वर्णों की ताबेदारी करते थे।' यह एक महत्वपूर्ण प्रश्न है कि 'शूद्र कौन थे?' स्वामी अछूतानंद बताते हैं आदि हिंदू (शूद्र या दलित) भारत के मूल निवासी हैं। जब आर्य लोग भारत आए तो यहाँ के मूल निवासियों ने आर्यों से युद्ध किया। आर्य छल-प्रपंच से विजयी हुए। यहाँ के मूल निवासियों को आर्य धर्म ग्रहण करने के लिए बाध्य किया गया। अछूतानंद कहते हैं- 'भाइयों हम लोग हिंद के आदि निवासी हैं .... जिन्होंने विवश हो आर्य धर्म ग्रहण कर लिया, 'शूद्र' कहकर समाज में रख लिया, जिन्होंने आर्य-धर्म स्वीकार नहीं किया और युद्ध में पकड़े गए, उन्हें नीचवृत्ति वाला 'अछूत' बनाया और जो भागकर जंगलों में चले गये, वे कोल, भील, संथाल, कंजड़, साँसी, गोंड, द्रविड, मुंडा, उराँव आदि अब तक मौजूद हैं, जिन्हें 'ट्राइबल रेस' या 'कबीला' कहा जाता है।'

बोध प्रश्न

- शूद्रों के संदर्भ में स्वामी अछूतानन्द के विचारों को अपने शब्दों में समझाइए।

(ग) अपवित्र

अपवित्र का सामान्य सा अर्थ है जो पवित्र न हो अर्थात् गंदा हो। अब कुछ वस्तुएँ या पदार्थ या जीव हैं जिनके स्पर्श मात्र से व्यक्ति अपवित्र हो जाता है। उसमें अपवित्रता आ जाती है। प्रो. दुरखीन का कथन है- 'पवित्र चीजें वे हैं जिनकी निषेधों द्वारा रक्षा होती है और जिन्हें 'निषेध' पृथक करते हैं, और 'लौकिक' चीजें वे हें जिन पर ये निषेध लागू हैं और जिन्हें पहली चीजों से दूर-दूर रहना ही चाहिए।' इस विषय में डॉ. अम्बेडकर लिखते हैं- 'अपवित्र का अस्तित्व धर्मसूत्रों के समय से आरंभ होता है जबकि छुआछूत बहुत बाद में 400 ई. से अस्तित्व में आई।' पहले अपवित्रता अल्पकालीन होती थी। कोई व्यक्ति अपवित्र हो गया तो उसे कुछ

पदार्थों या विधियों द्वारा पवित्र कर दिया जाता था। वर्तमान में भी कोई व्यक्ति कुछ समय के लिए अपवित्र हो सकता है जैसे रास्ते पर चलते हुए किसी व्यक्ति का पैर मानव मल में पड़ जाए तो वह व्यक्ति तुरंत अपवित्र हो जाता है। जब तक वह व्यक्ति पानी से अपने पैर को नहीं धोता या पानी तथा साबुन से अपने पैर नहीं धोता तब तक उस व्यक्ति को अपवित्र ही माना जाता है। अम्बेडकर लिखते हैं 'जीवन की जिन घटनाओं को आरंभिक मनुष्य 'अपवित्रता' का कारण मानता था, उनमें निम्नलिखित मुख्य थी - 1. जन्म 2. दीक्षा 3. बालिग होना 4. विवाह 5. संभोग 6. मृत्यु। बाबासाहेब ने लिखा है 'प्रारंभिक मनुष्य के लिए 'मृत्यु' सबसे अधिक 'अपवित्रता' का कारण थी। न केवल मृत देह किन्तु मृत व्यक्ति की वस्तुओं को लेना भी 'अपवित्र' होता था। औजारों और शास्त्रों को मृत व्यक्ति की देह के साथ अधिक संख्या में कब्र में गाड़ देने की प्रथा का भी यही तात्पर्य था, क्योंकि लोग उन वस्तुओं के उपयोग को खतरनाक तथा दुर्भाग्यपूर्ण समझते थे।'

बोध प्रश्न

- आरंभिक मनुष्य अपवित्रता के मुख्य क्या-क्या कारण मानता था?

(घ) अस्पृश्य / अछूत

अछूत का अर्थ है जिसे छुआ न जाए, जिसका स्पर्श न किया जाए अर्थात् अस्पृश्य। अस्पृश्य/अछूत को भले ही शूद्र के पर्यायवाची के रूप में प्रयोग किया जाता है परन्तु शूद्र तथा अस्पृश्य/अछूत में पर्याप्त अंतर है। रोमिला थापर ने लगभग 600-321 ई.पू. की स्थिति पर लिखते हुए कहा है- 'इस युग में शूद्रों से भी निम्न एक श्रेणी अस्तित्व में आई, जो अछूत कहलाते थे। वे संभवतया आदिवासी रहे होंगे, जो धीरे-धीरे आर्यों द्वारा नियंत्रित क्षेत्रों से दूर हटकर सीमाओं पर जा बसे, वहाँ वे आखेट और भोजन-संचय करके अपना जीवन-यापन करते थे। बताया जाता है कि उनकी अपनी निजी भाषा थी जो आर्यों की बोली से भिन्न थी। सरकंडों की बुनाई और शिकार जैसे उनके व्यवसाय बहुत नीची दृष्टि से देखे जाते थे।' भीमराव अम्बेडकर ने लिखा है- 'अस्पृश्य' शब्द का अर्थ है 'अछूत'। डॉ. सुखबीर सिंह लिखते हैं कि 'अछूतों का अस्तित्व 400 ई. के भी काफी बाद में हुआ जबकि अपवित्र की मान्यता काफी पहले से थी। अपवित्रता थोड़े समय तक रहती थी और जन्म-मृत्यु, मासिक धर्म आदि के अवसर पर ही पैदा होती थी। अपवित्रता का समय बीत जाने पर या 'पवित्रता' का संस्कार कर देने पर अपवित्रता नष्ट हो जाती थी... किन्तु अछूतपन इससे भिन्न है। यह स्थायी है। जो हिन्दू उनका स्पर्श करता है, वह तो स्नान आदि से पवित्र हो जाता है किन्तु ऐसी कोई चीज नहीं जो अछूत को पवित्र बना सके।' इस प्रकार अछूतपन प्रारंभ में सामान्य स्तर पर था। कुछ लोगों तक सीमित था, कालांतर में इसने स्थायी रूप धारण कर लिया।

बोध प्रश्न

- अछूत का अर्थ बताते हुए इसकी शुरुआत कब हुई इसे स्पष्ट कीजिए।

(ङ) अंत्यज

भीमराव अंबेडकर ने लिखा है- 'अन्त्यज' और 'अन्त्येवासिन' नाम हैं जो हिन्दू-शास्त्रों ने कुछ जातियों को दे रखे हैं। .... ये 'अंत' शब्द के मेल से बने हैं। अंत शब्द का अर्थ क्या है? पंडितों का

कहना है कि 'अंत' शब्द का अर्थ है 'अंत में उत्पन्न हुआ'। क्योंकि इस सिद्धांत के अनुसार तो 'शूद्र' अंत में पैदा हुए हैं।....मेरी समझ में 'अन्त्य' का मतलब सृष्टि का अंत नहीं, किन्तु गांव के अंत हैं। यह एक नाम है जो गांव की सीमा पर रहने वाले लोगों को दिया गया है। इस 'अन्त्य' शब्द का ऐतिहासिक महत्व है। यह बताता है कि एक समय था जब कुछ लोग गांव में रहते थे और कुछ लोग गांव के बाहर, गांव के 'अन्त्य' में रहते थे। वे अन्त्यज कहलाते थे।' विभिन्न धर्माचार्यों के मध्य अंत्यज को लेकर मतभेद अर्थात् किसी को मानना, किसी को न मानना इस अंतर का कारण दृष्टिकोण, काल, परिस्थिति, माता-पिता का वर्ण आदि हो सकता है।

बोध प्रश्न

- भीमराव अंबेडकर के अनुसार अंत्यज के विषय में विचार कीजिए।

(च) आदि हिन्दू

दलितों के लिए आदि हिन्दू शब्द का प्रयोग स्वामी अछूतानंद ने किया था। वे आदिहिंदू शब्द से दलितों को भारत का मूल निवासी सिद्ध कर रहे थे। सन् 1922 ई. में स्वामी जी ने इस शब्द की घोषणा की थी।

बोध प्रश्न

- आदि हिन्दू शब्द का प्रयोग किसने और क्यों किया?

(छ) हरिजन

दलित के पर्यायवाची के संदर्भ में आए हुए सभी शब्दों में 'हरिजन' सबसे विवादास्पद शब्द रहा है। हरिजन शब्द का अर्थ है 'हरि का जन' अर्थात् ईश्वर का जन। सामान्यत: लोग यह मानते और जानते हैं कि 'हरिजन' शब्द का प्रयोग गांधी जी ने किया परन्तु यह पूर्णत: सत्य नहीं है। गुजरात के भक्त कवि नरसी मेहता के एक भजन में यह शब्द आया था। उसी भजन से यह शब्द गांधी जी ने लिया था। इस बात की स्वीकारोक्ति स्वयं गांधी जी ने की है। गांधी जी ने कब और किस प्रकार 'हरिजन' शब्द का प्रयोग शुरू किया इस संबंध में वे बताते हैं। उन्होंने 'हरिजन सेवक' के प्रथम अंक (23/02/1933) ई. में छपे अपने 'हरिजन क्यों?' शीर्षक लेख में लिखा 'जिनको हम अछूत मानकर पाप करते हैं, उनको मैं 'हरिजन' क्यों कहता हूँ, ऐसा प्रश्न कई सज्जनों ने पूछा है। काठियावाड़ के एक अछूत भाई ने बरसों पहले मुझे लिखा था कि 'अन्त्यज, अछूत, अस्पृश्य नाम से उन भाइयों को दु:ख होता है। .... उसी भाई ने बताया कि अपने एक भजन में भक्त कवि नरसिंह मेहता ने अछूत भाइयों का उल्लेख 'हरिजन' नाम से किया था। ....मुझे 'हरिजन' नाम बहुत प्रिय जँचा। 'हरिजन' का अर्थ है - ईश्वर का भक्त, ईश्वर का प्यारा। ....अछूत भाइयों के लिए 'हरिजन' शब्द सर्वथा उपयुक्त है, ऐसा मेरा विश्वास है।' जहाँ तक हरिजन शब्द के प्रयोग का प्रश्न है तो हरिजन शब्द का प्रयोग संत कवि कबीरदास ने भी किया है।

'तीनि लोक टींडो भई उड़िया मन के साथ।
हरिजन हरिजाने बिना परे काल के हाथ।।'

ध्यान रखा जाना चाहिए नरसी/नरसिंह मेहता या कबीरदास दोनों ने धार्मिकता के संदर्भ में ही 'हरिजन' शब्द का प्रयोग किया है। गाँधी जी द्वारा प्रयोग किये जा रहे इस शब्द का

दलितों द्वारा जबर्दस्त प्रतिकार हुआ। बाबासाहेब, स्वामी अछूतानंद 'हरिहर' आदि ने हरिजन शब्द का खुलकर विरोध किया। स्वामी अछूतानंद ने सीधा प्रश्न उठाया और 'आदि हिंदू' नामक पत्र में लिखा कि 'हम अगर 'हरिजन' हैं तो द्विज कौन जन हैं?' गांधी जी के समय का पढ़ा लिखा दलित समाज भले ही 'हरिजन' शब्द का विरोध कर रहा था परन्तु ग्रामीण समुदाय इस शब्द को स्वीकार कर चुका था। सामान्य बातचीत में आज भी पुरानी पीढ़ी के लोग 'हरिजन' शब्द का प्रयोग करते हैं।

बोध प्रश्न

- हरिजन शब्द के अत्यधिक विरोध के क्या कारण थे?

4.3.4 हिंदी दलित कविता की भाषा एवं शैली

(क) भाषा- भाषा शब्द संस्कृत की ' -धातु से बना है जिसका अर्थ है 'भाष्'बोलना' या । 'कहना' तात्पर्य यह है कि जिसके माध्यम से बोला या कहा जाए या विचारों की अभिव्यक्ति की जाए वह भाषा है। विभिन्न विद्वानों ने भाषा को परिभाषित करने का प्रयास किया है।

1. डॉ. बाबूराम सक्सेनाके अनुसार- 'जिन ध्वनि चिन्हों द्वारा मनुष्य परस्पर विचार विनिमय करता है, उसको समष्टि रूप से भाषा कहते हैं।'

इस परिभाषा में मौखिक तथा लिखित दोनों बिंदुओं को शामिल किया गया है।

2. पं. कामता प्रसाद गुरु के अनुसार- 'भाषा वह साधन है जिसके द्वारा मनुष्य अपने विचार दूसरों पर भली-भांति प्रकट कर सकता है और दूसरों के विचार आप स्पष्टतया समझ सकता है।'

यहां विचारों को ग्रहण करने की बात कही गई है। इसमें एक महत्वपूर्ण बिंदु यह है कि यहां विचार अभिव्यक्त करने वाला (वक्ता) तथा विचार ग्रहण करने वाला (श्रोता) दोनों को उस भाषा का ज्ञान होना चाहिए जिस भाषा में वक्ता तथा श्रोता बात कर रहे हैं।

3. स्वीट के अनुसार- 'ध्वन्यात्मक शब्दों द्वारा विचारों को प्रकट करना ही भाषा है।'

यहाँ भाषा के मौखिक रूप पर ही विशेष जोर दिया गया है। कोई भी भाषा हो उसमें अन्य विभिन्न भाषाओं के शब्द आकर मिल गए हैं और व्यवहृत हो रहे हैं। इसके विभिन्न कारण हो सकते हैं। उन कारणों की जांच पड़ताल करने का यहां अवकाश नहीं है। अब हिंदी भाषा को ही ले लीजिए। हिंदी का मूल उद्भव संस्कृत से हुआ है। आज हिंदी में विभिन्न बोलियों और भाषाओं के शब्द प्रयोग किए जा रहे हैं। हिंदी में संस्कृत, उर्दू, अरबी, फ़ारसी, तुर्की, अंग्रेज़ी आदि भाषाओं के शब्द व्यवहृत हो रहे हैं।

बोध प्रश्न

- कामता प्रसाद गुरु की भाषा की परिभाषा को समझाइए।
- भाषा के संबंध में अपने विचार प्रकट कीजिए।

(ख) शैली- शैली का सामान्य सा अर्थ है- ढंग, तरीका, सलीका। अंग्रेजी में इसे 'स्टाइल' कहते हैं। किसी भी बात को कहने या लिखित रूप में अभिव्यक्त करने का एक अच्छा सा ढंग या तरीका होता है। हमें उसी अच्छे ढंग या तरीके को अपनाना चाहिए। रामचंद्र वर्मा लिखते हैं 'बोलने या

लिखने का यही अच्छा और खास ढंग शैली कहलाता है।' अंग्रेजी में स्टाइल (Style) शब्द शैली के पर्यायवाची के रूप में प्रयुक्त होता है। इसी विषय में भोलानाथ तिवारी ने बताया है ' 'स्टाइल' शब्द, भारोपीय परिवार की भाषाओं में, अपने मूल रूप में काफी पुराना है। अवेस्ता में 'स्तएर' (Staera = पर्वत शीर्ष), ग्रीक में 'स्ताइलोस' (Stylos = स्तम्भ) तथा लैटिन में 'स्ताइलूस' (Stilus) आदि रूपों में इसे देखा जा सकता है।' लैटिन भाषा का शब्द 'स्ताइलूस' का प्रयोग पहले पत्थर, हड्डी अथवा धातु से बनी एक कलम (लेखनी) के लिए किया जाता था। इसी लेखनी से मोमचढ़ी टिक्कियों पर लिखते थे। भोलानाथ तिवारी ने बताया है 'पहले तो इस शब्द का प्रयोग लेखन के विभिन्न 'ढंगों' तथा प्रकारों के लिए होने लगा और फिर 'भाषिक अभिव्यक्ति' (लिखित अथवा मौखिक) के ढंग के लिए यह प्रयुक्त होने लगा। अंग्रेजी, फ्रांसीसी, रूसी आदि अधिकांश यूरोपीय भाषाओं में यह लैटिन शब्द ही स्टाइल, स्ताइल, स्तील आदि विभिन्न रूपों में शैली के लिए प्रयुक्त होता है।'

बोध प्रश्न

- शैली के विषय में भोलानाथ तिवारी ने क्या बताया है?

शैली भी विभिन्न प्रकार की होती है जैसे-वर्णनात्मक शैली, मनोविश्लेषणात्मक शैली, व्यंग्यात्मक शैली, प्रतीकात्मक शैली, संबोधनात्मक शैली, सूचनात्मक शैली, पूर्वदीप्ति शैली (फ्लैशबैक शैली) आदि।

(ग) हिंदी दलित कविता की भाषा एवं शैली : आलोचनात्मक दृष्टि

हिंदी साहित्य में वर्तमान दौर विमर्शों का दौर है। वर्तमान में विविध विमर्शों को दृष्टिगत रखते हुए साहित्य सृजन हो रहा है। जब दलित साहित्य की चर्चा शुरू हुई तो उसका विरोध भी शुरू हुआ। तर्क वितर्क हुए, खेमे आदि बने। बड़े और मानिंद साहित्यकार और आलोचक मैदान में उतर गए। इनमें नामवर सिंह और राजेन्द्र यादव, चौथीराम यादव आदि जैसे साहित्यकारों का नाम लिया जा सकता है। चर्चा इसकी पूर्वपीठिका तक पहुंची। दलित कविता की पूर्व पीठिका को आदिकाल में सिद्ध और नाथ साहित्य से स्वीकार किया जाना चाहिए। वर्तमान के दलित साहित्यकार जिस ब्राह्मणवादी सोच, ऊंच नीच, जातिगत भेदभाव, छुआछूत, शास्त्रों की पुरातन मान्यताओं आदि का विरोध करते हैं। उनकी चर्चा वहाँ भी मिलती है, हाँ यह अवश्य है कि रूप अवश्य ही अलग है। सिद्ध सरहपा कहते हैं –

पंडिअ सअल सत्य बक्खाणअ
देहहि बुद्ध वसंत ण जाणअ

यहाँ उन ब्राह्मणों (पंडितों) का खंडन है। जो महायानी पंडित हैं। जो शास्त्रों में ही बुद्ध का बखान करते हैं अपने अंदर के बुद्ध को नहीं पहचानते हैं। नाथों की बात करें तो गोरखनाथ जी वेद- शास्त्रों के विरोधी हैं। वे कहते हैं

सबद हमारा षडतर षाडा रहणि हमारी सांची।
लेषे लिपि न कागद माड़ी, सो पत्री हम बाँची .।

अर्थात हमारे शब्द खरे हैं। हमारी रहनी सच्ची है। हम कागद की लिखी पत्री को नहीं बाँचते हैं।

इसी तरह भक्तिकाल में कबीर, रविदास, नानक और सूफियों के यहाँ भी समाज को सुधारने के प्रयास दिखते हैं।

कबीर भेद भाव का खंडन तार्किकता के साथ करते हैं।

एक बूंद एके मलमूतर एक चाम एक गूदा।
एक जाति तें सब उपजाना को बामन को सूदा

इसी तरह से रविदास जी भी जाति-पाँति का विरोध करते हुए लिखा-

जन्म जात मत पूछिए, का जात अरु पात
रविदास पूत सबके, कोउ नहिं जात कुजात ॥

रविदास कितनी तार्किकता के साथ अपनी बात रखते हैं और कहते हैं भले ही किसी ने ब्राह्मण के रूप में जन्म लिया है। यदि उसके अंदर अच्छे गुण नहीं हैं तो उसकी पूजा नहीं करनी चाहिए। यदि कोई गुणवान है भले ही वह चांडाल जाति का क्यों न हो उसकी पूजा होनी चाहिए।

रैदास वामन मत पूजिए जो होवे गुणहीन।
पाँव पूज चांडाल के जो होवे ज्ञान प्रवीन ॥

इसी तरह से गुरुनानक भी भेदभाव को खत्म कर समानता लाने पर बल देते हैं। दलित साहित्य के संदर्भ सूफियों की चर्चा बहुत कम या न के बराबर होती है जबकि सूफियों ने सबके साथ समानता का व्यवहार किया। ओमप्रकाश वाल्मीकि ने सत्य ही लिखा है 'हिन्दू धर्म सत्ता के दमन चक्र पर इस्लामिक आक्रमण ने भी अंकुश लगाया था। इसीलिए इस काल में शूद्रों, अति शूद्रों के प्रवक्ता, कलाकार कवि बुद्धिजीवी परिदृश्य पर उभर सके।'।

बोध प्रश्न

- रैदास ने किसकी पूजा करने और किसकी नहीं करने की बात कही है?
- दलित कविता की पूर्वपीठिका पर विचार कीजिए।

दलित कविता के संदर्भ में सहानुभूति और स्वानुभूति का मुद्दा भी बहुत गंभीर है। हिंदी कविता के क्षेत्र में कई ऐसे कवि हुए हैं जिनका जन्म ऐसे समाज या ऐसी जाति में हुआ है। जिसपर अस्पृश्यता का नियम लागू नहीं हुआ। लेकिन कवि तो कवि होता है। वह अपनी अनुभूति के आधार पर भी दलितों की समस्याओं पर लिखा करता था। इन साहित्यकारों में नागार्जुन, मैथिलीशरण गुप्त, निराला, दिनकर, धूमिल, राजेश जोशी, रामनाथ सिंह (अदम गोंडवी) आदि। वर्तमान में इनकी रचनाओं का दलित के संदर्भ में सम्मान तो होता है लेकिन इनकी कविता को जिसमें समाज के निचले तबके का चित्र है उसे दलित कविता नहीं माना जाता।

ऐसे कवि जिनका जन्म ऐसे समाज या जाति में हुआ जिनको सामाजिक रूप से नीचा समझा गया। उनके साथ छुआछूत का व्यवहार हुआ। उन्होंने अपनी अनुभूति को काव्य के माध्यम से सबके सामने प्रस्तुत किया तो उसे दलित कविता कहा गया। इन कवियों में

अछूतानन्द, हीरा डोम, बिहारी लाल 'हरित', मनोज सोनकर, सोहनपाल सुमनाक्षर, ओमप्रकाश वाल्मीकि, सूरजपाल चौहान, सुशीला टाकभौरे, माता प्रसाद, जयप्रकाश कर्दम आदि प्रमुख हैं। इन कवियों की भाषा और शैली पर आलोचकों द्वारा बराबर प्रहार किया जाता रहा है। 'इनकी शब्दावली गंदी है', 'ये गली गलौच की भाषा का प्रयोग करते हैं', 'ये लोग अलगाववादी सोच रखते हैं', 'साहित्य में आरक्षण चाहते हैं', 'इनकी कविताओं में प्रतीक और बिम्ब ठीक नहीं हैं', 'इनकी शैली में उग्रता है', 'ये हमेशा लड़ाई की भाषा का प्रयोग करते हैं' आदि, आदि। इस तरह के बहुत सारे प्रश्न दलित कवियों और दलित कविता के सामने रखे गए। दलित साहित्यकारों ने इसका उत्तर भी दिया। धीरे-धीरे कई सवर्ण आलोचक भी दलित कविता के पक्षधर हुए।

बोध प्रश्न

- दलित कविता के संदर्भ में सहानुभूति और स्वानुभूति पर चर्चा कीजिए।
- दलित कवियों और उनकी कविता पर लगने वाले आरोपों पर प्रकाश डालिए

आधुनिक काल में दलित कविता का प्रारंभ हीराडोम की कविता 'अछूत की शिकायत' से स्वीकार किया जाता है। यह कविता भोजपुरी भाषा में सरस्वती पत्रिका (संपादक- आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी) में 1914 में प्रकाशित हुई थी। कविता देखें-

हमनी के इनरा के निगिचे न जाइले जां
पांके में से भरि भरि पियतानी पानी
पनहीं से पीटि पीटि हाथ गोड तुरि दइलें
हमनी के एतनी काही के हलकानी

इसी तरह से स्वामी अछूतानन्द ने कहा –

इन लुटेरों के चक्कर में तुम मत पड़ो
कायदे की लड़ाई है, डटकर लड़ो।

मनुस्मृति का विरोध करते हुए लिखते हैं-

निशिदिन मनुस्मृति ये हमको जला रही है
ऊपर न उठने देती, नीचे गिरा रही है।

इसी तरह बुद्ध संघ प्रेमी कहते हैं

नहाए धोय पूजा करे, माथे तिलक लगाय।
मंदिर अंदर बैठ के, घंटा शंख बजाय।
घंटा शंख बजाय, गीत ईश्वर के गाता।
पशु को कहता शुद्ध, मनुष को नीच बताता ॥

डॉ. धर्मवीर कहते हैं कि हमारी निगाह में तो सारा समाज अपराधी है। तभी तो वे लिखते हैं

क्या बताएँ कि दुख किस बात का है।
शूद्र के न्यायालय में सारा समाज अपराधी है।

बोध प्रश्न

- 'अछूत की शिकायत' कविता के विषय में लिखिए

हिंदी दलित साहित्य में ओम प्रकाश वाल्मीकि एक लीजेंडरी शख्सियत हैं। उनके साहित्य में अपशब्दों का प्रयोग बहुत अधिक दिखाई पड़ता है। जाति व्यवस्था ने दलित समाज का बड़ा शोषण किया है। इसीलिए सभी दलित साहित्यकारों के यहाँ जाति व्यवस्था का जबरदस्त विरोध है। ओमप्रकाश वाल्मीकि इस जाति व्यवस्था का विरोध करते हुए लिखते हैं-

अंबेडकर की आदमकद मूर्ति के पास
बैठा मोची चीखता है ऊंची आवाज में
किस हरामजादे की देन है यह जाति।

यहाँ 'हरामज़ादे' शब्द को अपशब्द की श्रेणी में स्वीकार किया जाता है। मुख्य धारा के साहित्यकार और आलोचक साहित्य में कलात्मकता आदि के नाम पर दलित साहित्य को खारिज करने की फिराक में रहते हैं। सूरजपाल चौहान ने सत्य ही लिखा है-

कलात्मकता की दुहाई देकर
क्यों?
मेरी कलम की स्याही
पोंछना चाहते हो

इसी तरह से कँवल भारती की ये पंक्तियाँ प्राचीन काल में घटित घटना को सामने रखती हैं –

शंबूक .... तुम्हारी हत्या
दलित चेतना की हत्या थी।

बुद्धशरण 'हंस' की ये पंक्तियाँ अपने इतिहास पर गर्वित होने वालों के गाल पर जबरदस्त तमाचा हैं –

जब तुम राम का नाम लेते हो,
मुझे शंबूक का
कटा सिर दिखने लगता है।

ऊके की कविता का आक्रोश इतना है कि वे कपटी गुरु द्रोणाचार्य की ज़बान काट लेने की बात करते हैं-

मैं एकलव्य होता
तो गुरु दक्षिणा में
अंगूठा मांगने वाले
गुरु की ज़बान काट लेता

दलित कवियों की कविता पर सवालिया निशान लगाया जाता है कि उन्हें काव्यशास्त्र की जानकारी ही नहीं है। इसीलिए उनके यहाँ अलंकार आदि का उचित प्रयोग नहीं है। स्वर्ण सिंह लिखते हैं-

मैं लिखना नहीं जानता, अलंकार के भेद

मैं वही लिखता हूँ जिसे लिख नहीं पाए वेद

बोध प्रश्न

- दलित कविता में शंबूक और एकलव्य को किस तरह से प्रस्तुत करने का प्रयास किया जाता है ?

जयप्रकाश कर्दम आशावादी दृष्टिकोण रखते हुए संघर्ष करने की बात करते हैं-

हमें जातिवाद को ध्वस्त करना है
XX XX XX
तो मैदान में उतरकर
दो-दो हाथ करने पड़ेंगे

दलित साहित्य के अंदर दलित स्त्री की भी चर्चा होती है। दलित स्त्री, एक ब्राह्मण स्त्री, एक क्षत्रिय स्त्री से अधिक शोषित है। कारण यह है कि एक तो वह दलित है फिर स्त्री भी है। उसके तो दोनों गालों पर तमाचे हैं। सुशीला टाकभौरे लिखती हैं-

उपेक्षा की ठंडक और
आक्रोश के तेजाब से
नारी व्यक्तित्व को
हमेशा रौंदा जाता है।

दलित कविता के संदर्भ में डॉ. एन सिंह लिखते हैं 'हिंदी की समकालीन दलित कविता अपने दर्द भरे अतीत को आज के समय संदर्भों में रखकर विश्लेषित कर रही है जो भविष्य की राह को हमवार करने का प्रयास ही है।' एक बात अवश्य ही विचारणीय है कि दलितों की कविताओं में एक ही तरह की बात दिखती है। तो इसका जवाब यह है कि तुलसीदास एक तरह की कथा (रामकथा) को कई किताबों में प्रस्तुत करके इतने बड़े कवि बन गए। तो यदि दलित साहित्यकार एक ही तरह की संवेदना अभिव्यक्त कर रहे हैं तो क्या दिक्कत है? उनके आसपास का समाज ही ऐसा रहा है तो उस तरह की बात तो आएगी ही।

विभिन्न आलोचकों ने दलित साहित्य की भाषा पर प्रश्न चिन्ह लगाया है। दलित साहित्य की भाषागत आलोचना की गई है और यह कहा गया है कि दलित साहित्य की भाषा अपशब्दों (गालियों) से भरी है। इनमें अपशब्दों का अत्यधिक प्रयोग होता है। प्रश्न यह है कि आखिर अपशब्द आए क्यों हैं? क्या इस प्रश्न का उत्तर नहीं ढूंढा जाना चाहिए? व्यक्ति जिस समाज में रहता है उस समाज का प्रभाव उसके व्यक्तित्व पर पड़ता है। ध्यान रखा जाना चाहिए कि दलित साहित्यकारों के आस-पास का समाज अपशब्दों से भरा रहा है। उन्हें सदा हिकारत की नज़र (हेय दृष्टि) से देखा गया है। उनका नाम भी ठीक से नहीं लिया जाता था। सदैव हेयता प्रदर्शित करने वाले भाव से ही उनका नाम लिया जाता रहा है। उच्चवर्णीय तथा उच्चवर्गीय लोगों ने सदैव अपमानित ही किया है। शायद ही कभी उन्हें सम्मान की नजर से देखा गया हो। जब सदैव उनके साथ अपशब्दों का प्रयोग किया जाता रहा, अपमानित किया जाता रहा तो उनके लेखन में अपशब्दों का प्रयोग स्वाभाविक है। फिर व्यक्ति भले ही आर्थिक या सामाजिक रूप से कमजोर

हो, उसे उच्चवर्णीय या उच्चवर्गीय लोग जब अपमानित करते हैं तो उसे क्रोध अवश्ये आता है। भले ही सब के सम्मुख अपने आक्रोश व क्रोध को अभिव्यक्त न करे परंतु पीठ पीछे तो करता ही है। वह पीठ पीछे अपशब्द भी कहता है। इसका कारण क्रोध और आक्रोश है। आज जब बाबा साहेब डॉ. भीमराव अंबेडकर के द्वारा निर्मित संविधान से उसे अधिकार मिल रहे हैं तो अब वह अपनी अभिव्यक्ति सब के सम्मुख आक्रोश व क्रोध के साथ कर रहा है। इस क्रोध व आक्रोश के साथ अपशब्द भी आ गए हैं, आ जा रहे हैं।

बोध प्रश्न

- दलित साहित्य में अपशब्द आने का क्या कारण है ?

दलित साहित्य में विभिन्न विधाएं हैं यथा कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक, आलोचना आदि। हर जगह अपशब्दों के प्रयोग पर आपत्ति की जाती है। यहां यह अवश्य ही ध्यान में रखा जाना चाहिए कि ये कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक, आलोचना ही है जिसने 'दलित साहित्य' को एक प्रमुख धारा के रूप में पहचान दिलाई है। इस संबंध में चंद्रेश्वर कर्ण लिखते हैं ' 'दलित कविता विरोध और नकार की ही कविता नहीं वह आदमी की पहचान की भी कविता है। एक दलित कवि के लिए 'कविता कार्बन डाइऑक्साइड के विरुद्ध ऑक्सीजन के लिए युद्धरत हथियार है।' यह अंधेरे के लिए अग्नि चुरा लाने की प्रक्रिया है। दलित कवि कविता के लिए कविता नहीं लिखता। कविता मुक्त करती है। वह इसी मुक्ति के लिए कविता लिखता है। उसकी सांसों पर जो कर्ज़ है, दबाव है उसी को उतारने का वायस है कविता। यह कविता एकांत में रोने के बजाय चीखने और प्रतिकार करने का विश्वास है।' चंदेश्वर कर्ण जी के कथन से ही दलित कवि के लिए कविता की महत्ता का अनुमान लगाया जा सकता है।

दलित कविता की भाषा पर चंदेश्वर कर्ण ने बड़ी ही सटीक टिप्पणी की है। वे लिखते हैं 'हिंदी दलित कवियों की काव्यभाषा और शिल्प-विधान पर चर्चा करने का अभी समय नहीं आया है। अभी तो धारा पहाड़ से उतर रही है पूरे आवेग से। बाढ़ की स्थिति है- पानी मटमैला है। यह उद्दाम प्रवहनशीलता की पहचान है। यह सब कुछ बहाकर ले जाएगी अपने साथ तब सड़ेगी, गलेगी, फिर थिराएगी, मिट्टी नीचे बैठेगी, नयी उर्वराशक्ति आएगी, नया जीवन रूप लेगा। तब कविता की रूप-रचना की चिंता करने का समय आएगा। अभी तो हाहाकार कविता की भूमिका में है।' इस विषय में हमारा कहना है कि हम चंदरेश्वर कर्ण की बात से पूरी तरह सहमत नहीं हैं क्योंकि यह कह देना की चर्चा करने का अभी समय नहीं आया है, अपने कार्यटव्यों से मुंह मोड़ना है। हमें यह ध्यान में रखना चाहिए कि हिंदी में आधुनिक दलित साहित्य का प्रारंभ 1970 के आसपास होता है। तबसे लेकर अबतक काफी अरसा गुजर चुका है। क्या अब भी यह कहना उचित है कि चर्चा करने का अभी समय नहीं आया है। शुरुआती दिनों में आक्रोश और क्रोध अधिक है। इस वजह से अपशब्दों के प्रयोग दिखते हैं परंतु धीरे-धीरे समय

बदल रहा है और अब अपशब्दों का प्रयोग बिल्कुल न के बराबर हो रहा है। जो अपशब्द आए भी हैं वे क्रोध और आक्रोश के कारण आए हैं।

बोध प्रश्न

- दलित कविता के संदर्भ में चंद्रेश्वर कर्ण की बात पर अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

यहाँ हम जयप्रकाश कर्दम की कविताओं की भाषा पर ही उदाहरण स्वरूप विचार कर लेते हैं। जहां तक भाषा का प्रश्न है तो उनके (जय प्रकाश कर्दम) साहित्य में भी अपशब्दों का प्रयोग हुआ है परंतु बहुत ही कम या न के बराबर। उनके कविता संग्रह 'गूंगा नहीं था मैं' (1997) में 'हरामजादे' शब्द आया है। यहाँ यह भी ध्यान देने योग्य है कि केवल एक बार ही पूरे कविता संग्रह में यह शब्द आया है। छप्पर (उपन्यास) (1994) में 'साले', 'हरामजादे' शब्द आया है परंतु यह भी महत्वपूर्ण बिन्दु है कि बाद की रचनाओं में अपशब्द बिल्कुल भी नहीं आए हैं। उनके कविता संग्रह 'तिनका-तिनका आग' (2004) में 'मैं बनारस जाऊंगा' शीर्षक कविता में अपशब्दों के प्रयोग का पूरा अवसर था लेकिन वहाँ पूरे कविता संग्रह में कहीं भी अपशब्द नहीं आया है। वहाँ तो यह कहा जा रहा है कि -

जीवन संभावनाओं से भरा है,
संभावनाओं को सत्य बनूँगा,
मैं बनारस जाऊंगा।

इसी प्रकार उनका कविता संग्रह 'बस्तियों से बाहर' (2013) में कहीं भी अपशब्द का प्रयोग नहीं हुआ है। 'चबूतरा' शीर्षक कविता में तो वे किशोरी के साथ चबूतरे पर बैठे हैं। यह वही किशोरी है जो अपमानजनक टिप्पणी किया करता था। यहाँ वे चाहते तो उसको गली दे सकते थे परंतु उन्होंने ऐसा नहीं किया। वे लिखते हैं-

एक दिन इसी चबूतरे पर
मेरे पास आकार बैठ था किशोरी
लेने को मुझसे सलाह
अपने बेटे की पढ़ाई के बारे में

उनकी नवीन पुस्तकें जिनका प्रथम संस्करण 2018 ईस्वी में प्रकाशित है। इसमें अपशब्दों का प्रयोग नहीं दिखता है। दलित साहित्य में अपशब्दों के प्रयोग पर जयकाश कर्दम अपने विचार अभिव्यक्त करते हुए लिखते हैं 'इसमें दो राय नहीं है कि दलित लेखकों का मन आक्रोश से भरा है। इसलिए उनकी अभिव्यक्ति में तीखापन होना स्वाभाविक है। यह तीखापन विचारों के स्तर पर ही नहीं कहीं-कहीं भाषा के स्तर पर भी मौजूद है, किन्तु उसे गाली की भाषा नहीं कहा जा सकता। गाली देने की नियत से गाली का प्रयोग करना भाषा की अशिष्टता या अश्लीलता हो सकती है किन्तु आक्रोश के कारण सहज रूप से ऐसे शब्दों के आ जाने को गाली नहीं कहा जा सकता। अपवाद स्वरूप एक दो उदाहरण ऐसे मिल सकते हैं जहां पर अनावश्यक रूप से तीखे या गाली या समान शब्दों का प्रयोग हुआ है किन्तु उसे दलित साहित्य की प्रवृत्ति या चरित्र नहीं माना जाना चाहिए। इन अपवादों के आधार पर सम्पूर्ण दलित साहित्य की भाषा को अश्लील या गाली गलौच की भाषा कहा जाना उचित नहीं होगा। ऐसे उदाहरण हर जगह मिल जाएंगे।'

बोध प्रश्न

- दलित साहित्य की भाषा के संदर्भ में जयप्रकाश कर्दम के विचार को समझाइए।

यहाँ जयप्रकाश कर्दम के इस वाक्य 'ऐसे उदाहरण हर जगह मिल जाएंगे' में बड़ी गहरी बात छिपी हुई है। वे कुछ इशारा कर रहे हैं। वे कुछ बताना चाह रहे हैं। इशारों-इशारों में कही गई उनकी बात को हमने शब्द देने का प्रयास किया है। जो आलोचक दलित साहित्यकारों की भाषा में अपशब्दों के प्रयोग की शिकायत करते हैं क्या उन्हें पंडित सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' की कविता 'कुकुरमुत्ता' याद नहीं हैं। उसमें 'अबे' शब्द आया है। 'बे' शब्द आया है यथा-

अबे सुन बे गुलाब

सिर्फ यही नहीं इसी 'कुकुरमुत्ता' कविता में 'हरामी' शब्द भी आया है। क्या 'अबे', 'बे' तथा 'हरामी' शब्द अपशब्द की श्रेणी में नहीं आते? क्या 'हरामी' तथा 'हरामजादे' शब्द एक ही स्तर के नहीं हैं। पंडित सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' लिखते हैं-

तू हरामी खानदानी

इसी तरह की शब्दावली रामनाथ सिंह उर्फ अदम गोंडवी ने भी प्रयोग की है। वे कहते हैं-

जितने हराम खोर थे कुरबो जवार में,
परधान बनके आ गए अगली कतार में।

क्या 'हरामखोर' शब्द को अपशब्द की श्रेणी में नहीं रखा जाना चाहिए। इसी प्रकार मुक्तिबोध के यहाँ भी 'साले' शब्द का प्रयोग हुआ है। 'अंधेरे में' कविता में वे लिखते हैं-

मारो गोली दागो स्सालों को एकदम

यहाँ मुक्तिबोध इस प्रकार की शब्दावली का प्रयोग आक्रोश -क्रोध के कारण ही कर कर रहे हैं। उनकी रचना 'भारत : इतिहास और संस्कृति' पर प्रतिबंध लगा था। वे उस स्थिति में अत्यंत दुखी व परेशान थे। यह विचारणीय बिन्दु है कि मुक्तिबोध की एक पुस्तक प्रतिबंधित होने पर वे अत्यधिक दुखी और क्रोधित होते हैं और इस प्रकार की शब्दावली का प्रयोग करते हैं, तो दलितों का शोषण तो सालों साल से हो रहा है। क्या वे आक्रोशित नहीं होंगे? क्या उन्हें आक्रोशित नहीं होना चाहिए? क्या उनके पास क्रोधित होने का अधिकार नहीं है? इसी प्रकार मुक्तिबोध के यहाँ 'पेल' और 'नपुंसक' शब्द भी आया है, जो अपशब्द की ही श्रेणी में आता है। वे लिखते हैं-

'रास्ते पर भाग-दौड़ धका पेल !!'

इसी प्रकार नपुंसक शब्द का प्रयोग भी द्रष्टव्य है-

नपुंसक भोग-शिरा जालों में उलझे

X x x x x x

नपुंसक श्रद्धा
सड़क के नीचे की गटर में छिप गई।

बोध प्रश्न

- मुक्तिबोध की कविता में अपशब्द आने के क्या कारण हैं?

जो लोग दलित साहित्यकार के साहित्य में गालियों/अपशब्दों के आने पर नाक- भौ सिकोड़ते हैं। उन्हें सूर्य नारायण रणसुभे के कथन पर ध्यान देने की आवश्यकता है। सूर्यनारायण रणसुभे

लिखते हैं 'हमारे यहाँ अगर किसी सवर्ण की रचना में कुछ अश्लील शब्दों का प्रयोग हो तो वह जायज है और दलित की रचना में ऐसे शब्द अनायास आ जाएँ तो अश्लील। यहाँ निरंतर दोहरे मानदंडों का प्रयोग किया जाता है।' यहाँ अनायास शब्द खटक रहा है परंतु दोहरा मानदंड अपनाया जाता है। यह सौ प्रतिशत सही है।

इसी प्रकार फणीश्वरनाथ 'रेणु', राही मासूम रज़ा आदि की रचनाओं में भी अपशब्दों का प्रयोग हुआ है। हम इस तरह का तर्क रखकर यह कदापि नहीं कहना चाहते की साहित्य में अपशब्दों का प्रयोग होना चाहिए। 'निराला', 'अदम गोंडवी', 'मुक्तिबोध', आदि के साहित्य में आए हुए शब्द आक्रोश और क्रोध के कारण आए हैं। तो विचार कीजिए कि जिसका तथा जिसके पूर्वजों का शोषण सदैव के लिए होता रहा है। क्या वह आक्रोशि नहीं होगा? होगा अवश्य होगा। इसलिए दलित साहित्यकारों के यहाँ आए हुए अपशब्द क्रोध और आक्रोश के कारण आए हुए हैं। इसलिए मूल्यांकन करते समय एकांगी दृष्टिकोण अपना कर विचार नहीं करना चाहिए। यह सुखद भी है कि दलित साहित्यकारों के साहित्य में अपशब्दों का प्रयोग नगण्य होता जा रहा है। इसी तरह से दलित कविताओं में वर्णनात्मक शैली, मनोविश्लेषणात्मक शैली, भावात्मक, प्रतीकात्मक, संबोधनात्मक, पूर्वदीप्ति आदि शैलियों का प्रयोग किया जाता है।

दलित कविता के विषय और शिल्प को दृष्टिगत रखते हुए डॉ. एन सिंह लिखते हैं- 'हिंदी दलित कविता की नित नई संभावनाएँ खुल रही हैं। लेकिन उसकी कुछ सीमाएँ भी स्पष्ट होती जा रही हैं, जैसे प्रत्येक दलित कवि लगभग एक ही प्रकार की संवेदनाओं को अभिव्यक्ति दे रहा है। इस पुनरावृत्ति का कारण संभवतः सभी कवियों का एक ही प्रकार की स्थितियों और अनुभवों से गुजरना है। सच मायने में दलित कविता अपमानित पीढ़ियों की कोख से जन्मी है। बावजूद इसके दलित कवियों की कविताएँ आत्माख्यान से निकलकर अपने शिल्प को निरंतर निखारने का प्रयास कर रही है। वह अब विकास की प्रारम्भिक सीढ़ियाँ पार कर चुकी हैं।'

4.4 पाठसार

प्रिय विद्यार्थियो ! इस तरह से हम देखते हैं कि दलित शब्द का अर्थ शोषित, पीड़ित, मर्दित आदि होता है। उस पर अस्पृश्यता का नियम भी लागू किया गया है। उसके शोषण के कई कारण हैं। समय-समय पर विभिन्न तरीके से उसका शोषण किया गया है। कभी शस्त्र द्वारा और कभी शास्त्र द्वारा उसके शोषण का चक्र चलता रहा है। दलित के लिए समय-समय पर कई शब्दों का प्रयोग होता रहा है। उसे कभी दास, कभी शूद्र, कभी अपवित्र/अछूत, कभी अंत्यज, कभी आदि हिन्दू, कभी हरिजन कहा गया। इन सबमें सबसे अधिक विवादास्पद शब्द हरिजन ही रहा है। वर्तमान में दलित शब्द का प्रयोग होता है।

दलित कविता की पूर्व पीठिका आदिकाल में सिद्धों और नाथों तक जाती है। भक्तिकाल के कवियों कबीर, रविदास, नानक, व सूफियों ने अपनी रचनाओं में दलितों की समस्याओं जैसे- छुआछूत, जाति-पाँति, आदि पर विचार किया है।वर्तमान में ठीक तरीके से दलित कविता की चर्चा होती है। जब इसपर बात होती है तो इसकी भाषा और शैली पर भी चर्चा की जाती है। कई सारे आरोप प्रत्यारोप भी लगाए जाते रहे हैं। दलित कविता में अपशब्दों के प्रयोग, प्रतीक,

बिम्ब आदि पर भी प्रश्न चिह्न लगाया जाता रहा है। उसका जवाब भी दिया गया है। वर्तमान में दलित कविता कविता साफ सुथरी तथा अपनी समस्याओं के समाधान के लिए संघर्षरत है।

4.5 पाठ की उपलब्धियां

इस इकाई के अध्ययन से हमें निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं-

1-दलित शब्द को लेकर कई विद्वानों ने विचार किया है। दलित शब्द का सामान्य सा अर्थ है- जिसका शोषण, दमन, दलन उसकी तथाकथित निम्न जाति में पैदा होने के कारण हुआ। जिसपर अस्पृश्यता का नियम लागू किया गया है।

2-दलित के संदर्भ में उसके संकुचित और व्यापक अर्थ पर भी विचार किया जाता है।

3-दलित के पर्यायवाची शब्दों में 'दास', 'शूद्र', 'अपवित्र', 'अस्पृश्य/ अछूत', 'अंत्यज', 'आदिहिन्दू', 'हरिजन' का प्रयोग किया जाता है। सबसे अधिक विवादास्पद शब्द 'हरिजन' रहा है।

4-हिंदी दलित कविता की पूर्वपीठिका, आदिकाल तक जाती है। भक्तिकाल और आधुनिक कल में दलित और उसकी समस्याओं पर गंभीरता पूर्वक विचार किया गया है।

5-दलित कविता की भाषा और शैली पर गंभीर आरोप लगाए गए हैं। दलित कवियों ने उसका यथोचित उत्तर भी दिया है।

6-दलित कविता किस वजह से मुख्यधारा से अलग दिखती है उसके भी कुछ कारण हैं। दलित कवि जिस समाज में रहते हैं वहाँ सभ्य समाज के शब्द नहीं अपितु गाली गलोच है। इस वजह से इनकी कविता में भी वे बातें आ गई हैं।

7-वर्तमान की दलित कविता में काफी हद तक सुधार हुआ है कारण यह है कि दलित की स्थिति उनके समाज की स्थिति भी सुधरी है। जाहिर सी बात है समाज जैसा होगा उसी तरह की प्रस्तुति कविता में होती है।

8- वर्तमान की दलित कविता अपने समाज की समस्याओं के लिए संघर्षरत है। यह निश्चित रूप से प्रशंसनीय है।

4.6 शब्द संपदा

1. प्राचीन = पुरातन, पुराना, जो कई साल पहले अस्तित्व में आया हो।
2. सृजन = निर्माण, निर्मिति, मनुष्य का रचनात्मक कार्य।
3. नायिका = रूप गुण सम्पन्न स्त्री, वह महिला कलाकार जो नाटक या चलचित्र में किसी महत्वपूर्ण चरित्र का अभिनय करती है।
4. शस्त्र = कोई वस्तु जिससे शत्रु को चोट पहुंचाने का प्रयास किया जाता है।
5. शास्त्र = वे धार्मिक ग्रंथ जो मनुष्यों के हित और अनुशासन के लिए बनाए गए हैं।
6. विपन्नता = गरीबी
7. सहानुभूति = किसी दूसरे के कष्ट को देखकर करुणा, कृपा, दया, तरस, रहम की भावना का हृदय में आ जाना।

8. स्वानुभूति = स्वयं की अनुभूति, दुख या प्रसन्नता जिसका स्वयं अनुभव किया जाए, जिसे स्वयं भोग जाए।

9. लीजेंडरी शख्सियत= महत्वपूर्ण व्यक्तित्व, हस्ती

10. बाध्य = विवश

4.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

दीर्घ प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए-

1-दलित कविता के संदर्भ में कबीर, रैदास (रविदास), गुरुनानक और सूफियों पर विचार कीजिए।

2-दलित शब्द के अर्थ (संकुचित और व्यापक अर्थ सहित) पर अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

3-हिंदी दलित कविता की भाषा और शैली पर संक्षेप में लिखिए।

खंड (ब)

लघु प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए-

1-शैली किसे कहते हैं? इसके प्रकार बताइए।

2-दलित शब्द के पर्यायवाची शब्दों 'आदि हिन्दू', और 'हरिजन' के विषय में बताइए।

3-दलित शब्द के पर्यायवाची शब्दों 'दास' और 'अपवित्र' के विषय में लिखिए।

खंड (स)

(I)निम्नलिखित प्रश्नों में सही विकल्प छाँटिए-

1-दलित के संदर्भ में 'आदिहिन्दू' शब्द किसने दिया है?

(क)ओम प्रकाश वाल्मीकि (ख) भीमराव अंबेडकर (ग) बिहारी लाल 'हरित' (घ) स्वामी अछूतानन्द

2-अछूत की शिकायत कविता किस भाषा / बोली में है?

(क)खड़ीबोली (ख)अंग्रेजी (ग)भोजपुरी (घ) दक्खिनी

3-हिन्दू धर्म व्यवस्था में शूद्र किस क्रम पर स्वीकार किए जाते हैं?

(क)तीसरे (ख)चौथे (ग)पहले (घ)दूसरे

(ii) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1-हरिजन शब्द का अर्थ है .....।

2-शैली का सामान्य सा अर्थ है .....।

3-गूंगा नहीं था मैं (कविता संग्रह) के रचयिता कौन ..... हैं।

(iii)सुमेल प्रश्न

(क)अछूत की शिकायत	(अ)400 ई० के काफी बाद
(ख)हरिजन सेवक	(ब)भाषा
(ग)भाष् धातु	(स)महात्मा गांधी
(घ)अछूतों का अस्तित्व	(द)1914 ई०

4.8 पठनीय पुस्तकें

1-दलित चिंतन : अनुभव और विचार – डॉ. एन सिंह

2-दलित साहित्य का समाजशास्त्र – डॉ. हरिरायण ठाकुर

3-दलित साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र – ओमप्रकाश वाल्मीकि

4- दलित साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र – शरण कुमार लिंबाले

5-दलित विमर्श : साहित्य के आईने में – जय प्रकाश कर्दम

6-दलित साहित्य : सामाजिक बदलाव की पटकथा – जय प्रकाश कर्दम

इकाई 5 : ओम प्रकाश वाल्मीकि : एक परिचय (कवि)

इकाई की रूपरेखा

5.1 प्रस्तावना
5.2 उद्देश्य
5.3 मूल पाठ : ओमप्रकाश वाल्मीकि : एक परिचय
5.3.1 पृष्ठभूमि और विचारधारा का पल्लवन
5.3.3सदियों का संताप
5.3.3 बस्स! बहुत हो चुका
5.3.4 अब और नहीं
5.3.5 शब्द झूठ नहीं बोलते
5.3.6 समीक्षा
5.4 पाठ सार
5.5 पाठ की उपलब्धियां
5.6 शब्द संपदा
5.7 परीक्षार्थ प्रश्न
5.8 पठनीय पुस्तकें

5.1 प्रस्तावना

'दलित' शब्द साहित्य के साथ जुड़कर एक ऐसी साहित्यिक धारा की ओर संकेत करता है, जो मानवीय सरोकारों और संवेदनाओं की यथार्थवादी अभिव्यक्ति है। हिंदी में दलित साहित्य की स्थापना और विकास में ओम प्रकाश वाल्मीकि (1950-2013) की महत्वपूर्ण भूमिका है। पश्चिमी उत्तर प्रदेश के मुजफ्फरनगर ज़िला मुख्यालय से लगभग 22 किलोमीटर दूर हरिद्वार जाने वाली सड़क पर है बरला गांव। दलित साहित्य के प्रमुख हस्ताक्षर ओमप्रकाश वाल्मीकि का इसी गांव में 30 जून 1950 को जन्म हुआ और 17 नवंबर 2013 को कैंसर के कारण देहरादून में आपने आखिरी सांस ली।इनके पिता का नाम छोटन लाल और माता का नाम मुकुंदी देवी था। अपनी भाभी की छोटी बहिन चंदा से आपने प्रेम विवाह किया था। इनके कोई संतान न थी और ये अपने शोध-छात्रों को ही अपनी संतान मानते थे। उनका बचपन सामाजिक एवं आर्थिक कठिनाइयों में बीता। पढ़ाई के दौरान उन्हें अनेक आर्थिक, सामाजिक और मानसिक कष्ट झेलने पड़े। वाल्मीकि जी कुछ समय तक महाराष्ट्र में रहे। वहां वे दलित लेखकों के संपर्क में

आए और उनकी प्रेरणा से डॉ. भीमराव अंबेडकर की रचनाओं का अध्ययन किया। इससे उनकी रचना-दृष्टि में बुनियादी परिवर्तन हुआ।

प्रथम वरिष्ठ हिंदी दलित साहित्यकार, कवि, कहानीकार, नाट्य शिल्पी, आत्मकथाकार, विचारक, चिंतक, समीक्षक और आलोचक ओम प्रकाश वाल्मीकि ने अपने लेखन में जातीय अपमान और उत्पीड़न का जीवंत वर्णन किया है। ओमप्रकाश वाल्मीकि ने साहित्य की कई विधाओं,जैसे —कहानी—'सलाम' 2000, 'घुसपैठिये' 2003, 'छतरी', 'अम्मा एंड अदर स्टोरीज़'। आत्मकथा—'जूठन' 1997 दो भाग। आलोचना—दलित साहित्य का सौन्दर्य-शास्त्र' 2001, 'मुख्यधारा और दलित साहित्य', 'दलित साहित्य : अनुभव, संघर्ष एवं यथार्थ'। अनुसन्धान परक ग्रंथ—'सफ़ाई देवता' 2008। नाटक—'दो चेहरे', 'उसे वीर चक्र मिला था'। अनुवाद—सायरन का शहर(अरुण काले का कविता-संग्रह, मराठी से हिन्दी अनुवाद), मैं हिन्दू क्यों नहीं (कांचा इलैया की अंग्रेज़ी पुस्तक का हिन्दी अनुवाद) आदि में साहित्य-सर्जन किया है। स्पष्ट है कि ओमप्रकाश वाल्मीकि का रचना-संसार बहुत व्यापक है, जिसके कई रंग-रूप हैं। पर इस इकाई में आप यहाँ ओमप्रकाश वाल्मीकि के कवि-कर्म और उनकी कविताओं पर ही ध्यान केंद्रित करेंगे अर्थात इस इकाई में ओम प्रकाश वाल्मीकि के कवि पक्ष से आप परिचय प्राप्त करेंगे। आप जब कवि की कविता से परिचय प्राप्त करेंगे तो यह आप ध्यान रखें कि वाल्मीकि यह मानते थे कि दलित ही दलित की पीड़ा को बेहतर ढंग से समझ सकता है और वही उस अनुभव की प्रामाणिक अभिव्यक्ति कर सकता है।

5.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप

- दलित साहित्यकार ओम प्रकाश वाल्मीकि के कवि रूप से परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
- इनके चार कविता संग्रहों की चुनिंदा कविताओं के अंशों के आधार पर आप इनकी कविता की विशेषताओं का अध्ययन करेंगे।
- कवि के विद्रोही स्वर में निहित उसकी मानवतावादी दृष्टि से परिचित हो सकेंगे।
- कवि की सामाजिक और वैचारिक प्रतिबद्धता से परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
- कवि की कविताओं के आधार पर अपने विचार व्यक्त कर सकेंगे।

5.3 मूल पाठ

5.3.1 पृष्ठभूमि और विचारधारा का पल्लवन

कवि का जन्म जिस अनुसूचित जाति और पश्चिमी उत्तर प्रदेश के जिस स्थान पर हुआ था वहाँ उन्होंने अपने आप को हमेशा अपमानित होते रहने का कष्ट झेला। प्राइमरी स्कूल से ही उन्होंने अपने स्कूल के सवर्ण अध्यापकों की यातना झेली और बाद में सवर्ण संपादकों और विचारकों से भी उनकी ठनी। उन्होंने यह मानते हुए लिखना शुरू किया कि ब्राह्मण वादी

व्यवस्था को समाप्त करने के लिए उसके साथ 'महायुद्ध' जरूरी है और वे 'कलम के महायोद्धा' (धर्मपाल पीहल के शब्दों में) हैं। प्रभात रंजन के अनुसार "ओमप्रकाश वाल्मीकि ने सदियों से बहिष्कृत समाज को हिंदी साहित्य के विशाल समाज के अनिवार्य सदस्यों के तौर पर स्थापित कर हिंदी की चौहद्दी का विस्तार किया। आज अगर दलित साहित्य पाठ्यक्रमों का जरुरी हिस्सा बन गया है तो उसकी नींव पुख्ता करने का काम वाल्मीकि जी ने अपनी रचनाओं के माध्यम से किया। उनका रचनात्मक योगदान समाज की उस गैर-बराबरी की बराबर याद दिलाता रहेगा जिसके सच्चे अर्थों में जनतांत्रिक बनाने की कामना उनके लेखन में दिखाई देती है।"

वाल्मीकि ने 1970 के दशक में गंभीरता पूर्वक लिखना शुरू किया था। इस दशक में भारत की सामाजिक अवस्था और व्यवस्था में भेदभाव, विषमता, और जाति प्रथा के कारण बहुत बर्बरता दिखाई देती थी। एक तरफ दलितों के प्रति अत्याचार होते थे दूसरी तरफ प्रतिक्रिया स्वरूप दलितों की नई पीढ़ी इन सबके खिलाफ खड़ी हो रही थी। हताशा और निराशा के समय कविता लेखन ने उन्हें संबल दिया। इस संदर्भ में उन्होंने अपनी किताब 'दलित साहित्य : अनुभव, संघर्ष एवं यथार्थ' में स्वीकार किया है कि—"प्रारम्भिक दौर से ही मेरी अभिव्यक्ति का माध्यम कविता ही रही है। एक सामाजिक कार्यकर्ता के रूप में सक्रिय रहने के साथ-साथ कविताओं की ओर मेरा झुकाव लगातार बढ़ता गया। बल्कि हताशा और निराशा के समय कविता मुझे सम्बल देती रही है।" उन्होंने कविता लेखन से जरूर शुरू किया पर पहले का उनका लेखन भाषा, शैली या छंद की दृष्टि से या फिर प्रतीक और बिम्ब को लेकर कमजोर था।किन्तु उनका कविता लेखन शिल्प की दृष्टि से नहीं भाव की दृष्टि से हिंदी दलित कविता की चेतना से जुड़े होने के कारण बहुत प्रसिद्ध हुआ। उन्होंने अपने पहले ही कविता संग्रह में वर्ण-व्यवस्था के सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक वर्चस्व के खिलाफ मोर्चा खड़ा किया। सदियों की यातना को आक्रोश और विद्रोह के रूप में फूटने दिया।

`भारतीय समाज के एक उपेक्षित वर्ग के मर्मांतक जीवन को अपनी कविताओं के माध्यम से प्रस्तुत करके कवि ने पाठकों को सोचने के लिए मजबूर किया है। ओम प्रकाश वाल्मीकि को यूँ तो प्रसिद्धि उनकी आत्मकथात्मक रचना 'जूठन' से मिली किन्तु उन्होंने एक दलित कवि के रूप में 1970 के दशक में रचनात्मक लेखन की शुरुआत की थी। हिंदी साहित्य में 'अहा ग्राम्य जीवन भी क्या है" के विपरीत कविताई करके कविता को कल्पनालोक से धरती पर ला पटकने का काम करने वालों में वे एक हैं। इनकी कविताएं प्रतिपक्ष से संवाद करती हैं। गंभीर और सवाल करती कविताएं लिखकर आपने समाज की तरह साहित्य की चौखट से बाहर उपेक्षित पड़े दलितों को साहित्य के केंद्र में लाकर खड़ा किया। इनके चार कविता संग्रह प्रकाशित हैं - 'सदियों का संताप' (1989), 'बस्स! बहुत हो चुका' (1997), 'अब और नहीं' (2009), तथा

'शब्द झूठ नहीं बोलते' (2012)। इन चारों संग्रहों में अनेक कविताएं हैं और कुछ प्रतिनिधि कविताओं के आधार पर यहाँ यह देखा जाएगा कि वाल्मीकि जो स्वयं दलित हैं वे कैसे अपनी कविता में दीन -हीन, पीड़ित-शोषित और प्रताड़ित लोगों को प्रेरित करते हैं।जवाहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय में हिन्दी के प्रोफेसर 'रामचन्द्र' ने ओमप्रकाश वाल्मीकि की कविताओं का संपादन—'ओमप्रकाश वाल्मीकि : प्रतिनिधि कविताएँ' शीर्षक से भी किया है। उसे भी आप देख सकते हैं। यू ट्यूब पर वाल्मीकि के कविता पाठ के दो तीन वीडिओ उपलब्ध हैं। आप समय निकाल कर उन्हें सुन भी सकते हैं। अब आप कविता के रूप में कवि का वक्तव्य देखते हुए आगे बढ़ें।

"मैंने अपने बचपन में ही इस बात को महसूस कर लिया था कि हमारा समाज तमाम प्रताड़नाओं, उत्पीड़न, शोषण को चुपचाप सह रहा है। ऐसा नहीं है कि उसको वे बयान नहीं करते थे। वे अपने घरों में या बिरादरी के छोटे –मोटे समारोहों या कार्यक्रमों में शोषण के खिलाफ बोलते थे। लेकिन उनकी आवाज अनसुनी रह जाती थी, और जब मेरा परिचय साहित्य से हुआ तो मुझे लगा कि साहित्य ही इस आवाज को दूसरों तक पहुंचा सकता है। मैंने बचपन में ही कविताएं लिखना शुरू कर दिया था।

मेरी पीढ़ी ने अपने सीने पर
खोद लिया है संघर्ष
जहां आंसुओं का सैलाब नहीं
विद्रोह की चिंगारी फूटेगी

ओमप्रकाश वाल्मीकि ने सर्जन का प्रारम्भ कविता से ही किया था। उन्होंने कविता के संबंध में अपनी अवधारणा को स्पष्ट करते हुए लिखा है कि – "मेरे लिए कविता कला से ज्यादा, जीवन की अदम्य लालसा, गतिशीलता की संवाहक है, जो हमारी पीड़ा, हमारे सुख-दुःख की अभिव्यक्ति है, जिसमें हम अपने वर्तमान का प्रतिबिम्ब शिद्दत के साथ देख सकें। जो जीवन की विद्रूपताओं से जूझने का हौसला दे.... सच्ची और सही कविता है, जो सच को सच और झूठ को झूठ कहने का हौसला रखती हैं।" ओमप्रकाश बाल्मीकि की कविता ने भेदभाव और पाखंड चाहे वह धार्मिक हो, या सामाजिक, उसका पर्दाफाश करने में कोई कोर-कसर नहीं छोड़ी। उनकी कविताएं हिन्दी के प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में तो ससम्मान छपती ही रही, उनके चार काव्य संग्रह भी प्रकाशित हुए। निश्चय ही ओमप्रकाश वाल्मीकि ने हिन्दी दलित कविता को एक नई दिशा दी हैं।

बोध प्रश्न

- ओम प्रकाश वाल्मीकि के कविता लेखन का क्या उद्देश्य था ?

- कवि की कविता के केंद्र में कौन है ?

5.3.2 सदियों का संताप

उनके पहले काव्य -संग्रह 'सदियों का संताप' में 19 कविताएं हैं जिनमें जातीय दंश के विरुद्ध आक्रोशित स्वर में एक आंदोलन का स्वरूप है। ये कविताएं 1974 से 1989 के बीच लिखी गई थीं और यह संग्रह 1989 में प्रकाशित हुआ जिसके प्रकाशन में उन्हें अपने मित्र विजय गौड़ का बहुत सहयोग मिला था। बजरंग बिहारी तिवारी के शब्दों में 'अस्मितवादी मुखरता के बरक्स मितव्ययी शब्द सजगता' इस संग्रह की पहचान है जो बाद में कवि की पुख्ता पहचान बनती चली गई। जाति वादी धर्म की कुसंस्कृति को बेपरदा करना इस संग्रह का प्राथमिक लक्ष्य है।" वाल्मीकि ने भावुकता से मुक्त इन उन्नीस की उन्नीस कविताओं (ठाकुर का कुआं, ज्वालामुखी, युग चेतन, शंबूक का कटा सिर, तनी मुट्ठियाँ, झाड़ूवाली, सदियों का संताप आदि) में दलित समाज का आक्रोश, विद्रोह, नकार, आग्रह, आक्रामकता, भाषिक विकास, दलित जीवन संघर्ष की पृष्ठभूमि आदि न जाने कितने विषय भर दिए हैं।इस संग्रह की 'जाति' शीर्षक कविता की कुछ जुझारू पंक्तियाँ हैं –

स्वीकार्य नहीं मुझे जाना
मृत्यु के बाद
तुम्हारे स्वर्ग में
वहाँ भी तुम
पहचानोगे मुझे मेरी जाति से

आप देख सकते हैं कि कवि की कविता में सर्वाधिक घृणा वे यदि किसी से करते दिखाई देते हैं तो वह जाति की विकृत व्यवस्था है। वे इसकी राजनीति को भी खूब पहचानते हैं। इसीलिए वे आगाह करते हैं -

लुटेरे लूट कर जा चुके हैं
कुछ लूटने की तैयारी में हैं
मैं पूछता हूँ
क्या उनकी जाति तुमसे ऊंची है ?

आप ओम प्रकाश वाल्मीकि की कविता पढ़ते हुए भारतीय जाति व्यवस्था की सही समझ प्राप्त करते हैं और फिर समझते हैं कि इनकी कविता इसी भोगे अनचाहे दुख की कोख से पैदा हुई है।

दलित साहित्य आंदोलन को हिंदी में स्थापित करने में इस छोटी सी पुस्तक ने एक अहम भूमिका निभायी थी। यह किताब सवालों से भरी है। सभी कविताएं सवाल हैं, चाहे उनके कोई उत्तर न दिए गए हों। पहली कविता 'ठाकुर का कुआं' का केन्द्रीय प्रश्न है – कुआं ठाकुर का /पानी

ठाकुर का / खेत खलियान ठाकुर के / गली मुहल्ले ठाकुर के / फिर अपना क्या ?/ शहर ? / देश? दूसरी कविता 'मानचित्र' फिर सवाल करती है – पता नहीं यह कौन-सा /समीकरण है / जो दिन से रात/ रात से दिन / पल पल चीन चीन / खींच रहा है /जिस्म से पसीना / इसी तरह 'युग चेतना' शीर्षक कविता कहती है – 'कितने सवाल खड़े हैं /कितनों के दोगे तुम उत्तर ?इस संग्रह की अंतिम कविता है 'तब तुम क्या करोगे? 'जो जीना पड़ जाए युगों तक/मेरी तरह / तब तुम क्या करोगे ?

वाल्मीकि की कविता में चिंतन की गहराई है। वे प्रश्न करते हैं और कविता में प्रतिरोध का स्वर उभरने लगता है। 'ठाकुर का कुआं' कविता के उस अंश को फिर से देख जाइए जहां वे प्रश्न करते हैं। आप जरा उत्तर देने की खुद कोशिश करके देखें।

कुआं ठाकुर का
पानी ठाकुर का
खेत खलिहान ठाकुर के
फिर अपना क्या ?
गाँव ? शहर ? देश?

ये कुछ राजनीतिक प्रश्न तो हैं ही, सामाजिक और आर्थिक भी हैं। वे अपनी कविता के द्वारा प्रतिरोध न करते तो और क्या करते। कोई दूसरा रास्ता था क्या उनके उनके पास ? लेकिन न तो वे निराश थे और न हताश। वे उस दिन का इंतजार करते हैं जब उनकी कविताओं की धमनियों का रक्त ज्वालामुखी बनकर आएगा। वह अपने बच्चों का भविष्य बनते देखना चाहते थे। कविता संग्रह में ऐसी कोई कविता नहीं हैं, जिनके मूल में जातिवाद और दलित जीवन की पीड़ा और दुःख न हो। 'सदियों का संताप' की कविताओं पर टिप्पणी करते हुए श्री कृष्ण शलभ ने लिखा है कि – "ओम का कवि तिक्तता में जीता है, स्थितियों पर दूर तक सम्यक दृष्टि रखकर अपने धारदार चिन्तन से उन्हें विश्लेषित करता है। परन्तु हुंकार के साथ। उसमें वर्तमान से संघर्ष करने का उच्छाह है, भविष्य के प्रति आश्वस्ति है। अंधेरों को मात्र जुगनुओं के सहारे नहीं, सूरज के सहारे धकियाने का सार्थक प्रयास है- ओम का रचना संसार। जिसके शब्दचिन्तन में कहीं एक प्रकाशपर्व अन्तर्निहित है।" (सुमनलिपि, नवम्बर-1995, पृ.-40)

इस कविता संग्रह की प्रमुख कविता 'सदियों का संताप' में जैसा कि उम्मीद थी वे दलित वर्ग के द्वारा सदियों से संताप अर्थात कष्ट सहते चले जाने की बात करते हैं और इसके साथ ही वे बता देते यहीं कि अब वे समाज में व्याप्त अन्याय, शोषण, भेदभाव और अत्याचार को सहन नहीं करेंगे। वे इनके खिलाफ आवाज बुलंद करते रहेंगे।

दोस्तों, इस चीख को जगाकर पूछो
कि अभी ओर कितने दिन
इसी तरह गुमसुम रहकर
सदियों का संताप सहना है।

बोध प्रश्न

- सदियों से कवि किस संताप को भुगत रहा है और क्यों ?
- कवि किससे प्रश्न करता है और क्यों ?

5.3.3 बस्स! बहुत हो चुका

यह ओमप्रकाश वाल्मीकि का दूसरा कविता संग्रह है। इसमें उनके क्रान्तिकारी विचारों का प्रभाव है। यह कविता संग्रह दलित चेतन के प्रखर कवि हीरा डोम को सादर समर्पित है। यहाँ आकार में इनकी कविताएँ छोटी है, लेकिन गुणात्मक दृष्टि से अभिव्यक्ति में बेहद सशक्त और मजबूत हैं। कविताओं का प्रभाव क्षेत्र व्यापक है। वाल्मीकि ने इस संग्रह की कविताओं में मानव के दारूण दुःख, पीड़ा, आक्रोश, वेदना, गरीबी और जातिवाद की समस्या का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत किया है। जो छटपटाहट और सवाल करने की अकुलाहट कवि के पहले संग्रह में है वह दूसरे में भी बदस्तूर कायम रही और आगे भी चलती चली गई। आप यदि इस दूसरे संग्रह की चर्चित कविता 'शायद आप जानते हों" पढ़ें तो आपको लगेगा कि यह तो उनकी पहली कविता 'तब तुम क्या करोगे" का स्वाभाविक विस्तार है। कवि समाज के ठेकेदारों से सीधे सवाल करते हैं, "चूहड़े और डोम की आत्मा/ ब्रह्म का अंश क्यों नहीं है / मैं नहीं जानता / शायद आप जानते हों /

कवि का जो अपना प्रतिक्रिया करने का तरीका वह कराहने के बजाय घोर आक्रोश का है। वे अपने पुरखों की तरह मूक रहते हुए सब कुछ सहन करना स्वीकार नहीं करते। धर्म-दर्शन, पौराणिक मिथकों की अपनी समझ से व्याख्या, समकालीन यथार्थ का बयान आदि इस संग्रह की कविताओं के विषय हैं। कवि का यह भी प्रयत्न रहा है कि दलित अपनी मानसिकता बदलकर आगे बढ़ें। वे अंधविश्वासों को त्यागकर वैज्ञानिक दृष्टि कों अपनाने का भी संदेश देते हैं।

बोध प्रश्न

- कवि का यहाँ प्रतिक्रिया करने का तरीका क्या है ?
- वे दलितों से क्या अपेक्षा करते हैं ?

5.3.4 अब और नहीं

कवि का तीसरा संग्रह है 'अब और नहीं'। इसमें कुल इक्यावन कविताएं संकलित हैं। यह संग्रह अपने जोश खरोश में पहले दो से आगे चला गया है और इसका स्वर और अधिक तेज हो

गया है, मानो अब और वे नहीं सहने वाले। एक तरह से इसकी कविताएं देश की आजादी के छह दशक बीत जाने के बाद भी दलितों की दशा वैसी ही बने रहने की खिन्नता से भरे हैं। कवि कहता है – संसद के गलियारों का/ अधमरा लोकतंत्र भी/ न अपना हो सका / न जगा सका / विश्वास ही /"

इस संग्रह की कविताओं का यथार्थ गहरे अन्तः भावबोध के साथ सामाजिक शोषण के विभिन्न आयामों से टकराता है और मानवीय मूल्यों की पक्षधरता में खड़ा दिखाई देता है। इन कविताओं में मानवीय पक्ष को प्रभावशाली ढंग से उभारा गया है। वाल्मीकि की मानवीय दृष्टि दलित कविता को समाज से जोड़ती है। इस संग्रह में उनके विचारतत्त्वों की प्रधानता है।संग्रह की कविताओं में कवि ने अतीत का दंश, वर्तमान की विषमतापूर्ण स्थितियों, दलित संघर्ष तथा दलित चेतना के व्यापक स्वरूप का चित्रण किया है। इस कविता संग्रह में वाल्मीकि का आशावादी दृष्टिकोण निराशा में बदल जाता है, फलस्वरूप उनका विद्रोही स्वर कविता में सुनाई देता है।

5.3.5 शब्द झूठ नहीं बोलते

'शब्द झूठ नहीं बोलते' ओमप्रकाश वाल्मीकि का चौथा कविता संग्रह है। इस कविता संग्रह में 2005 से 2011 के बीच लिखी गई कविताएँ हैं। 'अंधेरे में शब्द', 'तुम्हारी जात', 'वसुधैव कुटुंबकम', 'जाति अहंकार', 'मुक्ति संघर्ष', 'पहाड़', 'जुटता', 'धर्म के भी लोग', 'बारिश-2010', साल 2010 का आखिरी दिन', परिवर्तन', 'नाटक जारी है', 'शब्द झूठ नहीं बोलते', आदि बयालीस कविताएं इस संग्रह में हैं। इन कविताओं में अनेक स्वर हैं जैसे आक्रोश, नकार, अवहेलना, सामाजिक विद्वेष, राजनीतिक छल, जाति और वर्ण भेद आदि। इस काव्य संग्रह की भूमिका में कवि का कथन है, " मेरे लिए कविता आनंद या रसास्वादन की चीज नहीं है, बल्कि कविता के माध्यम से मानवीय पक्षों को उजकगर करते हुए मनुष्यता के सरोकारों और मनुष्यता के पक्ष में खड़ा होना है। 'शब्द झूठ नहीं बोलते' की पंक्तियाँ हैं- मेरा विश्वास है/तुम्हारी तमाम कोशिशों के बाद भी/शब्द ज़िन्दा रहेंगे/समय की सीढ़ियों पर/अपने पाँव के निशान/गोदने के लिए/बदल देने के लिए/हवाओं का रुख…' सचमुच कवि ने शब्दों के माध्यम से शोषण, अपमान, और उत्पीड़न की कथा कही जिसको पढ़कर भूल जाना असंभव होगा।

5.3.6 समीक्षा

'ओमप्रकाश वाल्मीकि—व्यक्ति, विचारक और सृजक' पुस्तक के सम्पादकीय में जयप्रकाश कर्दम लिखते हैं—"ओमप्रकाश वाल्मीकि एक ऐसा नाम है, जिसने अपनी रचनाओं के माध्यम से कुलीनता और आभिजात्य संस्कृति के मूल्यों में रचे-बसे हिन्दी साहित्य की सदियों पुरानी जड़ता को तोड़ा और समाज की भाँति साहित्य की चौखट से बाहर उपेक्षित पड़े दलितों

को साहित्य के केंद्र में लाकर खड़ा कर दिया। यह कहना शायद ग़लत नहीं होगा कि ओमप्रकाश वाल्मीकि का लेखन साहित्य विमर्श में एक अनिवार्य हस्तक्षेप है।मानवीय मूल्यों को स्थापित करना वाल्मीकि की कविता का एक प्रमुख उद्देश्य है। आत्मपरकता उनकी सभी कविताओं में है। उनकी कविताएं सीधे सवाल करती हैं। वे एक सच्चे अंबडेकरवादी दलित-साहित्यकार, उच्चकोटि के विचारक-चिंतक, गंभीर आलोचक, प्रखर वक्ता और जुझारू कार्यकर्ता थे। उनका लेखन मानव मुक्ति का साहित्य है। ओमप्रकाश वाल्मीकि के लेखन के मूल में जहाँ एक ओर बुद्ध का दर्शन, ज्योतिबा फुले, सावित्री बाई फुले,तथा बाबा साहब डॉ. भीमराव आंबेडकर की वैचारिकी है, तो वहीं दूसरी ओर मध्यकालीन संत कवि कबीर और रैदास (रविदास)जैसा अदम्य साहस भी है। कवि ने अपनी कविता को एक आन्दोलन की भाँति बताया है। इस सन्दर्भ में वाल्मीकि ने लिखा है - ' 'मेरे लिए कविता सिर्फ शब्दों का खेल नहीं है। मेरे जीवन का मिशन है। एक आन्दोलन है।" वाल्मीकि ने अपने लेखन कार्य में दलित कविता की रचना प्रक्रिया को भी रेखांकित करने का प्रयास किया है। इस सन्दर्भ में वे कहते है - "मेरी रचना प्रक्रिया में जातीय दंश बहुत गहरें हैं। मुझे यह कहने में या स्वीकार कर लेने में भी कोई गुरेज दिखाई नहीं देता कि मेरे लेखन में, चाहे कविता हो, कहानी या आत्मकथा हो सभी जगह यह स्वर प्रमुख है।"

ओमप्रकाश वाल्मीकि की कविताओं का क्षेत्र विस्तृत है। जहाँ समाज और जीवन के ऐसे अनेक प्रसंग उपस्थित हैं, जो भारतीय संस्कृति की महानता का राग अलापने वालों के समक्ष एक नहीं, अनेक प्रश्न करता हैं। वाल्मीकि के लिए कविता आनन्द या रसास्वादन की चीज नहीं, बल्कि कविता के माध्यम से मानवीय पक्षों को उजागर करते हुए मनुष्य के सरोकारों और मनुष्यता के में खड़ा होना है।

इस कविता संग्रह में वाल्मीकि ने मनुष्य, भाषा और संवेदना के अन्तःसम्बन्ध को विश्लेषित करते हुए विभिन्न पहलुओं से दलित जीवन के अनेक आवश्यक मुद्दों को उठाते हुए उनकी सार्थकता सिद्ध की है।

ओमप्रकाश वाल्मीकि के कविता संग्रहों में दलित जीवन के संघर्ष की गाथा का ज्वलन्त यथार्थ चित्रण है।

उनके अनुसार दलित कविता का जन्म हजारों वर्ष की दलित चेतना के अनुभवों का परिणाम है। वे दलित चेतना को कविता के माध्यम से मुखर करने वाले पूर्वपुरूष है।

वाल्मीकि ने अपनी कविताओं के सन्दर्भ में खुद कहा है –'कविता मेरे लिए आनन्द, रस, मनोरंजन के लिए नहीं हैं। न ही कविता का ऐसा उद्देश्य रहा होगा। कविता हमें मनुष्यता के निकट ले जाने का काम करती है। उम्मीदों के साथ, जीवन में बदलाव की आकांक्षा उत्पन्न करती है। इसलिए कविता में संवेदनात्मक अनुभूतियों की अभिव्यक्ति ज्यादा गहरी होती है।"

ओमप्रकाश वाल्मीकि की कविता 'ठाकुर का कुआँ' दलित साहित्य में अपना विशेष महत्त्व रखती है। इस कविता में जीवन के संसाधनों का उत्पादन करने वाली जातियों और मेहनतकश लोगों को सामंतवादी और पूँजीवादी व्यवस्था का गुलाम बताया गया हैं। रोटी, कपड़ा और मकान मनुष्य की बुनियादी आवश्यकताएँ हैं। दलित इन वस्तुओं से भी वंचित रहें। समस्त संसाधन ठाकुर अथवा जमींदार के पास है और दलित रोटी या पानी के लिए भी तरस जाता है।

दलित रचनाकार स्वयं वितृष्णापूर्ण जिन्दगी का अहम हिस्सा होता है। सवर्ण समाज की उपेक्षा जो ओमप्रकाश वाल्मीकि ने लगातार देखी, भोगी और सही है, इसके प्रति आक्रोश और तिलमिलाहट उनके रचना संसार का अंग बनकर आई है। इस घृणित जीवन के प्रति आक्रोश उनके शिल्प का मूल स्वर बना, जो 'मुट्ठी भर चावल' कविता में दिखाई देता है -

ओ, मेरे अज्ञात, अनाम पुरखो
तुम्हारे मूक शब्द जल रहे हैं
दहकती राख की तरह
राख : जो लगातार काँप रही है
रोष में भरी हुई।

दलित व्यक्ति 'जाति' के वीभत्स रूप को भोगते हुए बड़ा होता है, इस कारण उसके मन में जाति को लेकर गहरी वेदना और वितृष्णा भरी होती है। वह धर्म, दर्शन, परम्पराओं में इसके कारण खोजने का प्रयास करता हैं तथा हताश होकर समस्त प्रतिमानों के विरूद्ध मोर्चा खोल देता है। ओमप्रकाश वाल्मीकि ने अपनी कविता 'जाति' में मृत्यु के बाद स्वर्गलोक जाने की चर्चा को लेकर व्यंग्यात्मक ढाँचा स्थापित किया है -

स्वीकार्य नहीं मुझे जाना,
मृत्यु के बाद
तुम्हारे स्वर्ग में।
वहाँ भी तुम
पहचानोगे मुझे
मेरी जाति से ही!

ओमप्रकाश वाल्मीकि ने दलित जीवन की मार्मिक संवेदनाओं को बहुत नजदीकी से अनुभव किया है, उसे जिया है, भोगा है। वे दलित जीवन की सच्चाइयों से पूर्णतः परिचित रहे है। उनके लिए शब्दों का विशेष स्थान है, वे शब्दशक्ति से सीधा सम्बन्ध रखते है। उनका भूत, भविष्य और वर्तमान से भी सीधा सम्बन्ध है, जिसे 'उत्सव' कविता में स्पष्ट देखा जा सकता है -

अँधेरा सिर्फ एक शब्द भर

नहीं हैं मेरे लिए
पूरा इतिहास है
जिसे ढोया है
हजारों साल से
एक बोझ की तरह
अभ्यस्त होकर जिए
पीढ़ी-दर-पीढ़ी।

दलितों की जिन्दगी शोषितों और दबे-कुचलों की भाँति हमेशा अंधेरों में व्यतीत हुई है। उन्होंने अंधेरों के अपने जीवन की अस्मिता को तिलांजलि दी है। शोषण और दमन के अंधेरे में दलित व्यक्ति के शब्द भी दफन है, उसकी सिसकियाँ व आहे भी। समाज के एक बड़े वर्ग को दलित व्यक्ति के चीख की आवाज सुनाई नहीं देती, जो सामाजिक दोष को संकेतित करता है। अतः वह अपने साहित्यिक चिन्तन द्वारा व्यक्ति और समाज दोनों के लिए सुरक्षित प्रबन्ध का आकांक्षी है। ओमप्रकाश वाल्मीकि का मानना है कि इस अंधेरे में बहुत कुछ दफन हुआ है - व्यक्ति, समाज, वजूद, पहचान, समता, स्वतन्त्रता, अधिकार, आवाज आदि -

रात गहरी और काली है
अकाल ग्रस्त त्रासदी जैसी
जहाँ हजारों शब्द दफन हैं
इतने गहरे
कि उनकी सिसकियाँ भी
सुनाई नहीं देती।

हिंदी दलित साहित्य के आधार स्तंभ,हिंदी दलित साहित्य के पर्याय, हिंदी दलित साहित्य के पुरोधा कवि –लेखक ने दलित समाज को समझाया कि अपने दुख दर्द छिपाने की जरूरत नहीं है बल्कि चिल्लाकर बताते रहने की जरूरत है। हीनता और दीनता के भाव को हटा कर अपने अधिकार के लिए लड़ने की जरूरत है।

5.4 पाठ सार

- भारतीय समाज व्यवस्था की असमानता पर आधारित जीवन की विषमताओं, विसंगतियों के बीच से इनकी कविता का जन्म हुआ है।
- ओमप्रकाश वाल्मीकि ने अपनी कविताओं के द्वारा समाज में व्याप्त शोषण, अत्याचार, और भेदभाव के विरुद्ध आवाज उठाकर उनके खिलाफ जद्दोजहद करने की सलाह दी है।
- सामाजिक यथार्थ को इस तरह से पेश किया है कि उसकी खातिर गुस्सा और आक्रोश बाढ़ जाता है।

- कवि ने केवल संताप या दुख ही प्रकट नहीं किया है वे अपनी कविताओं के द्वारा क्रांति, ताकत, विद्रोह और संकल्प के भावों से भरी मानवीय मूल्यों की पहचान कराते हैं।
- इन कविताओं में देशी जमीन का खुरदरापन, आपसदारी की महक और आपसी समझ की ख्वाहिश दिखाई देती है।
- कविता की जो जमीन वाल्मीकि जी ने तैयार की वह काफी उपजाऊ है। जातिगत भेदभाव, अंधविश्वास, वर्ण-व्यवस्था, आर्थिक असमानता, सवर्ण वर्चस्व, गरीबी और अभाव आदि को रेखांकित करती कविताओं के साथ समाज, सरकार और स्वयं दलितों की भूमिका पर भी वाल्मीकि विचार करने के लिए प्रेरित करते हैं।
- ओम प्रकाश वाल्मीकि की कविताओं में दलित समाज चेतना युक्त है और वह अपनी स्थिति पर प्रश्न करता है। वह अपने विकास के रास्ते की बाधाओं के लिए जिम्मेदार अड़चनों को भी फटकारने से नहीं घबराता।
- इनकी कविताओं में अंबेडकर के समता मूलक दर्शन की गूंज सुनाई देती है। कवि भी मानते हैं कि कोई बाहरी व्यक्ति, शक्ति, चमत्कार, अवतार या पैगंबर उनका कष्ट दूर नहीं करेगा। उन्हें खुद-ब-खुद इसके लिए कोशिश करनी होगी।
- ओमप्रकाश वाल्मीकि की कविता को पढ़ने और उसका विश्लेषण करने के लिए व्यापक असहमति युक्त कविता के नए प्रतिमान बनाने होंगे क्योंकि वे नए सौन्दर्य-बोध की माँग करते दिखाई देते हैं।

5.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस अध्ययन करने के बाद उपलब्धियाँ प्राप्त हुई -

- इस इकाई के पाठ से ओम प्रकाश वाल्मीकि के कवि स्वरूप का पता चलता है।
- उनकी कविता में 'दलित' चेतना की पृष्ठभूमि का ज्ञान होता है।
- दलित पीड़ा को कवि ने किस प्रकार कविता के रूप में प्रस्तुत किया है, यह पता चलता है।
- कवि की कविता की काव्यगत और शैलीगत विशेषताओं का अंकन करने की समझ विकसित होती है।

5.6 शब्द संपदा

1. बर्बरता - असभ्यता और जंगलीपन
2. हताशा – निराशा, दुख
3. चोहद्दी – किसी स्थान के चारों ओर की सीमा

4. वर्चस्व - श्रेष्ठ या मुख्य होने की अवस्था या भाव, तेजस्वी होने का भाव; तेज; दीप्ति; कांति

5. विश्लेषण – अलग करना, छानबीन करना।

6. गुरेज - दूर रहना · बचना;

7. प्रतिमान – अनुकरणीय, आदर्श, मॉडल, प्रतिरूप

8. वीभत्स - 1. घृणित; भयानक 2. असभ्य; जंगली; बर्बर।

5.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड –(अ)

दीर्घ प्रश्न

निम्न लिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1) ओम प्रकाश वाल्मीकि की पठित कविताओं के आधार पर उनकी दलित चेतना का परिचय दीजिए।

2) "ओम प्रकाश वाल्मीकि की कविताएं उनके जीवन का प्रतिबिंब हैं।" इस कथन की सार्थकता पर विचार कीजिए।

3) "ठाकुर का कुआं' कविता के आधार पर कवि के दलित सरोकारों पर सारगर्भित टिप्पणी कीजिए।

4) ओम प्रकाश वाल्मीकि की कविताओं में कथ्य प्रधान है, या भाषा सौन्दर्य?

5) "ओम प्रकाश वाल्मीकि की कविताएं सवाल बहुत करती हैं।" क्या आप इस कथन से सहमत हैं ?

6) ओम प्रकाश वाल्मीकि के लिए कविता लेख के क्या उद्देश्य थे ?

खंड –(ब)

लघु प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर लगभग 250 शब्दों में दीजिए

1) ओम प्रकाश वाल्मीकि की कविताओं में कैसे और क्या क्या सवाल हैं ?

2) दलित कविता से आप क्या समझते हैं ?

3) कवि सदियों के किस संताप की बात करता है ? इसके निवारण के कुछ उपाय सुझाइए।

4) पठित कविताओं के आधार पर दलितों की जिंदगी की दुविधाओं पर प्रकाश डालिए।

खंड- (स)

I. सही विकल्प चुनिए

1) ओम प्रकाश वाल्मीकि का जन्म हुआ था –

क) मुजफ्फरपुर जिले में ख) मुजफ्फरनगर जिले में ग) चंद्रपुर महाराष्ट्र में घ) देहरादून में

2) ओम प्रकाश वाल्मीकि का काव्य संग्रह नहीं है –

क) बस्स बहुत हो चुका ख) जूठन ग) सदियों का संताप घ) अब और नहीं

3) ओम प्रकाश वाल्मीकि की कविता का प्रमुख उद्देश्य नहीं है।

क) संवेदनात्मक वेदनाओं की अभिव्यक्ति ख) मानवीय मूल्यों की स्थापना

ग) सवर्ण जातियों को फटकारना घ) दलित जीवन की पीड़ा की अभिव्यक्ति करना

4 ओम प्रकाश वाल्मीकि की कविता का उद्देश्य है

क) ब्राह्मणवादी विचारधारा का विरोध ख) जाति व्यवस्था का विरोध

ग) वर्ण व्यवस्था का विरोध घ) उपरोक्त सभी

II. रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए

क) _____ ओम प्रकाश वाल्मीकि की कविता का प्रमुख उद्देश्य है।

ख) जाति प्रथा का वीभत्स रूप भोगते हुए _____ बड़ा होता है।

ग) दलित को _____ और _____ के भाव को हटाकर अपने अधिकार के लिए लड़ने की जरूरत है।

घ) _____ ओम प्रकाश वाल्मीकि का पहला कविता संग्रह है।

III. सुमेल कीजिए -

1. अंबेडकर	अ) शब्द झूठ नहीं बोलते
2. 'जाति' शीर्षक कविता	ब) दलित साहित्यकार
3. कविता संग्रह	स) मृत्यु के बाद स्वर्ग
4. जय प्रकाश कर्दम	ड) समता मूलक दर्शन

5.8 पठनीय पुस्तकें

1. ओमप्रकाश वाल्मीकि : सदियों का संताप, गौतम बुक सेंटर, नई दिल्ली, 2008
2. ओमप्रकाश वाल्मीकि : बस्स! बहुत हो चुका, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2017
3. ओमप्रकाश वाल्मीकि : शब्द झूठ नहीं बोलते, अनामिका पब्लिशर्स, नई दिल्ली, 2012
4. ओमप्रकाश वाल्मीकि : अब और नहीं, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 2018

5. ओम प्रकाश वाल्मीकि : व्यक्ति, विचारक और सृजक संपादक जय प्रकाश कर्दम वाणी प्रकाशन दिल्ली 2016

6. ओमप्रकाश वाल्मीकि के कविता कर्म का आन्तरिक यथार्थ / अमृत लाल जीनगर और डॉ. विदुषी आमेटा

7. ओमप्रकाश वाल्मीकि: दलित साहित्य : अनुभव, संघर्ष एवं यथार्थ, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली,2020

इकाई 6 : बस्स! बहुत हो चुका : आलोचना

इकाई की रूपरेखा

6.1 प्रस्तावना

6.2 उद्देश्य

6.3 मूल पाठ : बस्स! बहुत हो चूका : आलोचना

6.3.1 'बस्स बहुत हो चूका' का परिचय

6.3.2 कविता के सरोकार और चुनौतियाँ

6.3.3 कविता में कवित्व शक्ति

6.3.4 बस्स बहुत हो चुका –एक अध्ययन

6.4 पाठ सार

6.5 पाठ की उपलब्धियां

6.6 शब्द संपदा

6.7 परीक्षार्थ प्रश्न

6.8 पठनीय पुस्तकें

6.1 प्रस्तावना

ओम प्रकाश वाल्मीकि हमारे समय के प्रमुख कवि हैं। आपने इनके कवि परिचय की इकाई में पढ़ा होगा कि कवि वाल्मीकि ने अनेक कविताएं लिखी हैं और इनकी प्रायः सभी कविताएं पाठक के सामने समाज के दलित वर्ग के दुख-दर्द का चित्रण करती हैं। इनके चार कविता संग्रह प्रकाशित हुए हैं और इस इकाई में 'बस्स बहुत हो चुका' नामक काव्य संग्रह की कविताओं के आधार पर अध्ययन किया जा रहा है। दलित कविता के रूप में इस काव्य संग्रह की कविताएं पारंपरिक रचनाओं से अलग हैं। इन कविताओं के लेखन का उद्देश्य इस संग्रह के नाम से कुछ- कुछ नजर आ सकता है। अब कुछ-कुछ से आगे जाकर इस संग्रह की कविताओं पर आलोचनात्मक निगाह डालना जरूरी है। इन कविताओं के लेखन का उद्देश्य पाठक को आनंदित करना नहीं बल्कि उत्तेजित और आंदोलित करना है। इनमें आम आदमी का दुख सुख और उसके जीवन का उतार चढ़ाव है। यहाँ आम आदमी की बात हो रही है। कोई कल्पना नहीं और न कोई मधुर सपनें है जो है वह है कटु सत्य। कड़वा सच। वे समाज की बेहतरी के लिए काम करना चाहते हैं। समाज में बदलाव ही उनकी ख्वाहिश है। एक दूसरे में प्रेम की भावना बढ़े और भाई चारा मजबूत हो यह इन कविताओं का उद्देश्य है। गंगा सहाय मीणा जन-सत्ता नामक समाचारपत्र में श्रद्धांजलि स्वरूप लिखे 24 नवम्बर 2013 के अपने आलेख में लिखते हैं कि किस प्रकार लंबे समय से भारतीय समाज –व्यवस्था में सबसे निचले पायदान पर खड़ी 'चूहड़ा' जाति का एक बालक ओम प्रकाश सवर्णों से मिली चोटों –कचोटों के बीच परिस्थितियों से

संघर्ष करता हुआ दलित आंदोलन का क्रांतिकारी योद्धा ओम प्रकाश वाल्मीकि बनता है, यह बड़ी बात है। ओमप्रकाश वाल्मीकि का महत्त्व केवल उनकी आत्मकथा की वजह से नहीं है। उनकी कविताएं जहां सुदूर अतीत में जाकर मिथकों से मुठभेड़ करते हुए उनको दलित नजरिए से खोलती है। वहीं वर्तमान के बदलते दलित –यथार्थ से संवाद करती हैं। स्वयं कवि ओम प्रकाश वाल्मीकि ने अपनी आत्मकथा "जूठन" को शुरू करते हुए लिखा है, "दलित जीवन की पीड़ाएं असहनीय और अनुभव दग्ध हैं। ऐसे अनुभव जो साहित्यिक अभिव्यक्तियों में स्थान नहीं पा सके। एक ऐसी समाज व्यवस्था में हमने साँसे ली हैं जो बेहद क्रूर और अमानवीय हैं। दलितों के प्रति असंवेदनशील भी।और हाँ, कविता की सार्थकता को अंगीकार करते हुए कवि ने लिखा है, जीवन संघर्ष में आदमी का सहारा बनकर जो हौसला दे, वही तो कविता है। कविता कला से ज्यादा जीवन की अदम्य लालसा, गतिशीलता की संवाहक है। इस पृष्ठभूमि में कवि के एक काव्य संग्रह ""बस्स बहुत हो चुका" की तमाम कविताओं के आधार पर चर्चा का अध्ययन कीजिए।

6.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप

- हिंदी के प्रमुख दलित कवि ओम प्रकाश वाल्मीकि की कविता से परिचित हो सकेंगे।
- प्रतिनिधि काव्य संग्रह 'बस्स बहुत हो चुका' के आधार पर कवि की दलित चेतना से अवगत हो सकेंगे।
- संग्रह की कविताओं के अंशों से उद्धरण लेकर इनकी आलोचना कर सकेंगे।
- काव्य कला के आधार पर कवि और उनकी कविताओं का विश्लेषण विवेचन कर सकेंगे।

6.3 मूल पाठ

6.3.1 'बस्स बहुत हो चूका' का परिचय

शुरू से शुरू करते हैं। 'बस्स बहुत हो चुका' नाम से यह लगभग 100 पेज का छोटा सा कविता संग्रह 1997 में वाणी प्रकाशन से प्रकाशित हुआ। इसमें न तो कवि के द्वारा लिखे दो शब्द हैं और न कोई भूमिका। जो है सो बस कविताएं। एक भयावह सा मुखपृष्ठ है और आठ दस आलोचकों, कवियों और मित्रों की इनकी कविता पर सम्मतियाँ हैं। ये कविताएं पहले ही हिंदुस्तान –नवभारत टाइम्स जैसे अखबारों और युद्धरत आम आदमी- दर्द के दस्तावेज आदि पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुकी थीं। वहीं से इन्हे साभार ले लिया गया। यह काव्य संग्रह दलित चेतना के प्रखर कवि हीरा डोम को सादर समर्पित है। हीरा डोम ने हिंदी में अपने कवि कर्म से क्रांतिकारी दलित विमर्श की नीव रखी थी। इनकी कविता ' अछूत की शिकायत' 1914 में सरस्वती पत्रिका में छपी थी। इस संग्रह 'बस्स बहुत हो चुका' में पचास कविताओं का समावेश

है। अनुक्रम को देखने से पता चलता है कि पहली कविता 'पेड़' है और आखिरी 'वह दिन कब आएगा'। इस कविता संग्रह के बारे में न तो कवि कुछ कहता है और न कोई और। पर कविताएं आग के गोलों सी धधक रहीं हैं। आप यह भी ध्यान रखें कि 1997 में ही कवि की आत्मकथा 'जूठन' प्रकाशित हुई थी। दोनों का बहुत असर हुआ। कवि के रूप में वे असंख्य मूक पीड़ाओं को पेश करने की कोशिश करते हैं। सफलता से करते हैं, बेबाकी और बहादुरी से करते हैं।

बोध प्रश्न –

- हीरा डोम को कविता संग्रह समर्पित करने का क्या उद्देश्य हो सकता है ?
- संग्रह की अंतिम कविता 'वह दिन कब आएगा' के शीर्षक से कवि की किस चिंता और इच्छा का बोध होता है ?

शुरुआत में इस पुस्तक के कवर के पीछे छपी कुछ लाइनों को देखें और गौर करें कि कवि का संताप अब बर्दाश्त से बाहर हो रहा है।

गहरी पथरीली नदी में
असंख्य मूक पीड़ाएं
कसमसा रहीं हैं
मुखर होने के लिए रोष से भरी हुई।
बस्स बहुत हो चुका।
चुप रहना।

इन चार पाँच पंक्तियों के पढ़ने से यह पता चलने में देर नहीं होती कि इनको कहने वाला कवि बहुत रोष से भरा हुआ है। वह काफी गुस्से में दिखाई देता है।उसका क्रोध इसलिए नहीं कि वह दुखी है। वह दूसरों की पीड़ा से दुखी है। दूसरे भी एक नहीं अनेक हैं – असंख्य हैं। वे बेचारे अपने दर्द को बता नहीं सकते। क्यों ? समाज से भयभीत हैं ? इस लिए कवि ऐसे सभी दुखी, पीड़ित, वंचित, दलित और रोष से भरे लोगों की वाणी बन जाता है। वह समाज से साफ कह देता है कि अब समाज का दुर्व्यवहार और अधिक सहन नहीं किया जा सकेगा। जिस तरह पत्थर पड़ा रहे तो बेकार होता है, पर यदि कोई चाहे तो उसे हथियार भी बना सकता है, वैसे ही कवि इन लोगों को पत्थर की तरह निरर्थक पड़े देखना नहीं चाहता, उन्हे जगाना चाहता है। समाज को भी आगाह कर देना चाहता है कि 'बस्स बहुत हो चुका!'

बोध प्रश्न –

- अपनी समझ से बताइए कि ऐसा क्या है जो बहुत हो चुका है ?

- 'मूक पीड़ाएं' कहकर कवि किन 'असंख्य पीड़ाओं' की ओर संकेत करते हैं ? ये मूक क्यों हैं?

6.3.2 कविता के सरोकार और चुनौतियाँ

वाल्मीकि ने अपनी कविताओं द्वारा अस्पृश्यता, चातुर्वर्ण्य व्यवस्था, सामाजिक, आर्थिक व सांस्कृतिक विसंगतियों का यथार्थ चित्रण किया है। इनकी कविता में आक्रोश, संघर्ष, नकार, विद्रोह, अतीत की स्थापित मान्यताओं से है, पर इनका लक्ष्य जीवन में घृणा की जगह प्रेम, समता, बंधुता, मानवीय मूल्यों का संचार करना इनकी कविताओं का मुख्य लक्ष्य है। ये कविताएं इतने प्रश्न करती हैं कि कोई भी पाठक उनके उत्तर नहीं दे सकता। दर्द का सैलाब सी ये कविताएं खुद आम अपना बयान आप हैं। अस्पृश्यता को केंद्र में रखते हुए कवि उस पर चारो तरफ प्रहार करते हैं। बार –बार प्रहार करते हैं। यह भी कहते हैं –

जिस रास्ते से चलकर तुम पहुंचे हो
इस धरती पर
उसी रास्ते से चलकर आया मैं भी
कि आसमान को भी छू लेते हो
तुम आसानी से
और मेरा कद इतना छोटा
कि मैं छू नहीं सकता जमीन भी।

कवि को अपने समाज से, उसके रीति रिवाजों से घिन आती है और वह तिरस्कार के भाव से कह उठता है –

जूठन पर पलने वाले मेरे भाई
धिक्कार है तुम्हें
जो सह रहे हो यह नरकीय जीवन
मैं थूकता हूँ
तुम्हारे मूँ पर

कवि का आक्रामक यथार्थवाद या कहें तो यथार्थवादी शिल्प इन पंक्तियों में उभरता चला जाता है –

बस्स !
बहुत हो चुका
चुप रहना
निरर्थक पड़े पत्थर
अब काम आएंगे संतप्तजनों के

दलितों की ऐसी दयनीय स्थिति, उनकी बेबसी, लाचारी को देखकर वे खुद को रोक नहीं पाते और कह उठते हैं कि अब वे और अधिक देर तक चुप न रह सकेंगे। अपने जीवन में जाति विशेष का दंश सहते हुए हमेशा वे चुप नहीं रह सके। अपने जीवन के प्रति आक्रोश को उन्होंने अपनी कविताओं के द्वारा प्रस्तुत किया। 'मुट्ठी भर चावल" कविता में उनका यह दंश दिखाई देता है –

ओ मेरे अज्ञात,अनाम पुरखों
तुम्हारे मूक शब्द जल रहे हैं
दहकती राख की तरह
राख: जो लगातार काँप रही है।
रोष से भरी हुई।

और एक बार उन्होंने जब अपनी और अपने दलित समाज की चुप्पी तोड़ने का काम शुरू किया तो उन्होंने उनके हीनता बोध को भी 'तुम्हारी गौरवगाथा' जैसी कविताओं के द्वारा संबोधित किया है –

क्यों नहीं जाग्रत हो जाता देवता
प्राण प्रतिष्ठा के बाद
क्यों रह जाता है जड़
भूख और जुल्म देखकर

दलितों का अतीत आज भी कवि का पीछा नहीं छोड़ता। उनकी यातना बनकर वह उनसे चिपक- सा गया है। जब सारे लोग सुख-चैन की नींद ले रहे होते हैं, तब कवि अपने अतीत के घावों को कुरेदता रहता है। अपने पूर्वजों की यातनाओं की स्मृति को ताजा करता है। वह एहसास करता है कि कितना कष्ट होता अपनी इच्छाओं के विरुद्ध जीना। कविता 'बस्स बहुत हो चुका' की कुछ पंक्तियाँ देखें –

बड़ी यंत्रणा होती है
इच्छाओं के विरुद्ध जीना
या देखते देखते छिन जाना
उन क्षणों का
जिनमें हँसा जा सकता था
गुनगुनाया जा सकता था
हवाओं की तरह

इन कविताओं में दलितों की स्थिति का, उनकी अहमियत का और उनके मूल्यों का यथार्थपरक चित्रण है। हमारे समाज में दलित की क्या औकात है ? इसकी बानगी "उपोत्पाद" शीर्षक कविता देखें –

पैदा हुए, वैसे ही
जैसे होते हैं पैदा
गलियों में कुत्ते –बिल्ली।
पैदा हुए, वैसे ही
जैसे होती है खेत में पैदा होती है
खर-पतवार
हरी दूब झाड-झंखाड़
पैदा हुए, वैसे ही
जैसे खांड बनाने की प्रक्रिया से
पैदा होता है क्षीर
पेट्रोल से तार कोल
अंधरे में वैसे ही
जैसे पैदा हुए गुमनाम
उपोत्पाद की तरह

दलितों की जीवन सदा से कशमकश का शिकार रहा है। वह हमेशा गरीब रहा है। अब भी लोग उस पर हावी होते हैं। कवि का कहना है –

नहीं मिल दूध इसे
सफेद काली गाय का
नहीं खाया उसने दही और मक्खन कभी
नहीं सोया गद्देदायर बिस्तर पर
लगातार लड़ा है वह
बेहया मौसम से

इसके बावजूद कवि यह उम्मीद रखता है कि कभी तो एक दिन ऐसा आएगा जब वे भी इस परेशानी भरी जिंदगी से निजात पा सकेंगे।

ये भूखे प्यासे बच्चे एक दिन
बाहर आएंगे एक दिन
बंद अंधेरी कोठरियों से,
कच्ची माटी की गंध
साँसों में भरकर

कवि इस दिन का इंतजार कर रहा है जब समानता का अधिकार न सिर्फ कानूनी तौर पर बल्कि सही तौर पर लागू हो जाए गया। छूत अछूत का भेद भाव समाज से मिट जाएगा। दुनिया बराबर हो जाएगी

मेरी माँ ने जाने सब अछूत ही अछूत
तुम्हारी माँ ने सब बामन ही बामन
कितने ताज्जुब की बात है
जबकि प्रजनन क्रिया एक ही जैसी है
वह दिन कब आएगा
जब बामन नहीं जनेगी बामन
चमार नहीं जनेगी चमार
भंगिन भी नहीं जानेगी भंगी
तब नहीं चुभेंगे
जातीय हीनता के दंश

वे अपनी कविताओं के द्वारा यह भी बताने की लगातार कोशिश कर रहे होते हैं कि दलित बहुत बार खुद अपने ऊपर किये जा रहे अत्याचारों का विरोध नहीं कर पाते। वे प्रश्न करते हैं। क्या झाड़ू, टोकरा, राँपी, सुतारी, और जूता गाँठने के घृणा से सने उपकरण खोने का डर था। खोने के लिए दुखों, अपमानों और यातनाओं के सिवाय और था ही क्या ?

बड़ी यंत्रणा होती है ...
इच्छाओं के विरुद्ध जीना
उन क्षणों का
जिसमें हँसा जा सकता था
गुनगुनाया जा सकता था
हवाओं की तरह।

दलितों का अतीत आज उनका पीछा नहीं छोड़ता। उनकी यातना बनकर उन्हें सताता है। वे अपने पूर्वजों की यातनाओं की स्मृति को ताज़ा करते रहते हैं। यह महसूस करते हैं कि अपनी इच्छाओं के विरुद्ध जीना परेशान करता ही है।

नहीं मिल दूध इसे
सफेद काली गाय का
नहीं खाया उसने दही मक्खन कभी
नहीं सोया गद्दे बिस्तर पर
लगातार लड़ा है वह
बेहया मौसम से

दलितों का जीवन हमेशा संघर्ष से गुजरता है। वे हमेशा अभावों से घिरे रहते हैं और बार बार सामंती सोच की वर्चस्ववादी राजनीति से वे हर बार पराजित हुए।

ये भूखे प्यासे बच्चे एक दिन
बाहर आएंगे एक दिन
बंद अंधेरी कोठरियों से,
कच्ची माटी की गंध
साँसों में भरकर

पर वे दलितों के भविष्य को लेकर निराश व हताश नहीं हैं, उनमें एक आशा से भरपूर आत्मविश्वास भी है कि एक दिन वे कामयाब होंगे और उनको उनके सारे अधिकार भी जरूर मिलेंगे। कवि उस दिन का इंतजार कर रहे हैं जब भारत के संविधान का आदर ही नहीं होगा उसका कानूनी तौर पर पालन ही नहीं होगा बल्कि उसका पालन मन और आत्मा से होगा। जातीय भेद-भाव, छूत –अछूत का नामोनिशान मिट जाएगा और दलित उत्पीड़न का सफाया हो जाएगा।

तुम्हारे रचे शब्द
तुम्हें ही डसेंगे साँप बनकर
गंगा किनारे
कोई वट वृक्ष ढूंढकर
भागवत का पाठ कर लों
आत्मतुष्टि के लिए
कहीं अकाल मृत्यु के बाद
भयभीत आत्मा
भटकते –भटकते
किसी कुत्ते या सूअर की मृत देह में
प्रवेश न कर जाए
या फिर से पुनर्जन्म की लालसा में
किसी डोम या चूहड़े के घर पैदा न हो जाए।

कवि ने इन पंक्तियों में एक साथ ही भगवान, भाग्य, प्रारब्ध, पुनर्जन्म आदि सिद्धांतों और विश्वासों को ढकोसला मानकर छोड़ देने का मन बनाया है। वह बड़ी ही हिम्मत से इन सब विश्वासों को खारिज करता है। किसी भी कीमत पर इनको नहीं मानना चाहता।

स्वीकार्य नहीं मुझे
जाना मृत्यु के बाद
तुम्हारे स्वर्ग में
वहाँ भी तुम पहचानोगे मुझे
मेरी जाति से ही

बोध प्रश्न

- दलित जीवन की सबसे बड़ी समस्या क्या है ?
- कवि को किस बात से बड़ी यंत्रणा होती है ?
- कवि दलितों का क्या भविष्य देखता है ?

6.3.3 कविता में कवित्व शक्ति

भाषा :

ओम प्रकाश वाल्मीकि की भाषा गद्यात्मक है जिसमें नकार और विरोध का स्वर मुख्य रहता है। उन्होंने दलितों के जीवन की विसंगतियों, उत्पीड़न, शोषण, और दमन की अभिव्यक्ति के लिए यह गद्यात्मक भाषा सही बैठती है। इनकी भाषा सहज, तथ्यपूर्ण और आवेगमयी है जिसमें व्यंग्य का गहरा पुट भी दिखाई देता है। 'दलित साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र' लिखकर कवि ओम प्रकाश वाल्मीकि ने अपनी कविता की कवित्वशक्ति को रेखांकित किया। " यातनाओं से उपजी आक्रोशित भाषा एक तेज हथियार की तरह भीतर तक झकझोर देती है। दलित समाज की बोली के ऐसे अनेक शब्द प्रकट होते हैं, जिनसे साहित्य अनभिज्ञ था। यह दलित समाज को ताजगी देता है और भाषा की जड़ता भी टूटती है।' इस कथन से इनकी भाषा की दो विशेषताओं का पता चलता है कि एक है भाषा की आक्रामकता और दूसरे नए शब्दों का प्रयोग। इनकी भाषा की आक्रामकता शोषण और दमन के प्रतिरोध से पैदा हुई है। भाषा को लेकर कवि खुद यह कहते हैं, " भाषा को लेकर मेरी अपनी कुछ मान्यताएं हैं। शास्त्रीयता की जो कृत्रिमता है, वह मुझे असहज लगती है,इसलिए आकर्षित नहीं करती। मैं कारखाने में काम करता हूँ। मेरा संपर्क हर समय सामान्य, आम लोगों से रहता है। अवकाश के दिन या किसी विशिष्ट अवसर पर दलित बस्तियों में बीतता है। मेरे रिश्तेदार, मित्र, सामाजिक कार्यकर्ताओं से मिलता हूँ,जिनसे मेरे गहरे संबंध हैं। उनके बगैर मेरे लेखन, मेरे जीवन क कोई और औचित्य नहीं है। वे लोग मेरी प्रेरणा हैं, इन्हीं से मेरी भाषा और कथ्य बनता है। " ओम प्रकाश वाल्मीकि ने अपनी कविताओं में संस्कृतनिष्ठ परंपरागत साहित्यिक भाषा, काव्य-शैली, प्रस्तुतिकरण को नकारकर सर्व ग्राही भाषा का प्रयोग किया है। ऐसी भाषा जो दलितों की पीड़ा, अपमान और व्यथा की सही और यथार्थवादी अभिव्यक्ति बन सके। इनकी भाषा नकार और विरोध की भाषा है जिसमें युगों की यातनाएं साकार हो उठीं हैं। इनकी भाषा वर्णनात्मक है, इसमें गालियों का प्रयोग है।

बिम्ब –

कविता में बिम्ब का विशेष स्थान रहा है। ओम प्रकाश वाल्मीकि के अनुसार दलित कविता में बिम्ब दलित जीवन की त्रासदी और उसके यथार्थ को व्यक्त करते हैं। इनके जीवन में जो अंधेरा, सड़ांध,सीलन, और तंगी है वे उनके लिए दृश्य बिम्ब हैं। एक उदाहरण देखें –

मुर्दा संस्कृति की लाश पर
मंडराती छील जश्न मनाएगी
जिसके पंखों के साये में संस्कृति का तकिया बनाकर
शिकारगाह में अधलेटा- आदमखोर
निकाल रहा है
दाँत में फंसे माँस के रेशे
नुकीले खंजर से

इनकी कविता में बिंब दलित जीवन की त्रासदी और उनके यथार्थ को व्यक्त करते हैं। ओम प्रकाश वाल्मीकि की कविता 'अंधेरा', आसपास के परिवेश में गंदगी की सड़ांध, सीलन भरे तंग मकानों में सिसकती जिंदगी दलित जीवन के यथार्थ हैं जो उनके जीवन का अंग बन गए हैं। उन चीजों को दृश्य बिंब की जगह रखकर वाल्मीकि इनमें अपने जीवन का अक्स ढूंढते हैं। 'झाड़ू वाली' कविता में प्रयुक्त बिंब देखिए –

रमेसरी के हाथ में थमी बाँस की मोती झाड़ू
सड़क के ऊबड़-खाबड़ सीने पर
उड़ाती है धूल का गुबार

इन पंक्तियों में झाड़ू, धूल, धुआँ आदि दलित की जिंदगी की हकीकत हैं।

वाल्मीकि की कविताओं में सूर्य, रोशनी, प्रकाश, रत-दिन,ज्वालामुखी, समुद्र, तूफान, आदि इनकी कविताओं में शब्द भर नहीं बल्कि वे आवेगपूर्ण अनुभवों की अभिव्यक्ति है। इन कविताओं के राजनीतिक बिंब भी गहरे सरोकारों से जुड़े हैं। ये राजनीतिक प्रपंच डर पैदा करते हैं। उनके बगावती लफ़्ज़ आग की मानिंद उस आजादी के लिए हैं जिसकी आज भी उन्हें दरकार है।

प्रतीक :

प्रतीक के प्रयोग से भाव पक्ष की अभिव्यक्ति प्रभावशाली और अर्थपूर्ण बनती है। इनकी कविता में परंपरागत प्रतीक भी नए नए अर्थ देने लगते हैं। इनकी कविता में 'पेड़', ' लोकतंत्र', 'भेड़िया', 'जंगली सूअर', 'कुत्ते', आदि शोषण और दमन गुलामी के प्रतीक हैं। सामाजिक जीवन की घोर अमानुषिकता को रेखांकित करती हैं।कवि वर्षों से यातना भोग रहे लोगों को देखकर दुखी हो जाते हैं। इसमें झाड़ू, बाल्टी –कनस्तर प्रतीक के रूप में आए हैं। यथार्थवादी शिल्प है। विद्रोह भी भरपूर है। देखें –

जब भी देखता हूँ मैं
झाड़ू या गंदगी से भरी बाल्टी-कनस्तर
किसी हाथ में मेरी रगों में
दहकने लगते हैं
यातनाओं के कई हजार वर्ष एक साथ
आँखों में उतर आता है
इतिहास का स्याहपन
अपनी आत्मघाती कुटिलता के साथ
असंख्य मूक पीड़ाएं
कसमसा रहीं हैं
मुखर होने के लिए रोष से भरी हुई

मिथक –

इनकी कविता में मिथकों का भरपूर इस्तेमाल हुआ है। कर्ण, एकलव्य, शंबूक आदि इनकी कविताओं में नायक की तरह आते हैं और विद्रोह को बढ़ाते हैं। इन्होंने ऐतिहासिक,पौराणिक मिथकों के द्वारा दलित जीवन की विसंगतियों और सामाजिक संदर्भों की हकीकत को रेखांकित किया है। रामायण, महाभारत के अनेक मिथकों के द्वारा दलित जीवन को उभारा और उनके दुख-दर्द का चित्रण किया। शंबूक का चित्रण देखें –

शंबूक, तुम्हारा रक्त जमीन के अंदर
समा गया है
जो किसी भी दिन
फूटकर बाहर आएगा

धर्म, दर्शन और पौराणिक मिथकों की वाल्मीकि ने फिर से व्याख्या की। हिंदू दर्शन के अनुसार मानव मात्र की नहीं सारे जीवन में एक ही आत्मा का अंश है (ईश्वर अंश जीव अविनासी)। लेकिन दलितों के लिए शायद यह बात उन्हें ठीक नहीं लगती। इससे दलितों के लिए उनकी बेरहमी हैवानियत है आदमियत नहीं।

तुम्हारे रचे शब्द
तुम्हें ही डसेंगे साँप बनकर
गंगा किनारे कोई वटवृक्ष ढूंढ लों,
कर लों भागवत का पाठ
आत्म तुष्टि के लिए
कहीं अकाल मृत्यु के बाद
भयभीत आत्मा
भटकते भटकते

किसी कुत्ते या सूअर की मृत देह में
प्रवेश न कर जाए
या फिर पुनर्जन्म की लालसा
किसी डोम या चूहड़े के घर
पैदा न हो जाए
चूहड़े या डोम की आत्मा
बहन का अंश क्यों नहीं है
मैं नहीं जानता
शायद आप जानते हों

सीधी सी बात है कि कवि को पौराणिक आदर्श पात्र उसे नायक नहीं लगते। उनके चरित्र के दोहरे मापदंडों को कवि ने दूसरी तरह से पेश किया था। वे नायक को खलनायक की तरह पेश करके कोई बदला नहीं लेते, बल्कि जीवन –मूल्यों में छिपी विसंगतियों पर चोट करते हैं। वे सौन्दर्य-शास्त्र की प्रचलित मान्यताओं को विखंडित करते हैं।

दलित कवि के रूप में इस कविता संग्रह की कविताओं के आधार पर कवि ओम प्रकाश वाल्मीकि की काव्य भाषा परंपरागत भाषा प्रयोग से अलग है। इनकी भाषा में बोली और जन सामान्य के शब्दों की बहुतायत है। उनके अपने जीवन और परिवेश से जुड़ी शब्दावली है। इसी से दलित जीवन और समाज का सम्यक चित्रण हुआ है।

बोध प्रश्न

- ओम प्रकाश वाल्मीकि अपने शब्द कहाँ से लेते हैं ?
- कवि के द्वारा प्रयोग किये गए चार मिथकों को चुनिए।

6.3.4 बस्स बहुत हो चुका –एक अध्ययन

बस्स बहुत हो चुका की इन कविताओं के संदर्भ में डॉ श्यौराज सिंह बेचैन के शब्द आपको जरूर पढ़ने चाहिए। वे कहते हैं, " इस काव्य संग्रह की ये पंक्तियाँ हृदयस्पर्शिनी हैं, जो सूत्र युक्तियों की तरह अपने व्यापक रूप में किसी भी महाकाव्य के बराबर महत्व रखती हैं। प्रश्न होगा क्यों ? क्या इन कविताओं का कल्पनालोक स्वर्णिम है ? या कलात्मकता अभूत पूर्व है। हाँ, कविता के सवर्ण सामंती प्रतिमानों और दलित विरोधी रुझानों पूर्वाग्रह से मुक्त होकर व्यावहारिक, मौलिक और यथार्थवादी दृष्टि से देखें परखें तो दलित साहित्य की आवश्यक वेदना-विचार, विद्रोह और निर्माण के तमाम तत्व इस संग्रह की कविताओं में मिलेंगे। दलित साहित्य का तो संदर्भ ही अलग है। उसे परंपरागत चश्मे से देखना गलत है। वह मनुष्य की दुनिया में उसके अर्जित व प्रकृतिदत्त अधिकारों, अवसरों और साधनों में अपने श्रम को प्रतिफलित होते देखना चाहता है। वह मनुष्य के विचारों, व्यवहारों में व्यापक जातिभेद की गंदगी दूर करता है। तब वे स्वयं निखरी संवरी दुनिया पर हक का दावा क्यों नहीं करे ?

सामाजिक दासता झेलते वर्ग का कवि इस इक्कीसवीं सदी के आगमन पर उसके विवेक और विचारों में डॉ अंबेडकर ने जिस उन्नत आधुनिकता के रचनात्मक बीज डाले हैं वे शक्तिसूत्र डॉ अंबेडकर की मूर्तियों में नहीं, उनकी रचनाओं में छिपे पड़े हैं। दलित रचनाकार, वर्तमान और इसी बोधालोक में अपना भविष्य देखता है। खासकर समर्थ कवि ओम प्रकाश वाल्मीकि की रचनाएं संतुलित विवेक के साथ दलितों को संघर्ष के लिए प्रेरित करती हैं। उनसे ध्वनित यह होता है कि अब तक क्यों नहीं लड़ा भंगी समाज दिलोदिमाग में गंदगी बसाये रखने वालों के खिलाफ? ऐसा क्या था जिसे खोने का डर था। क्या झाड़ू-टोकरा ? अब तक चुप क्यों रहा चमार ? मुर्दा पशुओं को श्मशान पहुँचाने में सफल,मरी मनुष्यता की खाल क्यों नहीं खींची ? क्या उसे भी राँपी, सुतारी और जूता गाँठने के घृणा से सने उपकरणों के खो जाने का डर था। खोने के लिए दुखों, यातनाओं और अपमानों के सिवाय क्या था हमारे पास? मगर हमीं तो हैं मार्क्स के भारतीय सर्वहारा जिन्हें पाने के लिए सारा जहां हमीं से छिन गया है। (संवेदन और विद्रोह की कविताएं –डॉ श्यौराज सिंह बेचैन –"तीसरा पक्ष" (अक्टूबर –दिसंबर 2000)

बोध प्रश्न –

- कवि की काव्य रचना का उद्देश्य क्या है ?
- आलोचक की निगाह में कवि वाल्मीकि की कविता का प्रमुख गुण कौनसा है ?

6.4 पाठ सार

इस इकाई में प्रख्यात दलित साहित्यकार श्री ओम प्रकाश वाल्मीकि के प्रमुख काव्य संग्रह ' बस्स बहुत हो चुका' की पचासेक कविताओं के आधार पर उनकी काव्य कला, दलित चेतना और सरोकार का विवेचन किया गया है। दलित कवि के पास यातना और वेदना के अनुभवों का उफनता हुआ लावा है और कविता उनके दर्द को बयान करने का तरीका है। बाबा साहब अंबेडकर ने कहा था कि उपेक्षितों और दलितों की बहुत बड़ी दुनिया है जिसे हमें नहीं भूलना चाहिए। बजरंग बिहारी तिवारी के अनुसार दलित कविता के तीन तत्व हैं –अनुभव, आक्रोश, और अधिकार बोध। इन तीनों का समावेश इन कविताओं में है। इस कविता संग्रह की कविताओं में ब्राह्मणवादी व्यवस्था के प्रति प्रतिरोध और घृणा का भाव दिखाई देता है। इसके साथ ही इन कविताओं में सवर्णों के छल, चालबाजियाँ, वैमनस्यता, घृणा, भय आदि के भाव हैं, किन्तु जो भाव प्रधान है और सर्वत्र छाया हुआ है वह है प्रतिरोध का भाव। चुनौती देती कविताएं जैसे 'बस्स बहुत हो चुका' के द्वारा कवि ने जैसे कह दिया है 'इनफ इज इनफ'। वे दलितों से भी पूछते हैं कि 'तब तुम क्या करोगे " और उनसे क्रांति करने, प्रतिरोध करने का आव्हान करते हैं। कवि खामोश रहने के नतीजों से खूब वाकिफ हैं। इसलिए वे खुद भी खूब बोलते हैं और दलितों के मौन को भी तोड़ना चाहते हैं। तभी तो कवि अपने इस कविता संग्रह के शीर्षक में विस्मयादि

बोधक चिन्ह का प्रयोग तो करते ही हैं, साथ ही 'बस' का प्रयोग न कर उसका बोलचाल का स्वरूप 'बस्स' का प्रयोग करते हैं। बाद के संग्रह 'अब और नहीं ' (2009) में भी तो यही बात है। प्रतिरोध का अतिरेक इसे कहा जा सकता है।

6.5 पाठ की उपलब्धियां

इस इकाई के पाठ से निम्नलिखित उपलब्धियां प्राप्त होती हैं :

- ओम प्रकाश वाल्मीकि के कविता संग्रह 'बस्स बहुत हो चुका' की कुछ कविताओं से परिचय हुआ।
- कवि की कविताओं के आधार पर उनकी दलित चेतना और प्रमुख सरोकारों का पता चला।
- कवि की कविता की काव्यगत विशेषताओं का ज्ञान हुआ।
- कवि के मानवतावादी स्वर का बोध हुआ और उसकी सीमा और प्रसार का बोध हुआ।
- कवि के कवि कर्म के आधार पर उनके दलित जीवन के उत्थान के लिए किये गए लेखन का विश्लेषण करने का आधार मिल सका।

6.6 शब्द संपदा

1. अंगीकार - स्वीकृति; मंजूरी; ग्रहण करना, अपने ऊपर लेना,ज़िम्मेदारी उठाना
2. संताप - अग्नि, धूप आदि का बहुत तीव्र ताप, आँच, दुख, कष्ट, मुसीबत, तकलीफ़, दुख
3. संतप्तजन - दुःखी, उदास, खिन्न, दग्ध (जैसे—संतप्त मन, संतप्त जन)
4. चातुर्वर्ण्य व्यवस्था - वर्ण के कई अर्थ होते हैं, जैसे प्रकार, क्रम, रंग या वर्ग। वर्ण व्यवस्था समाज को चार वर्णों (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र) में विभाजित करती है।
5. वर्चस्ववादी- श्रेष्ठ या मुख्य होने की अवस्था या भाव, प्रधान्य, तेजस्वी होने का भाव
6. सर्वहारा - सर्वहारा समाज की नीचे वाली श्रेणियों को कहा जाता है, जो अक्सर शारीरिक श्रम से जीवनी चलाते हैं। औद्योगिक समाजों में अक्सर कारख़ानों में काम करने वाले मज़दूरों को 'प्रोलिटेरियट' कहा जाता था लेकिन कभी-कभी कृषकों और अन्य ग़रीब मेहनत करने वाले लोगों को भी इसमें शामिल किया जाता है। दलित वर्ग भी इसी कारण खुद को इनमें शामिल करते हैं।
8. मूक – गूंगा, जो कुछ भी बोल न रहा हो, · मौन; शांत · बोलने में असमर्थ, लाचार

9. विसंगति - संगति का अभाव; असंगति, समकालीन जीवन की वह स्थिति जहाँ प्रत्येक मूल्य या धारणा का ठीक उलटा रूप दिखाई पड़ता है (एबसर्डिटी)

10. अतिरेक - आवश्यकता से अधिक होना, बढ़ोतरी

6.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड –(अ)

दीर्घ प्रश्न

निम्न लिखित प्रश्नों का उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए

1) अपनी तमाम पीड़ाओं और वेदनाओं के बावजूद कवि ओम प्रकाश वाल्मीकि की भविष्य के प्रति क्या सोच है ?

2) "बस्स! बहुत हो चुका"काव्य संग्रह की कविताओं से कुछ उदाहरण देते हुए कवि की दलित कविता को लेकर विचारधारा को प्रस्तुत कीजिए।

3) कवि ओम प्रकाश वाल्मीकि के काव्य कौशल पर सारगर्भित टिप्पणी कीजिए।

4) "ओम प्रकाश वाल्मीकि की कविता में दलित जीवन के सरोकार और चुनौतियाँ कूट कूट कर भरी पड़ी हैं।"इस कथन के पक्ष में दलील पेश कीजिए।

5) 'बस्स! बहुत हो चुका'कविता का परिचय देते हुए उसकी समीक्षा कीजिए।

खंड –(ब)

निम्न लिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 250 शब्दों में दीजिए

1) प्रतीकों के प्रयोग द्वारा ओम प्रकाश वाल्मीकि अपने पाठकों को क्या संदेश देना चाहते थे?

2) 'उपोत्पाद' कविता में किस बात की ओर संकेत किया गया है और क्यों ?

3) ओम प्रकाश वाल्मीकि की कविताओं को पढ़कर आप पर जो प्रभाव होता है उसे अपने शब्दों में लिखिए।

4) दलितों को 'मौन' तोड़ने को ये कविताएं किस हद तक प्रेरित करती हैं ?

5) ओम प्रकाश वाल्मीकि किस बिम्ब का बार बार प्रयोग करते हैं और क्यों ?

6) 'ओम प्रकाश वाल्मीकि की कविता में दलित चेतना' पर टिप्पणी लिखिए।

7) कवि के अनुसार "झाड़ू" दलित की कर्मठता और निपुणता का किस प्रकार प्रतीक हो जाता है?

I. सही विकल्प चुनिए

1) ओम प्रकाश वाल्मीकि के कविता संग्रह के नाम बताइए -

क) बस्स!बहुत हो चुका ख) सदियों का संताप ग) अब और नहीं घ) ये सभी

2) हिंदी में पहला दलित कवि माना जाता है –

क) ओम प्रकाश वाल्मीकि ख) हीरा डोम ग) जय प्रकाश कर्दम घ) कबीरदास

3) 'बस्स बहुत हो चुका' कविता का प्रमुख स्वर है –

क) पीड़ा ख) वेदना ग) प्रतिरोध घ) चिंता

4) दलित कविता का तत्व नहीं है-

क)अनुभव ख) आक्रोश ग) परंपरा का निर्वाह घ) अधिकार बोध

5) असंगत को चिन्हित कीजिए -

क)नवभारत टाइम्स ख)युद्धरत आम आदमी ग) सरस्वती घ) अछूत की शिकायत

II. रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए

1) कवि ओम प्रकाश वाल्मीकि की कविताएं संतुलित विवेक के साथ दलितों को _____ के लिए प्रेरित करती हैं।

2)। इन कविताओं के लेखन का उद्देश्य पाठक को आनंदित करना नहीं बल्कि _____ और _____ करना है।

3) जीवन संघर्ष में आदमी का सहारा बनकर जो हौसला दे, वही _____ है।

4) वाल्मीकि की कविता में 'पेड़', ' लोकतंत्र', 'भेड़िया', 'जंगली सूअर', 'कुत्ते', आदि शोषण और दमन गुलामी के _____ हैं।

5) ओम प्रकाश वाल्मीकि की काव्य-भाषा _____ है जिसमें नकार और विरोध का स्वर मुख्य रहता है।

6) कवि ओम प्रकाश वाल्मीकि नायक को खलनायक की तरह पेश करके कोई बदला नहीं लेते, बल्कि जीवन –मूल्यों में छिपी _____ पर चोट करते हैं।

III. सुमेल कीजिए -

1. मिथकीय पात्र	अ) श्रेष्ठ या मुख्य होने की अवस्था
2. चातुर्वर्ण्य व्यवस्था	आ) मजदूर और पिछड़ा वर्ग
3. सर्वहारा	इ) भगवान, भाग्य, प्रारब्ध, पुनर्जन्म
4. हिन्दू-दर्शन	ई) मनुवाद का विरोध
5. दलित दर्शन	उ) ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र
6. वर्चस्ववादी	ऊ) कर्ण, एकलव्य, शंबूक

6.8 पठनीय पुस्तकें

1. बस्स बहुत हो चुका (कविता संग्रह) – ओम प्रकाश वाल्मीकि, गौतम बुक सेंटर, दिल्ली।

2. दलित साहित्य अनुभव, संघर्ष एवं यथार्थ – ओम प्रकाश वाल्मीकि, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली।

इकाई 7 : दलित आत्मकथा : एक परिचय

इकाई की रूपरेखा

7.1 प्रस्तावना

7.2 उद्देश्य

7.3 मूल पाठः दलित आत्मकथा

7.3.1. आत्मकथा

7.3.2. दलित आत्मकथा

7.3.3. प्रमुख दलित आत्मकथाएं

7.3.4. दलित आत्मकथा की विशेषताएँ

7.4. पाठसार

7.5. पाठ की उपलब्धियाँ

7.6 शब्द संपदा

7.7. परीक्षार्थ प्रश्न

7.8. पठनीय पुस्तकें

1.1 प्रस्तावना

आत्मकथा लेखक के गत जीवन में घटित विभिन्न घटनाओं का एक विशेष दस्तावेज है। इसमें लेखक अपने जीवन में घटित विभिन्न घटनाओं को सोदाहरण प्रस्तुत करने की चेष्टा करता है। इसी कारण इसे आत्मचरित्र, आत्म जीवनी, अपनी कहानी, आत्मवृत्त और मेरी कहानी आदि नामों से भी बुलाया जाता है। आत्मकथा व्यक्ति के जीवन से संबंधित होने के कारण, उस व्यक्ति के जीवन से संबंधित विभिन्न सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक परिस्थितियों का विश्लेषण करते हुए, संस्कृति, रीति रिवाज आदि सभी विषयों की चर्चा भी करती है। अतः आत्मकथा व्यक्ति की वैयक्तिक एवं सामाजिक रचना है। व्यक्ति और समाज के अंतः संबंधों की चर्चा इसमें प्रमुख रूप से होती है। इसी कारण वह जिस समाज से आता है उस समाज की विभिन्न स्थितियों को लेकर चर्चा करना आत्मकथा का स्वाभाविक विषय रहा है। इसी सिलसिले में दलित साहित्य में दलित आत्मकथा की चर्चा भी होती है। हजारों सालों से जाति बनाम उत्पीड़न के शिकार बने दलित लोगों की वास्तविक स्थिति को जस का तस समाज के सामने रखकर उन्हे जागरूख करना और अपने अधिकारों के प्रति सतर्क करना दलित साहित्य का मुख्य उद्धेश्य है। है। मोहनदास नैमिशराय, ओमप्रकाश वाल्मीकि, कौशल्या बैसंत्री, डी.आर. जाटव, सूरजपाल चौहान, माता प्रसाद, श्योराज सिंह बेचैन, तुलसीराम, सुशीला टाकभौरे आदि लोगों ने अपनी आत्मकथाओं के माध्यम से दलित समाज की संवेदना को विस्तृत रूप में प्रस्तुत करने की चेष्टा

की है। दलित आत्मकथाएं दलित जीवन के संघर्ष एवं समसामयिक सामाजिक संवेदना को स्पष्ट रूप में दिखाने की चेष्टा करती है। अतः दलित आत्मकथा दलितों के जीवन में गठित विभिन्न घटनाओं का सजीव चित्रण है।

7.2 : उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप-

- आत्मकथा एवं दलित आत्मकथा के मुख्य तत्वों से परिचित होंगे।
- दलित आत्मकथा की आवश्यकता को जानेंगे।
- दलित आत्मकथाओं के द्वारा समाज की वास्तविक स्थिति का अध्ययन कर सकेंगे।
- दलित आत्मकथाकार एवं उनकी रचनाओं के बारे में जानेंगे।
- दलित आत्मकथा और अन्य आत्मकथाओं के बीच के अंतर जानेंगे।

7.3 मूल पाठः दलित आत्मकथा

7.1.1. आत्मकथाः

आत्मकथा किसी लेखक के जीवन में घटित विभिन्न घटनाओं का विवरणात्मक व्याख्यान है। जिसमें लेखक के जीवन अनुभव को यथारूप प्रस्तुत करने के प्रयत्न होते हैं। अर्थात लेखक का जीवन और उनके जीवन से जुड़े विभिन्न सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक विषयों की चर्चा भी होती है। आत्मकथा को लेकर विभिन्न साहित्यकारों ने विभिन्न प्रकारों से परिभाषित करने की चेष्टा की है। ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी के अनुसार आत्मकथा "The story of once life written by himself". शर्टर ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी के अनुसार "Autobiography the writings of once own history. The story of once life written by himself. अर्थात आत्मकथा अपने द्वारा अपने बारे में लिखित एक विशेष कहानी है। हिंदी साहित्य कोश के अनुसार “आत्मकथा में लेखक अपने जीवन के सुख- दुख का सिंहावलोकन समग्रता से करता है। आत्मकथा लेखक के जीवन का संबंध वर्णन है। आत्मकथा के द्वारा अपने बीते हुए जीवन का सिंहावलोकन और एक व्यापक पृष्ठभूमि में अपने जीवन का महत्व दिखलाया जाना संभव है।” डॉ नगेंद्र के अनुसार "अपने संबंध में किसी मिथक की रचना नहीं करता, कोई स्वप्न सृष्टि नहीं रचता, वरन् अपने गत जीवन के खट्टे, मीठे, उजाले, अंधेरे, प्रसन्न, विषण्ण, साधारण, असाधारण, संचरण पर मुड़कर एक दृष्टि डालता है, अतीत को पुनः कुछ क्षणों के लिए स्मृति में जी लेता है और अपने वर्तमान तथा अतीत के मध्य सूत्रों का अन्वेषण करता है। डॉ. श्याम सुंदर घोष के अनुसार "आत्मकथा समय प्रवाह के बीच तैरने वाले व्यक्ति की कहानी है। इसमें व्यक्ति के जीवन का जौहार प्रकट है। वहां समय की प्रवृत्तियां और विकृतियां भी प्रकट होती है।” गोविंद त्रिगुणायन के अनुसार "आत्मकथा लेखक के जीवन की दुर्बलताओं, सभ्यताओं आदि का

वह संतुलित और अवस्थित चित्रण है, जो उसके संपूर्ण व्यक्तित्व के निष्पक्ष उद्घाटन में समर्थ होता है।" डॉ. शांति खन्ना के अनुसार आत्मकथा "जब लेखक किसी अन्य व्यक्ति के जीवन चरित्र को चित्रित करने की अपेक्षा अपने ही व्यक्तित्व का विश्लेषण विवेचन पूर्ण रूप से करता है, तब वह आत्मकथा कहलाती है। आत्मकथा का नायक लेखक स्वयं होता है, इसमें लेखक जीवन की महत्वपूर्ण घटनाओं का वर्णन करता है। आत्मकथा लेखक आत्म विवेचन, आत्म विश्लेषण के दृष्टिकोण से लिखता है। इसके साथ वह आत्म प्रचार की भावना से भी व्यक्तिगत जीवन का विवेचन करता है। वह चाहता है कि उसके अनुभवों का लाभ अन्य लोग भी उठा सके।" आत्मकथाकार केवल साहित्यकार ही नहीं बल्कि राजनीतिक, सामाजिक एवं धर्मिक क्षेत्र से भी हो सकते है, लेकिन सर्वप्रतिष्ठित होना भी जरूरी है। इसी प्रकार प्रभा खेतान का कहना है कि "आत्मकथा के मूल में स्मृतियां होती है उन्हीं के आधार पर आत्मकथा का ताना-बाना बुना जाता है।" आत्मकथा लेखक का ही लेखा जोखा दस्तावेज है। अपने जीवन के विभिन्न क्षणों का ब्यौरा है। इसमें लेखक ही नायक है। यह वैयक्तिक पक्ष होने के साथ-साथ समाजिक पक्ष भी है। यह लेखक के जीवन का इतिहास होने के साथ-साथ उनके जीवन का पुनर्व्याख्यान भी है। हिंदी आत्मकथा के संदर्भ में बनारसीदास कृत 'अर्धकथानक' को पहली आत्मकथा के रूप में माना जाता है।

बोध प्रश्न –

- डॉ. नगेन्द्र ने आत्मकथा के बारे में क्या कहा है ?

7.1.2. दलित आत्मकथाः

दलित आत्मकथा अन्य आत्मकथाओं से अलग एवं विशेष आत्मकथा है। इसमें व्यक्ति की चेतना ही नहीं सामाजिक चेतना भी दिखती है। दलित आत्मकथा के बारे में जानने के लिए दलित साहित्य के बारे में जानना भी आवश्यक है। वास्तव में दलित साहित्य दलित चेतना का साहित्य है। हजारों सालों से जिन लोगों को जाति या धर्म के नाम पर वंचित रखा है उन सब की वेदना, यातना, आशा, आहें आदि सभी विषयों की चर्चा इसके अंतर्गत होती है। वर्ण व्यवस्था के नाम पर दलितों को आदि से लेकर आज तक सभी सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक सुविधाओं से वंचित किया गया है। जिस वर्ण व्यवस्था ने जातीय अस्मिता के नाम पर कुछ ही वर्णों को श्रेष्ठ घोषित कर, दलितों को हमेशा के लिए अछूत व निम्न कहा है। उसी वर्ण व्यवस्था के खिलाफ आवाज उठाना दलित साहित्य का मुख्य कर्तव्य है। डॉ. बाबासाहेब अबेडकर की विचारधारा का अनुपालन करते हुए समता, और बंधुत्व की नीति को अपनाते हुए, पूरे समाज को एक रास्ते पर लाना इस साहित्य का महान उद्देश्य है। गौतम बुद्ध की समतामूलक समाज का

निर्माण भी इसी विचारधारा का मुख्य विषय रहा है। इसी विचारधारा को अपनाते हुए हिंदी साहित्य में दलित साहित्य के तहत अनेक रचनाकारों ने कहानी, उपन्यास, कविता, नाटक तथा आत्मकथा के माध्यम से दलित जीवन की व्यथा कथा को सक्षम ढंग से प्रस्तुत करने की चेष्टा करते आ रहे हैं।

दलित साहित्य दलितोत्थान का साहित्य है। बी. आर. अंबेडकर की विचारधारा से प्रेरित यह साहित्य दलित जीवन की यथार्थ कथा को जस का तस समाज के सामने रखना चाहता है। दलित समाज की वास्तविक स्थिति को जनता के समक्ष रखकर दलित जीवन में घटने वाली विभिन्न घटनाओं के प्रति प्रधान समाज का ध्यान आकर्षित करना इसका मुख्य उद्देश्य है। इस सिलसिले में दलित साहित्य काफी हद तक सफल रहा है। कविता, कहानी, उपन्यास,नाटक के साथ-साथ आत्मकथा भी इस दिशा में अग्रसर है। दलित आत्मकथा दलित जीवन की वास्तविक कथा है। अन्य विधाओं से भी आत्मकथा अत्यंत प्रभावित विधा है। आत्मकथा में लेखक अपने जीवन के साथ-साथ दलित समाज की वास्तविक स्थिति को भी प्रस्तुत करने के कारण उसे दलित समाज का दस्तावेज भी माना जाता है। दलित आत्मकथा के महत्व को दृष्टि में रखकर अनेक विद्वानों ने अनेक प्रकारों से उसे परिभाषित करने की चेष्टा की है। दलित साहित्यकार शरण कुमार लिंबाले अपनी पत्नी के प्रश्न पर उत्तर देते हुए कहा है कि "फिर भी मैं सोचता हूं, यह सोच कर कि जो जीवन मैंने जिया वह मेरा नहीं है, मेरे जैसे हजारों लाखों का जीवन है। मुख्य बात है कि मैंने जो अमानवीय जीवन जिया, लाखों यातनाओं का सामना किया फिर यहां तक पहुंचा।" ओमप्रकाश वाल्मीकि अपनी आत्मकथा जूठन के संदर्भ में लिखते हैं कि "दलित जीवन की पीड़ाएं असहनीय और अनुभव दग्ध हैं। ऐसे अनुभव जो साहित्यिक अभिव्यक्तियों में स्थान नहीं पा सके। एक ऐसी समाज व्यवस्था में हमने सांस ली है, जो बेहद क्रूर और अमानवीय है। दलितों के प्रति असंवेदनशील भी।" इतना ही नहीं आगे दलित लेखन की विशेष शैली पर बात करते हुए लिखते हैं कि "इन अनुभवों को लिखने में कई प्रकार के खतरे थे। एक लंबी जद्दोजहद के बाद मैंने सिलसिलेवार लिखना शुरू किया। तमाम कष्टों, यातनाओं, उपेक्षाओं, प्रताड़नाओं को एक बार फिर जीना पड़ा। उस दौरान गहरी मानसिक यंत्रणाएं मैंने भोगी। स्वयं को परत-दर-परत उधेड़ते हुए कई बार लगा -- कितना दुखदाई है यह सब! कुछ लोगों को यह अविश्वसनीय और अतिरंजना पूर्ण लगता है। दलित आत्मकथाएँ दलित समाज की सामाजिक स्थिति को सही ढंग से प्रस्तुत करने वाली सही आत्मकथा है। दलित आत्मकथाओं में दलित स्त्रियों की आत्मकथाओं को अलग ढंग से विशेषकर देखने की स्थिति आज रही है। पुरुषों के द्वारा लिखित आत्मकथाएं केवल सामाजिक दमन और जाति बनाम शोषण पर ही अधिक जोर दिया है। लेकिन स्त्रियों के द्वारा लिखित आत्मकथाओं में घर के अंदर और बाहर का भी शोषण स्पष्ट रुप में प्रकट होता है। घर के अंदर पुरुषवादी वर्चस्व से और घर के बाहर

जातिवादी वर्चस्व से उन्हे संघर्ष करना पडता है। इस संदर्भ में दोहरा अभिशाप की लेखिका कौशल्या बैसंत्री का कहना है कि- "मैं लेखिका नहीं हूं ना साहित्यिक, लेकिन अस्पृश्य समाज में पैदा होने से जातीयता के नाम पर जो मानसिक यातनाए सहन करनी पड़ी इसका मेरे संवेदनशील मन पर असर पड़ा। मैंने अपने अनुभव खुले मन से लिखे हैं। पुरुष प्रधान समाज औरतों का खुलेपन बर्दाश्त नहीं कर सकता। पति तो इस ताक में रहता है कि पत्नी अपने पक्ष को उजागर करने के लिए चरित्र हीनता का ठप्पा लगा दे" अतः दलित आत्मकथाओं का विवेचन भी स्त्री- पुरुषों के लेखन के संदर्भ में अलग-अलग ढंग से ही अध्ययन किया जाता है। दलित आत्मकथा का आरंभ हिंदी साहित्य में 90 के दशक से माना जाता है। मोहनदास नैमिशराय के द्वारा लिखित 'अपने-अपने पिंजरे' पहली दलित आत्मकथा है। इसके पहले भगवान दास के द्वारा लिखित 'मैं भंगी हूँ' का प्रकाशन होने पर भी वह स्वयं आत्मकथा के रूप में घोषित न करने के कारण 'अपने अपने पिंजरे' को पहली हिंदी दलित आत्मकथा के रूप में स्वीकार किया जाता है। दलित संवेदना को चित्रित करने वाले मुख्य आत्मकथा कार और उनकी रचनाएं निम्न है:

बोध प्रश्न

- शरणकुमार लिंबाले ने दलित आत्मकथा के महत्त्व के बारे में क्या कहा ?

7.3.3. मुख्य दलित आत्मकथाएः

लेखक	-	आत्मकथा
1.मोहनदास नैमिशराय	-	अपने अपने पिंजरे
2.ओमप्रकाश वाल्मीकि	-	जूठन, भाग -1, 2
3.सूरजपाल चौहान	-	तिरस्कृत, संतप्त
4.कौशल्या बैसंत्री	-	दोहरा अभिशाप
5.सुशीला टाकभौरे	-	शिकंजे का दर्द
6.श्योराज सिंह बेचैन	-	मेरा बचपन मेरे कंधों पर
7.माता प्रसाद	-	झोपड़ी से राजभवन तक
8.तुलसीराम	-	मुर्दहिया, मणिकर्णिका
9.रूपनारायण सोनकर	-	नागफनी
10.डॉ. धर्मवीर	-	मेरी पत्नी और भेड़िया
11.डी.आर. जाटव	-	मेरा सफ़र मेरी मंजिल
12.श्यामलाल जदिया	-	एक भंगी उपकुलपति की आत्मकथा

7.3.4. दलित आत्मकथा की विशेषताएः

दलित आत्मकथा की विशेषताओं के संदर्भ में चर्चा करते समय दलित साहित्य की मुख्य रुप रेखा की चर्चा करना उचित होगा। दलित साहित्य परंपरागत सामाजिक रूढ़ियों पर प्रहार करते हुए नवचेतना की कामना करता है। अंबेडकरवादी विचारधारा का अनुपालन करते हुए वर्ण व्यवस्था की कुरीतियों के विरोध में आवाज़ उठाते हुए सम-समाज की स्थापना करना इसका मुख्य उद्देश्य है। मुख्यतः जाति के नाम पर, धर्म के नाम पर, रीति-रिवाजों के नाम पर दलितों को जिस प्रकार प्रधान जीवन धारा से अलग रखकर, उन्हें निम्न व अछूत घोषित कर जिस तरह उन्हे अपमान और अवहेलनाओं का शिकार बनाया जाता है उन तमाम रीति-रिवाजों पर विरोध प्रकट कर दलितों को अन्य लोगों के साथ बराबर की दर्जा देना दलित साहित्य की मुख्य नीति है। बुद्ध के समता मूलक सिद्धांत को अपनाते हुए, भाईचारे की भावना को प्रतिस्थापित करना तथा मनुष्यों के बीच वर्ण व्यवस्था के कारण पैदा हुए अंतराल को खत्म करना इस साहित्य का मुख्य उद्देश्य भी है। दलित आत्मकथा भी इन्हीं विचारों को अपनाते हुए आगे बढ़ती है। दलित आत्मकथाकार अपनी जिंदगी की वास्तविक स्थिति को जनता के समक्ष रखते समय एक विशेष प्रकार के मानसिक संघर्ष का शिकार बनता है। इस प्रकार के संघर्ष का बयान करते हुए मोहनदास नैमिशराय लिखते है कि “आत्मकथाएं लिखते हुए दलित लेखकों को गर्म सलाखें छूने जैसा अनुभव होता है। क्योंकि आत्मकथाओं में इतिहास के साथ उनकी स्मृतियां भी उतरती है। पीड़ा और आक्रोश उभरता है। उनके तल्ख जीवन की सच्चाई या जिसमें उनके लिए सिर्फ बेचैनी का सबब होता है।” दलित आत्मकथा के मुख्य विशेषताओं को निम्न रूप में देखा जा सकता हैं-

1 दलित आत्मकथा व्यक्ति या समाज के वस्तु पक्ष को प्रस्तुत करती है।

2. व्यक्ति के दुख को जाति या समुदाय के दुख के रूप में बदलकर उसे प्रस्तुत करने की चेष्टा करती है।

3. वर्ण व्यवस्था की कुरीतियों को सोदाहरण प्रस्तुत करने की चेष्टा करती है।

4. अंबेडकरवादी विचारधारा को शत प्रतिशत अनुपालन करती है।

5. एक विशेष वैकल्पिक साहित्यक विचारधारा के निर्माण में भागीदार बनती है।

6.परंपरागत साहित्यिक विचारों के विरोध में आवाज उठाते हुए, नवीन चेतना के साथ नवीन शैली में अपनी बात को प्रकट करती है।

7.समता, बंधुत्व की आवाज देती है।

8. समकालीन समाज की संवेदना के साथ जोड़कर दलित अस्मिता को आगे बढ़ाती है।

9. पुरुषों की आत्मकथाओं से भी स्त्रियों की आत्मकथाएं अधिक संवेधनशील और समाज की दोहरी नीति को प्रस्तुत करने में आगे रही है।

10. दलित स्त्रियों की आत्मकथाएं पितृसत्तात्मक व्यवस्था की नीति पर प्रहार प्रकट करते हुए स्त्रियों के पक्ष में खड़े होकर अपनी आवाज सुनाती है।

11. दलित स्त्रियों की आत्मकथाएं अपनी संवेदना को अलग ढंग से प्रस्तुत करने में सफल रही है। क्योंकि दलित स्त्रीयां घर और बाहर जाति बनाम उत्पीड़न का शिकार होती रही है।

12. दलित आत्मकथा सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक परिदृश्य को सोदाहरण प्रस्तुत करने में सफल रही है।

13. दलित आत्मकथा का लेखक या लेखिका ही आत्मकथा का नायक या नायिका बनकर अपने जीवन में गठित विभिन्न घटनाओं को, तत्कालीन सामाजिक नीति के साथ जोड़कर प्रस्तुत करने की चेष्टा करते हैं।

14. दलित आत्मकथाओं की भाषा सामान्य एवं प्रत्येक समाज की भाषा होती है।

15. भषा के शब्द विन्यास, वाक्य विन्यास दलित समाज की संस्कृति एवं भाषिक संरचना पर आधारित होते है।

बोध प्रश्न

- दलित आत्मकथा की कोई तीन विशेषताएँ बताइए।

7.4 पाठ सार

आत्मकथा लेखक के जीवन में घटित विभिन्न घटनाओं का पुनर्व्याख्यान है। इसमें लेखक अपने अनुभवों को यथार्थ रुप में प्रस्तुत करने की चेष्टा करता है। सामान्यतः आत्मकथाओं में लेखक अपने वैयक्तिक विषयों की चर्चा अधिक मात्रा में करता है। लेकिन दलित आत्मकथा की चर्चा सामाजिक एवं वैयक्तिक भी है। हजारों सालों से दलितों पर किए गए अन्याय अत्याचार एवं अपमानों को वास्तविक रूप से प्रस्तुत करने वाला यह एक विशेष प्रमाण पत्र है। दलित आत्मकथा की भाषा तथाकथित प्रामाणिक सिद्धांतों के अनुरूप न होकर स्वतंत्र रूप से दलित समाज की भाषाई संरचना के अनुसार बनती है। शब्द और वाक्य विन्यास का उपयोग भी इसी पक्ष में होता है। इसलिए इस भाषा को जिंदगी से जुड़ी हुई भाषा कहते हैं। आत्मकथा में दलित साहित्यकार अपने भोगे हुए यथार्थ को जस का तस प्रस्तुत करने की चेष्टा करता है। इन आत्मकथाओं में जाति बनाम संस्कृति की पीड़ा दिखती है। धर्म के नाम पर किए गए अपमान और अवहेलना यहां पर स्पष्ट रूप से दिखाई देती हैं। यह केवल एक व्यक्ति या एक समाज की अभिव्यक्ति नहीं बल्कि समूचे दलित समाज की समग्र अभिव्यक्ति है। दलित समाज विभिन्न उप जातियों में विभाजित होने के कारण एक-एक उपजाति की चर्चा विशेष रूप में की जाती है। एक व्यक्ति के दुखों और यातनाओं को पूरे दलित समाज के दुख और यातनाओं के रूप में स्वीकार किया जाता है। दलितों में दलित स्त्रियों की आत्मकथाओं को लेकर भी चर्चा प्रमुख रूप

से होती है। पितृसत्तात्मक व्यवस्था की सोच पूरे विश्व के पुरुषों पर हावी होने के कारण दलित स्त्रियों के अधिकारों की चर्चा भी इस संदर्भ में प्रमुख रूप से होती है। दलित स्त्रियों की यातनाएं पुरुषों की यातनाओं से भिन्न एवं अधिक संवेदनशील है। दलित स्त्रियां घर और बाहर जाति बनाम अपमान और अवहेलनाओं का शिकार होती रही है। घर के अंदर पितृसत्तात्मक व्यवस्था वाली मानसिकता के पुरुषों से और घर के बाहर क्रूर वर्णवादी व्यवस्था के लोगों की नीति से हमेशा वह दुख की रानी बन कर जीवनयापन करती है। इसी कारण दोनों की आत्मकथाओं में स्पष्ट अंतर दिखाई देता है। अतः तमाम परंपरागत साहित्यिक विधाओं से अलग होकर दलित जीवन की संवेदना को वास्तविक रूप में प्रकट करने वाली एक विशेष विधा के रूप में दलित आत्मकथा को स्वीकार किया जा सकता हैं।

7.5 उपलब्धियाँ

आत्मकथा व्यक्ति के गत जीवन में घटित विभिन्न घटनाओं के संदर्भ में लिखित एक विशेष कहानी है।। इसी कारण आत्मकथा को किसी व्यक्ति के जीवन में घटित विभिन्न घटनाओं के लेखा-जोखा इतिहास भी कहते हैं।

1. किसी भी समाज और उस समाज में रहने वाले लोगों के जीवन को सही ढंग से जानने के लिए आत्मकथा का अध्ययन अत्यंत उपयोगी होती है। क्योंकि आत्मकथा व्यक्ति और समाज के ऐतिहासिक संबंधों को विस्तृत रूप में चर्चा करने वाली एक ऐतिहासिक साधन भी है।
2. समाज और सांस्कृतिक भिन्नता के अनुसार आत्मकथाओं की शैली में भी अंतर दिखाई देता है। इसी कारण दलित आत्मकथाओं को अन्य आत्मकथाओं से अलग माना जाता है। अन्य आत्मकथाओं में केवल व्यक्ति के वैयक्तिक जीवन में घटित विभिन्न घटनाओं के समाहार को महत्व दिया जाता है लेकिन दलित आत्मकथाओं में व्यक्ति का जीवन तथा सामाजिक एवं सांस्कृतिक घटनाओं का प्रभाव भी दिखाया जाता है। अर्थात वैयक्तिक होने के साथ-साथ दलित आत्मकथाएं सामाजिक भी है।
3. वर्ण व्यवस्था की नीतियों के कारण उत्पन्न अमानवीय स्थिति को सोदाहरण समझाने की चेष्टा दलित आत्मकथाओं में ही दिखाई देती है।
4. दलित समाज के लोग आदि से लेकर वर्तमान तक जिस प्रकार के अपमान या अवहेलनाओं का शिकार होना पड़ा, अछूत होने के कारण जिस प्रकार से गांव की प्रधान जीवन स्रवंति से दूर रहना पड़ा और परंपरागत धार्मिक विश्वासों के कारण जिस प्रकार वंचित होना पड़ा, आदि सभी विषयों की चर्चा दलित आत्मकथाओं में प्रस्तुत होती है।

7.6 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड(अ)

दीर्घ प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. आत्मकथा की परिभाषा देते हुए उसके मुख्य तत्वों पर प्रकाश डालिए।
2. दलित आत्मकथा की परिभाषा देते हुए उसके मुख्य तत्वों पर प्रकाश डालिए।

खंड(ब)

लघु प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1.दलित साहित्य का परिचय दीजिए।

2.आत्मकथा की परिभाषा दिजिए।

3.दलित आत्मकथा का परिचय दीजिए।

खंड (स)

i. i. **सही विकल्प चुनिए**

2. दोहरा अभिशाप के रचनाकार कौन है? ( )

(अ)ओमप्रकाश वाल्मीकि (आ) कौसल्या बैसंत्री (इ)प्रभा खेतान (ई) निर्मला पुतुल

3. जूठन किसकी आत्मकथा है? ( )

(1) तुलसीराम (आ) जयप्रकाश कर्दम (इ) सुशीला टाकभौरे (ई) ओमप्रकाश वाल्मीकि

4. हिंदी की प्रथम दलित आत्मकथा कोन सी है? ( )

(1) जूठन (आ) तिरस्कृत (इ) मेरा बचपन मेरे कंधों पर (ई) शिकंजे का दर्द

5. हिंदी की पहली आत्मकथा कौन सी है? ( )

(1) प्रेमसागर (आ)मेरा वतन (इ) अर्ध कथानक (ई)सुख सागर

ii. **रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-**

1. अत्मकथा..... है।
2. हिंदी की पहली आत्मकथा .....है।
3. तुलसीराम की आत्मकथा .....है।

iii. **सुमेल कीजिए-**

1.तुलसीराम - एक भंगी उपकुलपति की आत्मकथा

2.रूपनारायण सोनकर - मेरा सफ़र मेरी मंजिल

3.डॉ. धर्मवीर - मेरी पत्नी और भेड़िया

4.डी.आर. जाटव - नागफनी

5.श्यामलाल जेदिया - मुर्दहिया

7.7 पठनीय पुस्तकें

1.रमणिका गुप्ता, दलित हस्तक्षेप, शिल्पायान प्रकाशन, नई दिल्ली, 2006

2. डॉ.दीप्ती गुप्ता, दलित आंदोलन और सामाजिक न्याय,राधा पब्लिकेशन्स, दिल्ली, 2010

3.ओमप्रकाश वाल्मीकि, दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 2001

4.कंवल भारती, दलित विमर्श की भूमिका,अमन प्रकाशन, 2013

5.डॉ.रजत रानी मीनू, हिंदी दलित आत्मकथा साहित्यःअवधारणाएं और विधाएँ, अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रिब्यूटर्स प्रा.लि., दिल्ली,2010

6.रामअवतार यादव, हिंदी आत्मकथा दलित महाकाव्य, अमन प्रकाशन, कानपुर, 2016

7. डॉ.साहेबराव सुकदेव गायकवाड़, हिंदी दलित आत्मकथाएं, अभय प्रकाशन, कानपुर, 2016

8. मेश्राम विमल कीर्ति, और बाबा साहव ने कहा, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली,2008.

9.संजय मुनेश्वर, हिंदी आत्मकाथा साहित्य,चंद्रलोक प्रकाशन, कानपुर, 2011

10.मोहनदास नैमिशराय, हिंदी दलित साहित्य, साहित्य अकादमी, नई दिल्ली, 110032

इकाई 8 : रूपनारायण सोनकर : एक परिचय

इकाई की रूपरेखा

8.1. प्रस्तावना

8.2. उद्देश्य

8.3. मूल पाठ: रूपनारायण सोनकर: व्यक्तित्व और कृतित्व

8.3.1. जीवन परिचय

8.3.2. परिवार

8.3.3. शिक्षा

8.3.4. नौकरी

8.4.4. पुरस्कार एवं सम्मान

8.4. रचना यात्रा

8.4.1. उपन्यास

8.4.2. कहानी-संग्रह

8.4.3. नाटक

8.4.4. आत्मकथा

8.5. पाठ-सार

8.6. पाठ की उपलब्धियाँ

8.7. शब्द सम्पदा

8.8. परीक्षार्थ प्रश्न

8.9. पठनीय पुस्तकें

8.1 प्रस्तावना

रूपनारायण सोनकर को हिंदी दलित साहित्य में विशेष लेखक के रूप में माना जाता है। दलित साहित्य के विभिन्न विचारों को विश्लेषणात्मक ढंग से प्रस्तुत करने में सर्वमान्य माने जाते हैं। धर्म, जातिगत-भेदभाव, वर्ण व्यवस्था के विभिन्न विचारों को उनकी रचनाओं के माध्यम से जनता के समक्ष रखने में सक्षम रहे हैं। 'उपन्यास', 'कहानी-संकलन', 'नाटक' और 'आत्मकथा' के माध्यम से दलित जीवन को यथारूप प्रस्तुत करने की चेष्टा की है। इनका उपन्यास 'गटर का आदमी' गटर में रहने वाले लोगों के दूभर जीवन को प्रस्तुत करता है। इनका कहानी-संकलन

'ज़हरीली जड़े' दलित जीवन में उत्पन्न होने वाले सभी समस्याओं का उल्लेख करने के साथ-साथ प्रधान समाज की जिम्मेदारियों को भी प्रस्तुत करता है। रूपनारायण सोनकर की रचनाएं केवल दलित वेदना को प्रस्तुत करना ही नहीं बल्कि उस वेदना से बाहर निकलने का रास्ता भी दिखाती है। अंबेडकरवादी विचारधारा का अनुपालन करने के साथ-साथ समकालीन दलित साहित्य के दिशा निर्देशक भी रहे हैं। इनकी साहित्यिक उपलब्धियों के कारण केंद्र और राज्य सरकारों नें उन्हें अनेक पुरस्कारों से सम्मानित भी किया है। अतः रूपनारायण सोनकर दलित चेतना का प्रज्वलित करने के साथ-साथ दलितों की जिम्मेदारियों को फिर एक बार याद दिलाने वाले विशिष्ट लेखक भी है।

8.2 उद्देश्य

इस पाठ के अध्ययन से.....

- विद्यार्थी रूपनारायण सोनकर के व्यक्तित्व के बारे में जानेंगे।
- विद्यार्थी रूपनारायण सोनकर के कृतित्व से अवगत होंगे।
- दलित साहित्य के सन्दर्भ में सोनकर के विचारों को समझेंगे।
- समकालीन दलित लेखकों की श्रेणी में सोनकर के स्थानों को पहचानेंगे।
- रूपनारायण सोनकर की साहित्यिक गतिविधियों को संक्षिप्त में समझ सकेंगे।

8.3 मूल पाठ : रूपनारायण सोनकर : एक परिचय

रूपनारायण सोनकर की विचारधारा अंबेडकरवादी विचारधारा होने के साथ-साथ दलित जीवन की समस्याओं को यथार्थ रूप प्रस्तुत कर, दलित समाज के प्रति अन्य लोगों की सोच में बदलाव लाने की एक अहम विचारधारा है। इसी कारण लेखक ने अपनी सभी रचनाओं में दलित जीवन से जुड़ी हुई विभिन्न स्थितियों को यथार्थ रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। लेखक स्वयं दलित समाज से जुड़े रहने के कारण उनके जीवन के अनुभवों को समय और समाज की आवश्यकता के अनुसार विभिन्न रचनाओं के माध्यम से चित्रण करने की चेष्टा हमें दिखाई देती है। इस सिल-सिले में लेखक के व्यक्तित्व एवं कृतित्व को जानना भी आवश्यक है। इसी आवश्यकता को दृष्टि में रखकर निम्न रूप में उनका जीवन परिचय प्रस्तुत किया गया है।

8.3.1. जीवन परिचय-

समकालीन दलित रचनाकार रूपनारायण सोनकर का जन्म 4 अप्रैल 1962 ई. को गांव नसेनियाँ, तहसील बिंदगी, जिला फतेहपुर, उत्तर प्रदेश में हुआ।

8.3.2. परिवार-

रूपनारायण सोनकर के पिता का नाम मंगली प्रसाद खटीक था। सोनकर जी इन्हें दादा कहा करते थे। इनके पिता नसेनियाँ ग्राम के प्रधान पद पर विजई हुए थे। उन्होंने अपने प्रतिद्वंदी पद्मिनी पंडिताइन को भारी मतों से पराजित किया था जो अक्सर पंडित समुदाय को उद्वेलित

करता था। रूपनारायण सोनकर की माता का नाम जगनंदनी था। इनकी माता पढ़ी-लिखी ना होने से लोग उन्हें जग्गी नाम से बुलाते थे। रूपनारायण सोनकर के बड़े भाई डॉ. बद्री प्रसाद वेटरनरी ऑफिसर थे। उनके छोटे भाई का नाम अजय है। उन्होंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से एम्.ए. किया है। इन दिनों आयकर विभाग में वरिष्ठ अधिकारी हैं। उनके एक और भाई का नाम राजाराम हैं।

8.3.3. शिक्षा-

रूपनारायण सोनकर की प्राथमिक शिक्षा गाँव में हुई थी। इन्होंने मैट्रिक की पढ़ाई नगर पालिका इंटर कॉलेज, बिंदगी, फतेहपुर से की। इंटरमीडिएट की परीक्षा में गणित विषय में फेल हो जाने पर उन्होंने पुनः जीव विज्ञान से इंटरमीडिएट पास किया। उनकी इच्छा थी कि वह डॉक्टर बनकर गांव की सेवा कर सके। परंतु वह डॉक्टर नहीं बन सके।

रूपनारायण सोनकर ने अपनी उच्च शिक्षा इलाहाबाद विश्वविद्यालय से प्राप्त की। बी.ए. में उन्होंने अंग्रेजी, राज्यशास्त्र और प्राचीन भारतीय इतिहास विषय लिए थे। इलाहाबाद में वे पढ़ाई के साथ-साथ शाम को दलित बच्चों को निशुल्क पढ़ाया करते थे। फिर उन्होंने इसी विश्वविद्यालय से एल.एल.बी. की पढ़ाई पूरी की।

8.3.4. नौकरी-

रूपनारायण सोनकर अनेक पदों पर नौकरियाँ की है। वे ग्रामीण बैंक में 'मैनेजर' रहे। इस पद पर उनका मन नहीं लगा। उनका रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया कानपुर में 'कॉइन नोट एग्जामिनर' पद पर चयन हुआ। इसके बाद सब रिजिस्ट्रार के रुप में 33 साल काम कर असिस्टेंट कमीशनर,स्टाम्पस के रुप में देहरादून में सेवा निवृत्त हुए थे।

8.3.5. पुरस्कार एवं सम्मान-

"गौरव भारती" उत्तराखंड सरकार के सम्मानीय तत्कालीन कमिश्नर व प्रमुख सचिव माननीय सुभाष कुमार आई.ए.एस. द्वारा सन् 1997 ई. में प्रदान किया गया। "हिंदी गौरव" महामहिम पूर्व राज्यपाल उत्तर प्रदेश माननीय वी. सत्यनारायण रेड्डी द्वारा सन् 1999 ई. में प्रदान किया गया। "डॉ. अंबेडकर विशिष्ट सम्मान" मुख्यमंत्री दिल्ली माननीय शीला दीक्षित द्वारा सन् 1999 ई. में प्रदान किया गया। "साहित्य महापाध्यय (डी.लिट.)" उपाधि तत्कालीन गवर्नर उत्तराखंड महामहिम माननीय सुरजीत सिंह बरनाला द्वारा सन् 2001 में प्रदान किया गया। "नाट्य रत्न" महामहिम राज्यपाल उत्तराखंड माननीय सुदर्शन अग्रवाल द्वारा सन सन्

2004 में प्रदान किया गया। "डॉ. अंबेडकर विशिष्ट उत्तराखंड सम्मान" द्वारा महामहिम राज्यपाल उत्तराखंड, माननीय सुदर्शन अग्रवाल द्वारा सन् 2005 ईस्वी में प्रदान किया गया

अभिनय-

टी.वी. सीरियल 'सपने' व 'मंज़िल' में चरित्र अभिनेता का किरदार निभाया। फीचर फिल्में- "ईंट का जवाब पत्थर" एवं "अब तुम्हारे हवाले वतन साथियों" में चरित्र अभिनेता का किरदार निभाया। नाटक "एक दलित डिप्टी कलेक्टर" व "समाज द्रोही" में मुख्य भूमिकाएं निभाई व एक टेलीफिल्म रात भर की बात में एक नेता का अभिनय किया। हास्य व्यंग नाटक "साहब की भैंस" आकाशवाणी द्वारा प्रसारित है। इनके द्वारा लिखित कहानी "कफन" व मुंशी प्रेमचंद द्वारा लिखित कहानी "कफन" पर दिल्ली दूरदर्शन द्वारा अक्टूबर 2008 में कफन बनाम कफन पर "पत्रिका" प्रोग्राम में विचार गोष्ठी संपन्न हुई, जिसमें डॉ. हरदयाल, डॉ. तेज सिंह, डॉ. अजनिवेश अवस्थी व डॉ रामजीयादव ने भाग लिया। दोनों कहानियों को उत्कृष्ट माना गया। उपन्यास 'डंक' प्रकाशित वर्ष 2009 ई. छवि फिल्मस प्रोडक्शन द्वारा लेखक की कहानी 'कफन' पर टेलीफिल्म 'कफन' निर्मित है।

बोध प्रश्न

- सोनकर के परिवार के बारे में आप क्या जानते हैं ?

8.4. रचना यात्रा-

रूपनारायण सोनकर ने अपने जीवन में घटित विभिन्न सामाजिक पहलुओं को अपनी रचनाओं के माध्यम से उजागर किया है। उनकी सृजन धर्मिता के आधार पर उनकी रचनाओं की गरिमा को इस प्रकार देख सकते हैं-

8.4.1. कहानीकार रूपनारायण सोनकर-

जहरीली जड़े- रूपनारायण सोनकर का प्रथम कहानी-संग्रह है। इस कहानी का प्रकाशन सन् 2005 में हुआ था। इस कहानी संग्रह में कुल 7 कहानियों का समावेश है। 'जहरीली जड़े', 'खल-छल नीति', 'समाज-द्रोही', 'खटीक का घर', 'अंबेडकर टेंपल', 'रन्नो' और 'कन्डा' आदि कहानियां दलित जीवन की वास्तविक स्थिति को प्रस्तुत करती हैं। इसी कारण जितेन ठाकुर इन कहानियों को लेकर लिखते हैं कि- "रूपनारायण सोनकर की कहानियां रचना शीलता के तथाकथित सांचों को भी तोड़ती हैं। अनगढ़ भाषा और वाक्य विन्यास से वे भाषावादी तराश और पच्चीकारी को भी नकारते हैं। आज के विकृत समाज को परत-दर-परत खोलने का विशिष्ट साहस सोनकर की रचना में है।" पहली कहानी 'जहरीली जड़े' दलितों के प्रति जातिगत-भेदभाव, शोषण और असमानता आदि विषयों का उल्लेख करती हैं। दूसरी कहानी 'खल-छल

नीति' दलित महिलाओं पर सवर्ण लोगों के द्वारा होने वाले अत्याचारों के साथ-साथ दलितों पर होने वाली राजनीतिक षड्यंत्रों को प्रस्तुत करती है। तीसरी कहानी 'समाज-द्रोही' दबंगों के द्वारा दलितों पर होने वाले अत्याचारों को प्रस्तुत करती हैं। इस कहानी में निरंजन लाल शर्मा जैसे दबंग व्यक्तियों की मिलीभगत से जिस तरह दलित व्यक्तियों को मृत्यु का शिकार होते हैं आदि विषयों की चर्चा की गई है। चौथी कहानी 'खटीक का घर' में खटीक लोगों पर होने वाले जुर्म को प्रस्तुत किया गया है। विवेकानंद तिवारी जैसे लोग दलितों से काम लेकर मजदूरी मांगने पर मारपीट करते हैं। गांव में खटीकों के घर कम होने के कारण इस प्रकार की स्थिति उत्पन्न होती है। यह एक प्रकार से जातिवादी विचारधारा का पराकष्ट है। पांचवीं कहानी 'अंबेडकर टेंपल' बाबासाहेब आंबेडकर के टेंपल के निर्माण को लेकर लिखी गई है। सवर्णों के मंदिरों में दलितों के प्रवेश पर हमेशा पाबंदी लगाया जाता है। ऐसी स्थिति में अंबेडकर के आदर्शों से प्रेरित होकर अंबेडकर टेंपल का निर्माण किया जाता है। छठवीं कहानी 'रन्नो' दलित नारी के शारीरिक शोषण पर लिखी हुई कहानी है। अमीरों के घरों में काम वाली नौकरानी बनकर काम करने वालों पर जिस तरह यौन शोषण किया जाता है आदि विषयों का सविस्तार वर्णन किया गया है। सातवीं कहानी 'कन्डा' में शिक्षित दलित युवकों पर होने वाले अत्याचारों को लेकर वर्णन किया गया है। इन कहानियों के साथ-साथ इन्होंने निम्न कहानियां भी लिखी हैं-

1. बांकेमल
2. शेंडमाईजेशन
3. दो देश
4. कफन
5. सद्गति
6. दूध का दाम
7. बदलाव

सोनकर जी ने 'कफन' और 'सद्गति' कहानियां लिखकर प्रेमचंद की 'कफन' और 'सद्गति' कहानियों को चुनौती दी है। परंपरागत कहानी शैली में परिवर्तन लाने की चेष्टा की है। इसी कारण रूपनारायण सोनकर को लोग एक विशेष वैकल्पिक रचनाकार मानते हैं।

बोध प्रश्न

- सोनकर के कहानी संग्रहों के नाम बताइए।

8.4.2. उपन्यासकार रूपनारायण सोनकर-

दलित साहित्य के चिंतन में उपन्यास साहित्य भी प्रमुख भूमिका निभा रहा है। इसी कारण रूपनारायण सोनकर ने उपन्यासों के माध्यम से भी दलित चेतना की दशा और दिशा को

प्रस्तुत करना चाहते हैं। इसी उपलक्ष्य में 'डंक', 'सूअरदान' और 'गटर का आदमी' आदि उपन्यासों को लिखा गया है। इन उपन्यासों का संक्षिप्त विवरण निम्न रूप में दिया गया है-

डंक- 'डंक' रूपनारायण सोनकर का प्रथम उपन्यास है। इस उपन्यास का प्रकाशन सन् 2009 में हुआ था। इस उपन्यास में भारतीय समाज के सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और पारिवारिक पहलुओं के साथ-साथ स्त्री, आदिवासी, धनाढ्य, मजदूर, फिल्म, पर्यावरण आदि क्षेत्रों को विस्तार रूप में प्रस्तुत किया गया है। सोनकर जी का मानना है कि- "उपन्यास में वर्णित घटनाएं उनके अपने समय की तमाम स्थितियों, विसंगतियों और विसंगतियों के साथ पूर्वापेक्षा को अधिक व्यापकता-विविधता से रूपायित करती है। कथाकार का मानवीय संवेदन, तर्क सम्मत दृष्टिकोण और विचारात्मक संतुलन हमारे समय की जिन वास्तविकताओं को उजागर करता है कि वे सहज ही पाठकों के दिलो-दिमाग को झकझोरती है।" उपन्यास में चित्रित सभी पात्र और घटनाएं परंपरा से जुड़ते हुए भी अपने-अपने व्यक्तित्व के साथ आगे बढ़ते हैं। परंपरा और विकास का प्रतिद्वंदी इसमें स्पष्ट दिखाई देता है। सामाजिक विसंगतियों, कुरूपताओं, विषमताओं और जातिगत-भेदभाव के विरोध में आवाज उठाता है। मूलतः महिलाओं के उत्पीड़न के विरुद्ध संघर्ष करने का आह्वान भी देता है। इसी कारण 'डंक' उपन्यास को समकालीन उपन्यासों की श्रेणी से अलगकर देखना चाहिए।

सूअरदान- 'सूअरदान' सोनकर जी का दूसरा उपन्यास है। इसका प्रकाशन सन् 2010 में हुआ था। परंपरागत भारतीय साहित्य शैली के संदर्भ में इसे एक विशेष एवं वैकल्पिक उपन्यास माना जाता है। इसी संदर्भ में दलित लेखक एवं आलोचक तेज सिंह कहते हैं कि- "सूअरदान में सोनकर ने धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की नई परिभाषा गढ़ी है। पुरानी मान्यताओं को ध्वस्त कर दिया है।" जिस तरह प्रेमचंद का गोदान भारतीय समाज की रेखाओं का इतिहास है, उसी तरह सोनकर का 'सूअरदान' उपन्यास वर्तमान समाज के सामाजिक विचारों का वैकल्पिक पक्ष रहा है। इसमें सोनकर ने सभी मिथकों को तोड़कर समाज के वास्तविक पक्ष को प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया है। इसी संदर्भ में प्रसिद्ध दलित लेखक श्री कंवल भारती का कहना है कि- "रूपनारायण सोनकर जी ने गोदान के समक्ष 'सूअरदान' उपन्यास लिखकर अपनी पहचान का परिचय दिया है। पुराने मिथकों को तोड़कर नए मिथक गढ़े हैं। हिंदी साहित्य में लेखन के जरिए रूपनारायण सोनकर के सिवा कोई भी लेखक मिथकों को तोड़ नहीं पाये हैं।" 'सूअरदान' उपन्यास दलित उपन्यासों में एक विशेष उपन्यास है। इस उपन्यास में तमाम परंपरागत विश्वास, रीति-रिवाज, अंधश्रद्धा तथा जाति बनाम विशेषताओं पर किया गया प्रहार स्पष्ट

दिखाई देता है। नई आर्थिक एवं सांस्कृतिक चेतना की सोच आरंभ करता है। इसी कारण इस उपन्यास में सूअर जैसे नीच जानवर को गाय से भी अधिक मूल्यवान जानवर के रूप में घोषित कर पिगरी फार्म खोलता है। पिगरी फार्म में काम करने के लिए दलितों के साथ-साथ उच्च वर्ण लोगों को भी नौकरी देता है। पिगरी फार्म के द्वारा सभी के जीवन को समृद्ध बनाता है। मानव जीवन के विकास में केवल 'गोदान' ही नहीं 'सूअरदान' भी विशेष महत्व रखता है। समाज और सांस्कृतिक अंतर इस 'गोदान' और 'सूअरदान' के महत्व को परिभाषित करता है। भूमंडलीकरण के बढ़ते चरण में मानव विकास के संदर्भ में हर एक पेशा महत्वपूर्ण होता है। रूपनारायण सोनकर भी इस उपन्यास में यही बात स्पष्ट करने की चेष्टा की है।

गटर का आदमी- 'गटर का आदमी' रूपनारायण सोनकर द्वारा लिखित तीसरा उपन्यास है। इस उपन्यास का प्रकाशन सन् 2015 में हुआ था। यह उपन्यास दलित साहित्य की मूल प्रकृति को यथारूप प्रस्तुत करता है। उपन्यासकार इस उपन्यास के माध्यम से गटर में काम करने वाले दलितों की दयनीय स्थिति को प्रस्तुत किया है। जातिवाद, जाति बनाम पेशाएँ, छुआछूत, अंधविश्वास, सांप्रदायिकता, आदि बातें इसमें स्पष्ट दिखाई पड़ती हैं। भुखमरी मिटाने के लिए महादलित गटरों से निकल रही जानलेवा गैसों की परवाह न करते हुए उनके अंदर उतर कर सफाई करते हैं। बहुत सारे सफाई कर्मी ऐसा करते हुए मारे जाते हैं। इस उपन्यास का नायक भी इस प्रकार की स्थितियों पर काबू पाना चाहता है। इस उपन्यास को लेकर प्रो. ओम राज का कहना है कि- "कार्ल मार्क्स की तरह रूपनारायण सोनकर भी एक समाजवादी समतामूलक समाज के निर्माण का सपना देखता है। 'गटर का आदमी' एक ऐसा उपन्यास है जो मानव की गरिमा को बरकरार रखते हुए एक ऐसे संसार के निर्माण का सपना देखता है जहां दरिद्रता, मानवीय लाचारी नदारद हो। इस धरती पर गरीबों और अमीरों के देश अलग-अलग न हों। गरीबों के देश को धनवानों जैसा देश बनाने के लिए लेखक जो रास्ता सुझाता है वास्तव में काबिले तारीफ है।" 'गटर का आदमी' उपन्यास साहित्य जगत में एक ऐसा मार्ग प्रशस्त करेगा जिसमें पीड़ित, दलित, पिछड़े, अल्पसंख्यक और गरीब अपनी मुक्ति का रास्ता खोल लेंगे। अतः 'गटर का आदमी' उपन्यास वर्तमान समाज की गटर की समस्याओं का लेखा-जोखा इतिहास है।

बोध प्रश्न

- सोनकर के उपन्यास के नाम बताइए।

8.4.3. नाटककार रूपनारायण सोनकर-

रूपनारायण सोनकर कहानी, उपन्यास तथा आत्मकथा के साथ-साथ नाटक भी लिखे हैं। बचपन से ही रंगमंच में प्रतिभागी बने रहे। रंगमंच के प्रति उनका आकर्षण नाटक लिखने के

लिए प्रेरित किया। इसी कारण इनके नाटकों के मुख्य पात्रों में रूपनारायण सोनकर ही दिखाई देते हैं। स्वयं उन्होंने अनेक नाटकों का मंचन कर अभिनेता के रूप में सफलता पाई है। उनके प्रमुख चर्चित नाटकों में 'एक डिप्टी कलेक्टर', 'विषधर', 'महानायक', 'समाज-द्रोही' और 'छायावती', 'रहस्य', 'खल-छल नीति' आदि हैं। नाटकों का संक्षिप्त परिचय निम्न प्रकार से है...

एक डिप्टी कलेक्टर- यह नाटक रूपनारायण सोनकर का महत्वपूर्ण नाटक है। इस नाटक का प्रकाशन भारतीय दलित साहित्य अकादमी द्वारा सन् 2002 में प्रकाशित हुआ था। इस नाटक में आधुनिक सत्यता के विभिन्न परिणामों का व्यंग्यात्मक ढंग से प्रस्तुत किया गया है। बदलता मानव जीवन और पारिवारिक संबंधों का समावेश भी इसमें स्पष्ट दिखाई देता है। भारतीय सभ्यता और पश्चिमी सभ्यता का समावेश भी इसमें दिखाया गया है।

छायावती- छायावती नाटक का प्रकाशन दलित साहित्य एवं सांस्कृतिक अकादमी के द्वारा सन् 2003 में हुआ था। यह नाटक दलित जीवन की महत्वाकांक्षा को प्रस्तुत करता है। इस नाटक की छायावती दलित होने के बावजूद भी मुख्यमंत्री बनती और अंबेडकरवादी विचारधारा को आगे ले चलती है। इस नाटक को पढ़ते समय उत्तर प्रदेश की भूत पूर्व मुख्यमंत्री मायावती ही याद आती है।

महानायक- महानायक रूपनारायण सोनकर द्वारा लिखित इस नाटक का प्रकाशन सन् 2003 में दलित साहित्य एवं सांस्कृतिक अकादमी नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित हुआ था। इस नाटक के माध्यम से भारतीय समाज में वर्ण व्यवस्था की समस्या और शुद्र समाज की गतिविधियों पर प्रकाश डाला गया है।

समाज-द्रोही- इस नाटक का प्रकाशन सन् 2007 में हुआ था। इस नाट्य-संग्रह में पांच नाटक संग्रहित हैं। 'समाज-द्रोही', 'खल-छल नीति', 'कलेक्टर साहब की भैंस', 'बहरे नेता की शादी', 'इंटरनेट बूढ़ों को जवान बनाता है' आदि। 'समाज-द्रोही' नाटक राजनीति के नेताओं की कुत्सित राजनीति का पर्दाफाश करता है। अपनी रोटी सेंकने के लिए किस तरह नेता समाज को बर्बाद करता है उसका सही दस्तावेज यह नाटक है। 'खल-छल नीति' नाटक ग्रामीण क्षेत्रों में दबंगों द्वारा दलित स्त्रियों पर होने वाले अत्याचार को यथारूप प्रस्तुत करता है। 'कलेक्टर साहब की भैंस', 'बहरे नेता जी की शादी' और 'इंटरनेट बूढ़ों को जवान बनाता है' आदि नाटक हास्य और व्यंग्य पर आधारित नाटक है।

विषधर- इसका प्रकाशन सन् 2005 में हुआ था। इस नाटक में रूपनारायण सोनकर ने दलित जीवन की पीड़ा को प्रस्तुत किया है।

रहस्य- इस संग्रह का प्रकाशन सन् 2000 में हुआ था। यह संग्रह 12 नाटकों का संग्रह है। 'ईश्वरीय न्यायालय', 'चार कोठियां', 'टी.वी युगल प्रेमी की दर्दनाक हत्या', 'दौलत की जंग',

'घर का मुखिया', 'दलित फौजी की देश के दुश्मनों से जंग', 'बदलते रिश्ते', 'चमत्कारी झरना', 'धरती आकाश', 'सिटी बस ड्राइवर', 'अरब शेख और चैनल लुटेरा' आदि है। इस संग्रह के नाटकों के द्वारा भारतीय समाज के विभिन्न समस्याओं के साथ-साथ न्यायालय, फौजी आदि विषयों का समग्र विश्लेषण भी किया है।

बोध प्रश्न

- सोनकर के नाटकों के नाम बताइए।

8.3.4. आत्मकथाकार रूपनारायण सोनकर-

रूपनारायण सोनकर की आत्मकथा 'नागफनी' का प्रकाशन सन् 2000 में हुआ था। दलित आत्मकथा की संख्या हाल में अधिकतर दिखती है लेकिन सोनकर की आत्मकथा विशेष एवं अलग विचारों से जुड़ी हुई है। दलितों की पीड़ा, दुःख और दलित समाज की समस्याओं को आत्मकथा के माध्यम से प्रस्तुत करते हुए लेखक अंबेडकरवादी विचारधारा को प्रस्तुत करता है। इसी कारण इस आत्मकथा में दलितों पर होने वाले अत्याचारों के साथ-साथ दलित संघर्ष से जुड़ी चेतना के दृश्य भी इसमें दिखते हैं। इस आत्मकथा में आत्मकथाकार ने अपने समाज के सामाजिक नेपथ्य को प्रस्तुत किया है। वर्ण व्यवस्था के कारण जिस तरह दलित जाति और धर्म के कारण उत्पीड़न का शिकार बनते है आदि विषयों की विश्लेषणात्मक चर्चा इसमें की है। आत्मकथा के आरम्भ से लेकर अंत तक दिखने वाला लेखक का संघर्ष अंबेडकरवादी चेतना का प्रतीक है। सार्वजनिक कुएं से पानी पीने के संदर्भ में हो, अपनी चाची को मंदिर में प्रवेश कराने के संदर्भ में हो, कुर्सी पर बैठने के लिए होने वाला संघर्ष के संदर्भ में हो, शिवभजन अवस्थी से संघर्ष करने के संदर्भ में हो, रामायण पढ़ने के संदर्भ में हो, होली खेलने के संदर्भ में अपनी जाति की महिलाओं की इज्जत को बचाने के संदर्भ में हो, आदि आत्मकथा के नायक 'हीरा' के द्वारा किया गया संघर्ष महत्वपूर्ण एवं दलित चोतना का मुख्य उदाहरण के रुप में स्वीकार किया जाता है। अतः यह आत्मकथा केवल आत्मकथा ही नहीं दलित समाज की चेतना का दस्तावेज भी है।

बोध प्रश्न

- आत्मकथा नागफनी के बारे में दो वाक्य लिखिए।

8.4 पाठ सार

रूपनारायण सोनकर समकालीन दलित लेखकों में चर्चित लेखक हैं। इन्होंने कहानी, उपन्यास, नाटक और आत्मकथा आदि के माध्यम से दलित समाज की सामाजिक चेतना को विस्तार रूप से प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया है। इनके साहित्य में दलित वेदना के साथ-साथ उस वेदना से बाहर निकलने का रास्ता भी दिखता है। इसी कारण हर कृति में दलितों के संघर्ष की लड़ाई स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। वास्तव में रूपनारायण सोनकर ने अपने निजी जीवन में

घटित घटनाओं को हीरा के माध्यम से प्रकट करने की चेष्टा हर संदर्भ में दिखता है। इनकी साहित्यिक चेतना को दृष्टि में रखकर अनेक संस्थाओं में अनेक पुरस्कारों से सम्मानित किया और इनकी रचनाओं की गरिमा को दृष्टि में रखकर देश के विभिन्न विश्वविद्यालयों में भी इनकी रचनाओं को अपने पाठ्यक्रम में जोड़ा है। स्पष्ट बात यह है कि रूपनारायण सोनकर की रचनाएं केवल व्यक्ति जीवन से संबंधित ही नहीं बल्कि पूरे भारतीय समाज के सामाजिक परिदृश्य को भी यथारूप प्रस्तुत करती है।

8.5 पाठ की उपलब्धियाँ -

इस पाठ के अध्ययन से कुछ महत्वपूर्ण बिंदु निष्कर्ष के रूप में हमारे सामने प्रस्तुत हुए हैं, जो निम्नलिखित हैं-

- रूपनारायण सोनकर एक चर्चितदलित लेखक हैं।
- इनका लेखन बाबा साहब आंबेडकर के सिद्धांतों एवं वैचारिकी पर आधारित है।
- सोनकर जी अपने लेखन के माध्यम से दलितों के भीतर जागरूकता उत्पन्न करना चाहते हैं।
- रूपनारायण सोनकर अपनी रचनाओं में दलितों की पीड़ा, संवेदना, जातिगत भेदभाव, छुआछुत आदि विषयों का वर्णन किया है।
- रूपनारायण सोनकर के लेखन की भाषा सरल, सहज एवं अंग्रेज़ीं के शब्दों का भी मिश्रण है।

8.6 शब्द संपदा

1. दरिद्रता - निर्धनता, कंगालपन
2. संवेदना - अनुभूति, मन में होने वाला बोध
3. समर्पित - अर्पित, स्थापित, आदरपूर्वक सौंपा गया
4. नदारद - गायब, लुप्त, खाली
5. चेतना - ज्ञानमूलक मनोवृत्ति, बुद्धि, समझ
6. संघर्ष - टकराव, स्ट्रगल, स्पर्द्धा
7. आक्रोश - कर्कश स्वर में की जाने वाली भर्त्सना, रोषपूर्ण भावना
8. अस्पृश्यता - छुआछूत, अछूतापन
9. पर्दाफाश - भेद प्रकट कर देना
10. अत्याचार- दुराचार, ज़ुल्म

8.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

दीर्घ प्रश्न।

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए-

1. रूपनारायण सोनकर की साहित्यिक गतिविधियों पर प्रकाश डालिए।
2. रूपनारायण सोनकर के कृतित्व पर विस्तार से चर्चा कीजिये।
3. रूपनारायण सोनकर के उपन्यासों पर प्रकाश डालिए।
4. 'सूअरदान' उपन्यास का संक्षिप्त परिचय दीजिए।
5. 'नागफनी' आत्मकथा की विशेषता पर प्रकाश डालिए।

खंड (ब)

लघु श्रेणी के प्रश्न।

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए-

1. रूपनारायण सोनकर के व्यक्तित्व पर प्रकाश डालिए।
2. 'नागफनी' में चित्रित स्त्री संघर्ष पर प्रकाश डालिए।
3. रूपनारायण सोनकर की कहानी 'ज़हरीली जड़ें' का सारांश लिखिए।
4. सोनकर जी के नाटकों की समीक्षा कीजिये।
5. रूपनारायण सोनकर की शैक्षणिक स्थिति पर प्रकाश डालिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए-

1. रूपनारायण सोनकर के गाँव का क्या नाम है? ( )

(अ) नसेनियां (आ) बिंदकी (इ) लखनऊ (ई) इलाहबाद

2. 'नागफनी' आत्मकथा का प्रकाशन कब हुआ था? ( )

(अ) 2007 (आ) 2008 (इ) 2009 (ई) 2010

3. 'ज़हरीली जड़ें' किस प्रकार की विधा है? ( )

(अ) कहानी (आ) उपन्यास (इ) नाटक (ई) कविता

4. सोनकर जी के कितने उपन्यास हैं? ( )

(अ) 5 (आ) 3 (इ) 7 (ई) 4

5. 'नागफनी' आत्मकथा के रचनाकार कौन हैं? ( )

(अ) रूपनारायण सोनकर (आ) आर.डी. सोनकर(इ) वाल्मीकि (ई) नैमिशराय

II रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. 'डंक' उपन्यास के लेखक ..... है।
2. सोनकर जी जन्म.....में हुआ था।
3. रूपनारायण सोनकर के गाँव का नाम ..... है।
4. सोनकर जी के पिता का नाम ..... है।
5. 'गटर का आदमी' उपन्यास का प्रकाशन ..... में हुआ।

III सुमेल कीजिए-

(i)	नागफनी	(अ)	रूपनारायण सोनकर
(ii)	लेखक	(आ)	नसेनियां
(iii)	गाँव	(इ)	आत्मकथा
(iv)	ज़हरीली जड़ें	(ई)	उपन्यास
(v)	डंक	(उ)	कहानी

8.8 पठनीय पुस्तकें -

1. ज़हरीली जड़ें, कहानी संग्रह, रूपनारायण सोनकर,डायमंड बुक्स, दिल्ली,2005
2. डंक, उपन्यास, रूपनारायण सोनकर, अनिरुद्ध बुक्स, दिल्ली, 2011
3. सूअरदान, उपन्यास, रूपनारायण सोनकर, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2010
4. गटर का आदमी, उपन्यास, रूपनारायण, सोनकर, अनिरुद्ध बुक्स, दिल्ली, 2015
5. नागफनी, आत्मकथा, रूपनारायण सोनकर, शिल्पायान पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, दिल्ली,2014

इकाई 9 : नागफनी : आलोचना

इकाई की रूपरेखा

9.1. प्रस्तावना

9.2. उद्देश्यः

9.3. मूल पाठः नागफनी की आलोचना

9.3.1. अंधविश्वास

9.3.2. जाति परक भेदभाव

9.3.3. जाति बनाम अहंकार

9.3.4. जाति बनाम धार्मिक उपेक्षा

9.4. पाठसार

9.5. उपलब्धियाँ

9.6. परीक्षार्थ प्रश्न

9.7. पठनीय पुस्तकें

9.1 प्रस्तावना

रूपनारायण सोनकर के द्वारा लिखित नागफनी आत्मकथा तमाम दलित आत्मकाथाओं से भिन्न एवं दलित चेतना के संदर्भ में विशेष मानी जाती है। रूपनारायण सोनकर ने इस आत्मकथा में दलित जीवन में निरंतर घटने वाली विभिन्न घटनाओं के समाहार को अपने जीवन के अनुभवों के माध्यम से प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया है। जाति, धर्म और वर्ण व्यवस्था के द्वारा उत्पन्न विभिन्न रीति -रिवाजों के कारण दलित समाज आज भी अनेक प्रकार के अपमानों शिकार हो रहा है। आज भी गांव में अपनी स्वेच्छा के अनुसार दलितों को जीने का अधिकार नहीं है। इस वर्ण व्यवस्था के कारण आज भी उन्हें मंदिर में प्रवेश निषेद है। इसी कारण मंदिरों में प्रवेश के लिए दलितों के द्वारा आंदोलन चलाने की घटनाएं लगातार दिखती रहती है। वास्तव में दलित आत्मकथाएं वैयक्तिक जीवन के साथ-साथ दलित समाज की सामाजिक पीड़ा को भी प्रस्तुत करती है। इसी उपलक्ष्य में रूपनारायण सोनकर की आत्मकथा 'नागफन' को हम देख सकते हैं। 'नागफनी' में दलितों पर होने वाले अत्याचारों के साथ साथ उन अत्याचारों के विरोध में दलितों के द्वारा किए गए संघर्ष की गाथाएं भी दिखती है। नागफनी आत्मकथा में हीरा के माध्यम दलित चेतना के विभिन्न पक्षों को लेखक ने प्रति-स्थापित करने की चेष्टा की है। हीरा की चाची कलश को छूने पर, सुअर और गाय के युद्ध के समय, दलित अस्मिता के लिए अवस्थी से लड़ते समय, रामचरितमानस का पठन करते समय, केवल जाति नाम सुनकर खाने

की थाली को निकालने पर वह जिस प्रकार अपमान एवं अवहेलना का का अनुभव किया है आदि सभी विचारों की चर्चा रूपनारायण सोनकर ने इसमें विश्लेषणात्मक ढंग से प्रस्तुत किया है।

9.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप-

- आत्मकथा के द्वारा सामाजिक स्थिति को अवगत करेंगे।
- भारतीय समाज की वर्ण व्यवस्था से परिचित होंगे।
- भारतीय समाज की जातिगत भेद-भाव से अवगत होंगे।
- दलित जीवन की समस्याओं के बारे में अवगत होंगे।
- आत्मकथा के अध्ययन के द्वारा व्यक्ति और समाज के वास्तविक संबंधों को जानेंगे।

9.3 मूल पाठ : नागफनी : आलोचना

9.3.1 अंध विश्वास:

रूपनारायण सोनकर का जन्म उत्तर प्रदेश के नसेनियां गांव में होने के कारण ग्रामीण समाज से संबंधित सभी आचार-विचार, रीति-रिवाज और दलितों के प्रति जाति बनाम भद-भाव की इकाई की रूपरेखाइस आत्मकथा में स्पष्ट दिखाई देती है। छुआछूत और धार्मिक भेदभाव के कारण दलित अपने दैनंदिन जीवन में सामने आने वाली समस्यओं की चर्चा भी इस आत्मकथा में हुई है। केवल अपमान और अवहेलनाओं को थामना ही नहीं उसके विरोध में अपना प्रतिरोध प्रकट करना भी इस आत्मकथा में हम देख सकते हैं। सभी दलित आत्मकथाएं केवल दलित यातना को ही बताती है लेकिन यह आत्मकथा उन यात्राओं के विरोध में उठाई गई आवाज को भी बताती है। रूपनारायण सोनकर बचपन से ही अंबेडकरवादी विचारधारा से प्रभावित होने के कारण हमेशा वे जातिगत भेदभाव का विरोध करना ही नहीं, मनुष्य को मनुष्य के रूप में जीने की आवाज भी देता है।

नागफनी आत्मकथा में दलित जीवन से जुड़ी अनेक समस्याओं प्रस्तुत करती है। मुख्यतः जाति या धर्म के कारण उत्पन्न होने वाली समस्याओं पर लेखक ने अधिक जोर डाला है। सबसे पहले कूड़हा माई मंदिर के मेले में होने वाले जाति परख भेदभाव को लेखक ने प्रस्तुत करने की चेष्टा की है। साल में एक या दो बार मंदिर के प्रांगण में मेला लगता है। इसी को ज्वारों का मेला भी कहा जाता है। "गांव का कोई भी सवर्ण व्यक्ति अपने घर के एकांत कमरे में गोपनीय ढंग से जौ के बीज छोटे-छोटे गमलों में तैयार करता है। " दलितों को यह कार्य करने की अनुमति नहीं है। लगभग एक माह के बाद एक दर्जन औरतें जौ के घड़ो को सर पर रखे हुए हैं गाव भर के चक्कर लगाती है। वहीं से मेले की शुरुआत होती है। इस मेले की शोभा बढ़ाने के लिए गांव के दलित युवक अपने गालों को सांग लगा देते हैं। केवल दलित युवक ही इस कार्य में आगे बढ़ते हैं। "दलितों और पिछड़ों को सांग छिदवाने के लिए ब्राह्मण सदा ही वह प्रोत्साहित किया करते थे।"

ब्राह्मण दलित युवकों से इस संदर्भ में कहते हैं कि "ऐसा करने से दलितों की सारी मनोकामनाएं पूरी हो जाएगी।" इस संदर्भ में लेखक यही सोचता है कि अगर मनोकामनाएं सांग लगाने से पूरी होती है तो सवर्ण समाज के लोग क्यों नहीं करते हैं।

बोध प्रश्न

- नागफनी में अंधविश्वास के चित्रण एवं उदाहरण दीजिए।

9.3.2. जाति परक भेदभाव:

ज्वार की मेले में जौ के पौधे के कलश लेने वाली महिलाओं में एक सवर्ण महिला का पैर फिसलने से उसके सर पर रही कलश गिर पड़ी थी। लेकिन उन औरतों के पीछे चलने वाली हीरा की चाची उसे थाम लेती और कलश को सिर पर रख लेती। इस दृश्य को देखकर ब्राह्मण भीड़ को चीरते हुए औरत के पास आकर जोर से गरज कर गाली देते हैं कि "ससुरी खटिकिन तेरी यह हिम्मत! देवी के कलश को अपने सिर पर रखकर भ्रष्ट कर दिया" इतना ही नहीं तुरंत वह ब्राह्मण ने चाची से कलश को छीन लिया और दो-तीन लात मार दी। चाची की आंखों से आंसू बह निकले। इस दृश्य को देखकर सभी सवर्ण आदमी, औरतें पूरे मेले में खुसर-फुसुर कर रहे थे जैसे मेरी चाची ने बहुत बड़ा अपराध किया है। चाची के अपमान को देखकर सभी दलित युवा बुजुर्ग व औरतें इकट्ठा होकर देवी के प्रांगण में उस पंडित को घेर लिए थे। खटिक, पासी, चमार,कोरी, वाल्मीकि सभी ने इस अपमान का बदला लेने की ठान लिया था। "कुछ बुजुर्ग पंडित ठाकुर व कर्मियों ने आकर क्रोधित दलितों को समझाया। दोनों तरफ से लाठी, बल्लम, करौली, छुरी, भला- फरसा, गंडासा, चाकू निकल आए थे। भयंकर खून खराबा होने का अंदेशा था।" तब कुछ पढ़े-लिखे लोग बीच में आकर दोनों को समझाए थे। अंत में दलितों ने मांग की कि "पंडित अपने किए पर पश्चताप करें और दलित महिलाओं का पीतल का कलश सिर पर रखकर चलने दे।" तब पंडित भी पश्चाताप प्रकट कर हीरा की चाची के सर पर पीतल का कलश रखा। “तब समस्त दलित बच्चे जवान बूढ़े और औरतें उछल पड़े। ढोल, नगाड़े, हुड़की जोरी-जोर जोर से बजने लगे। दलित महिलाएं जोर-जोर से नाचने लगी थी। सैंकडों साल बाद दलित औरतों ने समता का अधिकार पाया था जिसकी खुशी नाच गाने में परिवर्तित हो गई थी।”

बोध प्रश्न

- नागफनी में जातिभेद को एक उदाहरण दीजिए।

9.3.3. जाति बनाम अहंकार:

नसेनियां गांव में होली का त्योहार धूमधाम मनाया जाता है। होली के दूसरे दिन गांव में होने वाला उत्सव बहुत रोमांचक का होता है। सूअर, गाय का अद्‌भुत नजारा देखने को मिलता

है। ठाकुर, ब्राह्मण, यादव लोग अपने खूंखार गायों के साथ उत्सव में आते थे। "गांवों के ब्राह्मण ठाकुर यादव अपने गायों को खूब सजाते थे। अपनी गायों के सींग और माथे को रंगों से खूब रंगते थे तथा विभिन्न प्रकार के रंग गायों के शरीर में लगाते थे। "वास्तव में यह सजाना केवल सूअर-गाय के युद्ध के लिए ही था। दलित लोग सूअर पालने के कारण इस उत्सव में अपने सूअर के साथ मेले में आकर गाय के साथ लड़वाते थे। लेखक इसी को राक्षस और देवताओं का युद्ध मानते थे। "एक तरफ तमाम गायों और दूसरी तरफ एक बहादुर सूअर राक्षस या असुर सेना का प्रतिनिधित्व कर रहा था। जिसके पीछे दलितों की सारी सेना थी। दलित सेना का महानायक सूअर ब्राह्मण सेना की महानायक गाय से भिड़ने वाला था। " परंपरागत रूप से होने वाली इस सूअर और गाय के युद्ध को देखने के लिए मैदान में चारों तरफ स्त्री, पुरुष बच्चे, बूढ़े जमा थे। एक तरफ युद्ध के लिए तैयार रही खूंखार गायों का समूह रहे तो दूसरी तरफ महाबली सूअर मुकाबला करने के लिए तैयार था। " सूवर के छूटते ही वह चारों तरफ भागा। इसी समय गाय उसे मारने के लिए दौड़ी। महानायक सूअर ने ब्राह्मणों की गाय रूपी सेना के छक्के छुड़ा दिए। कोई भी गाय उसको पकड़ नहीं पाई। गाय आपस में टकरा टकरा कर गिर पड़ी। किसी गाय के सींग टूट गए और किसी गाय के पैर। लेकिन बहादुर महानायक सूअर अपने नुकीले भयंकर दांतो से वार करते हुए सबसे आगे निकल गया। ब्राह्मण सेना परास्त हो गई दलित सेना जीत गई।" असली बात यह है कि गायों का शरीर भारी होने के कारण वह सूअर की तरह नहीं उछल पाती थी। सूअर छोटी प्राणी होने के कारण वह उछल कर उसकी नुकीले बड़े-बड़े दांतों से गायों को जख्म करता था। "जितना प्रहार गायों के सींगों का सूअर के बदन पर पड़ता था वह उससे दुगनी ताकत से गायों के बदन मुंह पर उछलकर जोरदार हमला करता था। एक सूअर और छः गाये। गाय-सूअर को घेर लेती थी तथा गोलाकार मैदान के चारों तरफ से सूअर पर दौड़ कर हमला करती थी। सूअर छोटा होने के कारण उसके शरीर के नीचे से निकल जाता था। गाय आपस में टकरा-टकरा कर मैदान के अंदर गिर पड़ती थी। फिर दोबारा उठ नहीं पाती थी। सूअर जोरदार हुंकार भरता था जैसे शेर जंगल में गायों पर तेजी से दौड़ कर हमला करता है।"

त्यौहार के संदर्भ में होने वाली इस उत्सव की लड़ाई को उत्सव की लड़ाई के रूप में ना देखकर दलित एवं उच्च वर्ण की लड़ाई के रूप में उसे स्वीकार कर उच्च वर्ण के लोग क्रोधित हो गए थे। "हाथों में बल्लम, बरछी और तमंचा लेकर सूअर को मारने गए। सवर्ण सूअर की जीत को दलितों की जीत मानते थे। इसी कारण सूअर को मारने में आगे बढ़े थे।" सूअर को बचाने की कोशिश तो हुई लेकिन ब्राह्मणों ने छल कपट से उसे जान से मार दिया है। लेखक इसी बात को लेकर कहते हैं कि "ब्राह्मण जीत कर भी जीते नहीं थे। दलितों को जीतना देख कर षड्यंत्र के जरिए ब्राह्मणों ने उसको हरा दिया था। लगता है इसी तरह सुरों ने छल कपट से असुरों को

हराया था।" इस प्रकार की अहंकार रूपी लड़ाईयाँ अक्सर हमें भारत में दिखती है। रूपनारायण सोनकर ने कुश्ती के संदर्भ में घटित एक घटना को भी इस आत्मकथा में उल्लेखित किया है। हीरा कुश्ती लड़ने में बहुत माहिर था। गांव-गांव में सावन महीने में दंगल लगते थे। कुश्ती लड़ने के लिए अपने दोस्तों के साथ बाहर के गांवों में भी जाता था। अक्सर वह कुश्ती जीत कर ही वापस आता है। हीरा कुश्ती जीतकर घर आने पर सभी सजातीय भाई खुशी में ढोल बजवाते थे। लेकिन हीरा के घर के सामने वाले ब्राह्मण बीच में अक्सर आकर ढोल बजवाना बंद करवा देते थे। वही ब्राह्मण "जब कोई ब्राह्मण यदा-कदा कुश्ती जीतता तो वे वाल्मीकियों से दिनभर ढोल जोर-जोर से भजवा देते ताकि पूरा गांव उनकी जीत को सुन सके। " वास्तव में गांव का कोई भी आदमी कुश्ती जीतकर आता है तो सभी गांव वालों को गर्व होना चाहिए लेकिन यहां पर बात अलग होती है। गर्व की बात केवल उच्च वर्ण के लोगों तक ही सीमित होती है। "खटिक जाति में पैदा होने के कारण खटिकों की बहादुरी उनको रास नहीं आती थी। "

गुड़िया के त्यौहार में सावन के महीने में गांव में दंगल लगता था। जहां गांव भर के लोग आपस में एक दूसरे से कुश्ती लड़ते थे। लेकिन दलित दलित से ही लड़ता था। गैर दलित गैर दलित से ही लड़ता था। हीरा की कुश्ती किसी चमार जाति के व्यक्ति से होता था जो वह हमेशा जीत जाता था। इसी कारण वह हमेशा गैर दलितों से लड़ने की इच्छा रखता था। वही समय आने पर उच्च वर्ण के आयोजकों ने हीरा का दंगल ब्रह्मण समाज के श्रवण से लगवा दिया। श्रवण उनसे भी उम्र में बढ़े थे इस लड़ाई में भी हीरा जीतने पर सभी ब्राह्मणों के मुंह उतर चुके थे। वे सभी अपमान बर्दाश्त नहीं कर पाए थे। कुछ कुर्मियों ने उन्हें समझाया है कि यह तो दंगल है। आपस का दंगल है। इसका इतना बुरा मत मानो। लेकिन ब्राह्मण ऐसे महसूस कर रहे थे जैसे उन पर कोई गाज गिर गई हो। पाँच,छः नौजवान ब्राह्मण लड़के दंगल में कूद पड़े और हीरा को मारने लगे। हीरा के दोनों हाथ पकड़ लिए और श्रवण से कहने लगे "चित्त कर साले को! ब्राह्मणों को हरा रहा है"इसी समय दलित युवक भी दंगल में कूद पड़ने के कारण हीरा बच जाता है।

भारतीय संस्कृति में मेहमान को ईश्वर समान माना जाता है। लेकिन जातिगत भेदभाव के कारण भारतीय सभ्यता का भी अपमान हो रहा है। उच्च वर्ण के कुछ लोग इस सभ्यता व संस्कृति को केवल उच्च वर्ण के लिए ही है समझने के कारण अनेक समस्याएं उत्पन्न हो रही है। इन्हीं समस्याओं का मूल रूप हम इस आत्मकथा में देख सकते हैं। रूपनारायण सोनकर अपने अनुभव को लेकर कहते हैं कि जब वह बिंदगी में पढ़ रहा था तब उनके भाई उनसे मिलने आए थे। बिंदगी हॉस्टल से दोनों भाई सइकिल से नसेनियां के लिए निकल पड़े थे। वह नाग पंचमी का दिन था। घनघोर बारिश में ही गांव की ओर बड़े थे। बारिश में साइकिल चलाते-चलाते हीरा के भाई थक जाने के कारण सड़क के किनारे देवरी गांव में एक पक्का घर के बरामदे के चप्पर के नीचे रुक गए। घर का मालिक मिश्रा जी उन्हें देखकर बड़े प्यार से उन्हें अंदर बुलाया। और कहा "इतनी घनघोर वर्षा और दरियाव में साइकिल खींचते खींचते बहुत परेशान हो

जाओगे। यह छोटा लड़का बहुत थक जाएगा। हमारे घर में पूरी राम दया है। चारपाई है। आप लोग यहीं खाना खाइए। सुबह होते ही आप लोग चले जाइएगा"। लेकिन हीरा का भाई अपना परिचय देने की चेष्टा करने पर मिश्रा जी उनकी बातों पर ध्यान ना देते हुए कहते हैं कि "मैं आप लोगों की कोई बात नहीं सुनूंगा। और आगे बताते हैं कि भारतीय संस्कृति और सभ्यता यह कहती है कि यदि शाम के वक्त कोई थका मांदा राहगीर घर आ जाए तो उसे बिना खाना खिलाए एवं विश्राम कराए घर से नहीं जाने देना चाहिए।" इतना कहकर उन्हें कपड़े देखकर खाना परोसते वक्त उनकी मां जाति के बारे में पूछती है। भाई कहता है "माँ जी हम लोग खटीक हैं। मैं एक अफसर हूं और भाई मेरा दसवीं में पढ़ रहा है।" इतना सुनते ही पंडित जी की माँ खाने के लिए रखी गई थालिया वापस लेकर रसोई में जाती है। और तेज आवाज में बोलती है कि "तुम लोगों ने क्यों नहीं बताया कि तुम लोग खटीक हो। तुम लोग अभी जाओ। तुम लोगों ने यह जो कुर्ता पायजामा पहन रखा है, अब हम इसको नहीं लेंगे इसकी तुमको कीमत देनी होगी।" हीरा का भाई समझाने की चेष्टा करने पर भी राम-राम सब भ्रष्ट हो गया है कह कर छः सौ वसूल किए थे। और उनकी मां उनके सामने ही गंगाजल लाकर चारपाई और फर्श पर छिड़क रही थी। इसी को दलित साहित्यकार ब्राह्मण वादी मानसिकता का मूल रूप कहते हैं। इसी प्रकार की घटना हीरा के जीवन में और एक घटी है। हीरा के सगे संबंधी दूसरे गांव से चलकर उनसे मिलने आए थे। रात्रि लगभग नौ बजे का समय हो रहा था। रिश्तेदारों को खाना खिलाने के बाद घर के पिछवाड़े कमरे के सामने चारपाई बिछा दी। उनके फूफा सभी परिवार वालों को किस्से /कहानियां सुना रहे थे। ब्राह्मण समाज के व्यक्ति शिवभजन अवस्थी वहां से गुजर रहे थे। कोई भी रिश्तेदार व घरवाले ध्यान नहीं दे सके। शिवभजन अवस्थी बिल्कुल चारपाईयों के पास आकर खड़े हो गये। दादा, काका और रिश्तेदारों ने उसको देखते ही चारपाई से नीचे उतरना चाहा। हीरा ने उन्हें ऐसा करने से मना कर दिया। इस दृश्य को देखकर शिवभजन अवस्थी क्रोधित हो गए थे और सब को गाली देने लगा। "साले! अछूतों हमारे सामने चारपाईयों पर बैठे हो। यह साला हीरा तुम लोगों को चारपाइयों से नीचे उतरने से रोक रहा है। " हीरा ने 'गाली मत देना' कहने पर हीरा को लिपट कर मारने लगता है। हीरा भी उसका दाहिना हाथ मरोड़ता है। बहुत जोर-जोर से चिल्ला कर अपशब्दों का प्रयोग करता है। उसकी आवाज सुनकर मोहल्ले के सारे ब्राह्मण लाठी, बल्लम, सेला, फरसा लेकर हीरा को मारने आते हैं। यहां केवल सम्मान लोगों की इच्छा से नहीं लिया जाता बल्कि जबरदस्ती से जाति के नाम पर लिया जाता है।

इस संदर्भ में सभी घरवाले ब्राह्मणों से डरकर हीरा को घर की कोठरी के अंदर रखकर दरवाजा बंद किए थे। दरवाजा तोड़कर हीरा को मारने की चेष्टा होने पर दयाराम की पत्नी गौरैया ने हीरा का हिम्मत बढ़ाया और हीरा के हाथ में कुल्हाड़ी दी और वह भी करौली लेकर

आगे बढ़ी थी। लेखक का कहना है कि हमेशा आत्म-सम्मान की लड़ाईयों के संदर्भ में दलित औरतें आगे रहती है। इसका मुख्य उदाहरण है दयाराम की पत्नी गौरैया।

बोध प्रश्न

- नागफनी में चित्रित जातिभेद पर दो वाक्य लिखिए।

9.3.4. जाति बनाम धार्मिक उपेक्षा

नसेनियां गांव में ब्राह्मण प्रतिवर्ष मंदिर से जुड़े फर्श पर अखंड रामायण का पाठ आयोजित करते हैं। तुलसी की रामचरितमानस का चौबीस घंटे का पाठ दिन-रात लगातार होता है। इस कार्यक्रम में ब्राह्मणों के अधिकतर लड़के-लड़कियां अपने परिवार के साथ अखंड पाठ में हिस्सा लेते हैं। इसमें केवल उच्च वर्ण के लोगों के लिए ही अनुमति रहती है। दलितों का प्रवेश मना है। रामचरितमानस का पठन पसंद ना होने पर भी दोस्तों के बुलावे पर हीरा भी वहां पहुंचकर रामायण का पाठ पढ़ने लगता है। शिवभजन अवस्थी रामायण पाठ पढ़ने वाले हीरा को देखकर आग बबूला होते हुए गाली देता है कि "साले! हम लोगों के बीच में बैठकर कैसे रामायण की चौपाई पड़ रहा है। इस साले अछूत को किसने चौपाई पढ़ने के लिए कहा ? जिस लड़के ने उन्हें बुलाया है वह शिवभजन अवस्थी के गुस्से को देखकर चुप रह गया है। बहुत जोर-जोर से हीरा को गाली देने के कारण वहां पर भीड़ इकट्ठा हो गई।" इस भीड़ को देखकर वह कहता है कि "यह अखंड पाठ खंडित हो जाएगा। इस अछूत को रामायण का पाठ पढ़ने का कोई अधिकार नहीं है।" फिर उसने हीरा को आंख दिखाते हुए कहा "हट साले! यहां से"। शिव भजन अवस्थी ने सभी बच्चों के सामने गाली देते हुए हीरा के सामने आने की चेष्टा करने पर हीरा अपने हाथों में लिये रामचरितमानस को अवस्थी के मुंह पर फेंक कर वहां से भाग जाता है। यह भी एक प्रकार की विडंबना है। वर्ण व्यवस्था के कारण दलित हिंदू होने पर भी उन्हें हिंदू धर्म से संबंधित सभी अनुष्ठानों से दूर रखा जाता है। यही एकमात्र उदाहरण है। इतना ही नहीं इस आत्मकथा में दलित जीवन से संबंधित अनेक समस्याएं सामने आती हैं। हीरा को प्यास लगने पर सार्वजनिक कुएं से पानी पीने पर उच्च वर्ण के लोग उसे पीटने की घटनाएं भी दिखती हैं। त्यौहार आदि के संबंध में भी जाति के नाम से गाने वाले गीतों में भी अश्लीलता दिखाई देती है। साथ ही दलित जीवन में घटने वाले विभिन्न संदर्भों को सोदाहरण प्रस्तुत करने की चेष्टा इस आत्मकथा में स्पष्ट दिखाई देती है।

बोध प्रश्न

- नागफनी में वर्णित धार्मिक उपेक्षाओं का वर्णन कीजिए।

9.4 पाठ सार

रूपनारायण सोनकर के द्वारा लिखित 'नागफनी' आत्मकथा दलित समाज की सामाजिक चेतना को प्रस्तुत करने वाली एक विशेष आत्मकथा है। इस आत्मकथा में लेखक अपने अनुभव को यथारूप प्रस्तुत करने की चेष्टा की है। उनकी चाची के अपमान की घटनाओं से इस कृति का

आरंभ होता है। जाति बनाम भेदभाव दलित अस्तित्व पर हमेशा प्रभाव डालता है। इस आत्मकथा के हर अंक में दलित यातनाओं का शिकार होना ही नहीं बल्कि आत्म गौरव के लिए आवाज उठाने के दृश्य भी दिखई देते हैं। उत्सव या पर्वों के संदर्भ में दलितों की सेवाएं लेते हुए भी दलितों को मंदिर या देवी-देवताओं से दूर रखने के आचारों पर लेखक विरोध प्रकट करता है। जाति का नाम पूछ कर खाने की थाली के सामने से भगाना, प्यासे होने पर सार्वजनिक कुएं पर चढ़कर पानी पीने के कारण हीरा का खून बहाना आदि दृश्य इस आत्मकथा में ही मिलते हैं। इतना ही नहीं रामचरितमानस के पठन से भी दलित बच्चों को दूर रखना, उस पर लेखक का गुस्सा करना आदि बातें भी यहां स्पष्ट दिखाई देती हैं। वर्ण व्यवस्था के आधार पर बनी जाती श्रेष्ठता को बरकरार करने की इच्छा से उच्च वर्ण के लोगों के प्रयत्नों को भी लेखक ने दर्शाया है। हीरा अपने घर में अपने रिश्तेदारों के साथ चारपाई पर बैठकर गपशप करते समय अवस्थी को देखकर ना उठने के कारण हीरा को पीटने के लिए पूरे ब्राह्मण लोग एक होने की घटनाएं अत्यंत मार्मिक एवं चर्चा के विषय रहे हैं। इसी प्रकार लेखक ने शिक्षा के संदर्भ में भी उत्पन्न विविध विषयों का समाहार इस आत्मकथा में प्रस्तुत किया है।

9.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस अध्ययन के बाद निम्न उपलब्धियां प्राप्त हुए -

- रूपनारायण सोनकर की आत्मकथा नागफनी भारतीय समाज की सामाजिक इकाई की रूपरेखाका समग्र दस्तावेज है। इस आत्मकथा के द्वारा लेखक भारत में वर्ण व्यवस्था के कारण उत्पन्न होने वाली सामाजिक कुरीतियों को समग्र रूप में जनता के सामने रखना चाहता है।
- जाति, धर्म के कारण यहां के दलित हजारों सालों से जिस प्रकार प्रधान समाज से दूर रहे हैं और जिस प्रकार सामाजिक सुविधाओं से वंचित हैं आदि विषयों का उल्लेख भी इसमें सोदाहरण मिलता है।
- वर्तमान समाज में भी इस प्रकार की स्थितियां उत्पन्न होना अत्यंत शर्मनाक माना जाता है।
- अंबेडकरवादी विचारधारा का प्रभाव रूपनारायण सोनकर पर रहने के कारण जब-जब वह अन्याय का सामना करता है, उसके विरोध में आवाज उठाने के पक्ष में रहकर आगे बढ़ता है।
- जातिगत उत्पीड़न के संदर्भ में हो या धर्म के नाम पर होने वाले भेदभाव हो, लेखक हमेशा अपना विरोध प्रकट करते हुए सम-समाज के पक्ष में आगे बढ़ता है। यही अंबेडकरवादी विचारधारा का मुख्य लक्ष्य है। इसी कारण आदि से लेकर अंत तक हर अध्याय दलित उत्पीड़न के साथ-साथ दलित चेतना के प्रतिबिंब को भी प्रस्तुत करता है।

- यह आत्मकथा केवल आत्मकथा ही नहीं दलित समाज में घटने वाली विभिन्न घटनाओं का एक सामाजिक विश्वकोश भी है।

9.6 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड(अ)

दीर्घ प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. नागफनी आत्मकथा का सारांश लिखिए।
2. वर्तमान समाज के संदर्भ में नागफनी की प्रासंगिकता पर प्रकाश डालिए।
3. गाय और सुअर युद्ध का वर्णण कीजिए।
4. कुड़हा माई उत्सव की व्याख्या कीजिए।
5. नागफनी में चित्रित धार्मिक विसंगतियों पर प्रकाश डालिए।

खंड(ब)

लघु प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1.नागफनी में चित्रित जातिपरक भेदभाव पर प्रकाश डालिए।

2.हीरा का चरित्र चित्रण कीजिए।

3.नागफनी में चित्रित सामाजिक स्थिति पर प्रकाश डालिए।

4. नागफनी में चित्रित विद्रोही भावना पर प्रकाश डालिए।

5.शिवभजन अवस्थी का चरित्र चित्रण कीजिए।

खंड(स)

i. सही विकल्प चुनिए

1. नागफनी के रचनाकार कौन है? ( )

   (अ)ओमप्रकाश वाल्मीकि (आ) रूपनारायण सोनकर (इ)प्रभा खेतान (ई) निर्मला पुतुल

2. रूपनारायण सोनकर का जन्म स्थान क्या है? ( )

   (1) तुलसीराम (आ) जयप्रकाश कर्दम (इ) सुशीला टाकभौरे (ई) ओमप्रकाश वाल्मीकि

3. नागफनी आत्मकथा में रुपनारायण सोनकर का नाम क्या है? ( )

   (1) महेश (आ) हीरा (इ) प्रशांत (ई) दयाराम

4. हीरा का छोटे भाई का नाम क्या है? ( )

   (1) विजय (आ)अजय (इ) कुमार (ई)आकाश

(5) हीरा के भड़े भाई का नाम क्या है? ( )

(अ)विजय (आ) अजय (इ)राजाराम (ई) सीताराम

ii . रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. नागफनी..... की आत्मकथा है।
2. हिंदी की पहली आत्मकथा .....है।
3. तुलसीराम की आत्मकथा .....है।
4. रूपनारायण सोनकर का जन्म स्थान.....है।
5. नागफनी का प्रकाशन.....में हुआ था।

iii . सुमेल कीजिए-

1. रूपनारायण सोनकर का छोटे भाई	- 1999
2. रूपनारायण सोनकर	- 12 मन धान
3. नसेनियां	- अजय
4. डॉ.अम्बेडकर विशिष्ट सम्मान	- नागफनी
5. डेढ़ पसेरी धान	- रूपनारायण सोनकर का जन्मस्थान

9.7 पठनीय पुस्तकें

1.रूपनारायण सोनकर, 'नागफनी', शिल्पायान पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली, 2014

2. डॉ.सूर्यनारायण रणसुभे, डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर,राधाकृष्ण, नई दिल्ली, 1992

3.राजकिशोर, दलित राजनीति की समस्याएं, वणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2006

4.कंवल भारती, दलित विमर्श की भूमिका,अमन प्रकाशन, 2013

5.साक्षान्त मस्के, परम्परागत वर्ण- व्यवस्था और दलित साहित्य, वणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2009

6.श्यामलाल, भारत में अछूत आंदोलन, स्वराज प्रकाशन,नई दिल्ली, 2011

7. डॉ.साहेबराव सुकदेव गायकवाड़,हिंदी दलित आत्मकथाएं, अभय प्रकाशन, कानपुर, 2016

8. मेश्राम विमल कीर्ति, और बाबा साहव ने कहा, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली,2008.

9.संजय मुनेश्वर. हिंदी आत्मकाथा साहित्य,चंद्रलोक प्रकाशन, कानपुर, 2011

10.मोहनदास नैमिशराय, हिंदी दलित साहित्य, साहित्य अकादमी, नई दिल्ली, 110032

इकाई 10: दलित कहानी: एक परिचय

इकाई की रूपरेखा

10.1 प्रस्तावना

10.2 उद्देश्य

10.3 मूल पाठ: दलित कहानी: एक परिचय

10.3.1 दलित जीवन से संबंधित हिंदी कहानी लेखन की परम्परा और दलित कहानियाँ

10.3.2 दलित कहानी का स्वरूप

10.3.3 दलित कहानियों में वर्ण एवं जाति

10.3.4 दलित कहानियां, परम्पराएँ एवं सामाजिक संबंध

10.3.5 अस्पृश्यता और दलित कहानियाँ

10.3.6 शिक्षण संस्थान और दलित कहानियाँ

10.3.7 दलित कहानियों में स्त्री समाज

10.4 पाठ सार

10.5 पाठ की उपलब्धियाँ

10.6 शब्द संपदा

10.7 परीक्षार्थ प्रश्न

10.8 पठनीय पुस्तकें

10.1 प्रस्तावना

20वीं सदी विमर्शों की सदी रही है। इस सदी में समाज के सभी वंचित समूहों ने अपने हक, अधिकार और अपनी अस्मितागत पहचान के लिए निर्णायक लड़ाई छेड़ रखी है। ये लड़ाई किसी के विरूद्ध नहीं, बल्कि अपने पक्ष में लड़ी जा रही है। इन लड़ाइयों के पीछे एक सुविचारित दर्शन कार्य कर रहा है। हिंदी साहित्य के चारों विमर्शों (दलित, स्त्री, आदिवासी एवं अल्पसंख्यक) में समाज के इन वंचित वर्गों ने कहानी, कविता, उपन्यास, आत्मकथा और अन्य विधाओं के माध्यम से साहित्य जगत में मुख्य धारा का ध्यान अपनी ओर खींचा है। दलित का शाब्दिक अर्थ है - ''जिसका दमन/दलन किया गया हो।''

हम देखते हैं कि पिछले दो ढाई दशकों में साहित्य और विचारधारा की दुनिया में बहुत बदलाव आए हैं उनमें दलित साहित्य की बड़ी अहम भूमिका है। किन्तु विषय-वस्तु, शिल्प पात्र चयन, मूल्य और सिद्धांतों की दृष्टि से इनमें बहुत सारी भिन्नताएँ और अनेक विशेषताएं पाई जाती है जैसे - परंपरागत कहानी के लेखक मुख्य तौर पर हिंदी में गैर दलित है, उन पर मार्क्सवाद, गांधी, लोहिया आदि के विचारधारा का प्रभाव देखा जाता है। जबकि दलित कहानीकार अधिकतर दलित वर्ग के व्यक्ति है, जिनपर ज्योतिबा फुले व डाॅ. अम्बेडकर का समतापरक एवं राष्ट्रीय एकता के विचारों का सीधा प्रभाव है। पूर्व में कुछ दलितों को विषय बनाकर गैर दलित साहित्यकारों ने भी कहानियां लिखी हैं। जैसे प्रेमचंद ने दलित को विषय बनाकर बहुत सारी कहानियाँ लिखी है।

गरीबी, भुखमरी, अकाल, वर्ण और वर्ग संघर्ष या साम्प्रदायिकता आदि को लेकर आत्मकथा, कविता, कहानी, आलोचना, उपन्यास और नाटक सहित साहित्य की लगभग सभी विधाओं के माध्यम से दलित लेखकों ने साहित्य की दुनिया का विस्तार किया है। इनमें आत्मकथा, कहानी और कविता दलित साहित्य की प्रारम्भिक विधाएँ हैं। मुख्य तौर से दलित कहानियों में दलित जीवन की भिन्न-भिन्न तस्वीरें दिखाई देती है जिन्हें पढ़कर भारतीय सामाजिक संरचना में एक दलित के जीवन की कठिनाई को समझा जा सकता है। अतः यह कहा जा सकता है कि दलित कहानियाँ दलित वर्ग एवं समाज को समझने का एक बड़ा माध्यम है। इस तरह के चिन्तन एवं अध्ययन से साहित्य का फलक विस्तृत होता है। इन कहानियों में कहानीकार ने भाषा एवं शैली को दलित जीवन के जैसा ही दिखाने का प्रयास किया है।

10.2 उद्देश्य

इस पाठ के अध्ययन के उपरान्त आप -

- दलित कहानी लेखन की परम्परा को समझ पाएँगे।
- दलित कहानी में मौजूद दलित समाज के स्वरूप और उसके विचार को जान सकेंगे।
- दलित कहानी में उपस्थित वर्ग, जाति, अस्पृश्यता आदि को सवालों को समझ पाएँगें।
- दलित कहानियों में स्त्री समाज एवं उनकी समाज से स्थिति को समझ सकेंगे।
- समकालीन समय के साथ दलित कहानियों के अंतः संबंध एवं कहानी कला को जान सकेंगे।

10.3 मूल पाठ: दलित कहानी: एक परिचय

दलित कहानियों का रूप बहुत ही विस्तृत है। शोषण एवं उत्पीड़न के अलग अलग सवालों से गुज़रते हुए दलित समाज की समस्याओं को जितनी गहरी संवेदना के साथ दलित कथाकारों ने उठाया है, वह और कहीं नहीं देखा जाता है।

वैसे देखा जाए तो कहानी और दलित कहानी में विद्या की दृष्टि से कोई विशेष अंतर नहीं है। लड़ी जानेवाली लड़ाइया दलित कहानियों का मुख्य विषय होता है।

10.3.1 दलित जीवन से संबंधित हिंदी कहानी लेखन की परंपरा और दलित कहानियाँ

हिंदी में दलित जीवन से संबंधित कहानी लेखन की परम्परा को हम तीन हिस्सों में बाँटकर देख सकते हैं। प्रथम काल 1900 से 1960, द्वितीय काल सन् 1960 से 1990 तक का समय तथा तृतीय काल सन् 1990 से अब तक। प्रथम काल की दलित कहानियों में उन कहानियों को लिया जाता है, जिसमें दलित और गैर-दलित दोनों लेखक शामिल है जैसे माधव राव सप्रे की कहानी 'एक टोकरी भर मिट्टी' जो 1901 में प्रकाशित हुई इससे लेकर प्रेमचन्द की 'ठाकुर का कुआँ, कफन एवं जयशंकर प्रसाद की मधुआ, यशपाल की सतमी के बच्चे फणीश्वर नाथ रेणु की 'ठेस' अमरकान्त की जिन्दगी और जोंक' जैसी कहानियों को शामिल किया जा सकता है। इन कहानियों का मुख्य विषय अस्पृश्यता, भूख, गरीबी आदि सवालों को उठाया गया है, तथा साथ ही भारतीय सामाजिक संरचना में निम्न एवं दलित समाज की त्रासद जिन्दगी की मार्मिक चित्रण किया गया है।

द्वितीय काल की कहानियों में सन् 1960 के बाद महाराष्ट्र में प्रारम्भ हुए दलित आन्दोलन के प्रभाव में लिखी गई कहानियों को रखा जा सकता है, इसमें दलित एवं गैर दलित कथाकारों की बहुत संख्या में भागीदारी देखी जाती है। इन कहानियों पर ज्योतिबा फुले, डाॅ. अम्बेडकर, नामदेव ढसाल एवं जे.वी. पँवार द्वारा सन् 1972 में महाराष्ट्र में गठित 'दलित पैन्थर' का गहरा प्रभाव है। विजेन्द्र अनिल की विस्फोट, विजयकान्त की गरीधार सहित सन् 1979 में मराठी में प्रकाशित दया पँवार की चर्चित आत्मकथा बलूत को देखा जा सकता है। इस दौरान हिंदी के दलित लेखकों में सन् 1975 में सतीश ने वचनबद्ध सन् 1978 में मोहनदास नैमिशराय ने सबसे बड़ा सुख और सन् 1980 में ओमप्रकाश वाल्मीकि ने अन्धेरबस्ती जैसी कहानियाँ लिखी। इनमें से 1975 की मुक्ति पत्रिका में प्रकाशित कहानी 'वचनबद्ध' को हिंदी की पहली प्रकाशित दलित कहानी मानी जाती है। इसी समय के कुछ मुख्य कहानीकारों जैसे हृदयेश, मधुकर सिंह, मुद्राराक्षस, सतीश जमाली, शिवमूति, बलराम आदि ने दलित समाज से सम्बन्धित कहानियाँ लिखकर साहित्य की दुनिया का विस्तार किया है।

तृतीय काल का समय दलित कहानी के विकास की दृष्टि से बहुत ही महत्वपूर्ण कहा जा सकता है। इस समय हिंदी साहित्य में जो कहानियाँ लिखी गई वह भी दलित की दृष्टि से लिखी गई तथा स्वयं उन्हें दलित साहित्यकारों ने ही लिखा। इन साहित्यकारों ने अपनी कहानियों में दलितों के सवालों को प्रतिबद्धता के साथ उठाया है। मण्डल आयोग की रिपोर्ट 1990 में लागू

होने के बाद देश में आरक्षण के सवाल पर जो बड़े पैमाने पर आन्दोलन हुए, उसके कारण हिन्दी में दलित कहानी एवं लेखन को बल मिला। बहुत से साहित्यकार जैसे ओमप्रकाश वाल्मीकि, मोहनदास नैमिशराय, सुशीला टाकभौरे, जयप्रकाश कर्दम, श्यौराज सिंह 'बेचैन', सूरजपाल चैहान, रजन रानी मीनू आदि कहानीकारों ने बुद्ध अम्बेडकर और फुले से प्रभावित होकर प्रभावशाली दलित कहानियाँ लिखी है। इन कहानियों में भारतीय सामाजिक जीवन के यर्थात का चित्रण किया गया है। दलित समाज से जुड़े सवालों को इन साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं में बहुत अच्छी तरह से दिखाने का प्रयास किया है। ओमप्रकाश वाल्मीकि की 'सलाम' कहानी एवं पच्चीस चैका डेढ़ सौ, मोहनदास नैमिशराय की अपना गाँव, सुशील टाकभौरे की सिलिया एवं कड़वा सच, जयप्रकाश कर्दम की नो बार आदि कहानियों में दलित समाज का सही रूप देखने को मिलता है।

बोध प्रश्न

- कौन सा काल दलित कहानियों की दृष्टि से महत्वपूर्ण है?

10.3.2 दलित कहानी का स्वरूप

हम देखते हैं कि ज्योतिबा फुले और बाबा साहेब अम्बेडकर के विचारों से प्रभावित होकर ही दलित कहानी का उदय हुआ है। दलित कहानी में सामाजिक जीवन की मुख्यधारा में हाशिए की ज़िन्दगी जी रहे दलित समाज के अधिकारों को लेकर बहुत सी बातें की गई है। सन् 1956 में जब अम्बेडकर ने हिन्दू धर्म को त्यागने की घोषणा की उनका कहना था कि ''गले-सड़े धर्म को त्यागकर, जो असमानता और उत्पीड़न को मान्यता देता है। मैं आज एक जन्म ले रहा हूँ.... मैं हिन्दू धर्म को त्यागता हूँ।'' और इसका गहरा असर सामाजिक सांस्कृतिक और राजनीतिक जीवन की मुख्य धारा पर पड़ा।

हम देखते हैं कि हिंदी दलित साहित्य पर मराठी के दलित सन्दर्भों का गहरा प्रभाव पड़ा है। स्वामी अछूतानन्द के प्रयासों से हिंदी क्षेत्र में दलित चेतना का उदय हुआ तथा दलित आन्दोलन को एक नई दिशा मिली।

मण्डल आयोग की रिपोर्ट 1990 में लागू होने के बाद दलित लेखकों ने भारतीय समाज को दलितों की नज़र से देखना शुरू किया तथा अपने भोगे हुए अनुभवों का बयान करना शुरू किया। इन अनुभवों में वर्ण-व्यवस्था का प्रतिरोध सामन्तवाद के दमन और शोषण के खिलाफ दलित समाज में प्रतिरोध की चेतना का विकास हुआ ओमप्रकाश वाल्मीकि की कहानी 'पच्चीस चैका डेढ़ सौ', कहानी में मास्टर का यह कथन ''दिमाग में कूड़ा करकट जो भरा है। पढ़ाई-लिखाई के संस्कार तो तुम लोगों में आ ही नहीं सकते'' यह कथन दलितों के बारे में मुख्यधारा की बनी धारणा एवं मानसिकता को दर्शाता है उसी प्रकार उनकी सलाम कहानी के नायक का

यह कथन उनके अन्दर स्वर्ण समाज के खिलाफ पनप रहे आक्रोश को दिखाता है। ''आप चाहे जो समझें मै। इस रिवाज को आत्मविश्वास तोड़ने की साज़िश मानता हूँ। यह सलाम की रस्म बन्द होनी चाहिए'' (सलाम, ओमप्रकाश वाल्मीकि)

दलित कहानी में नीहित दलित समाज के जीवन्त अनुभव का यह सही अर्थात है जिसे वर्ण एवं जाति केन्द्रित सामाजिक व्यवस्था के शोषण और दमन दलित कहानीकारों ने रचा है। इसीलिए बीसवीं सदी में हुए सदी में हुए दलित आन्दोलनों और विचारधारा के प्रभाव में जो दलित कहानियाँ लिखी गई है अगर हम उनको देखें तो साफ पता चलता है कि दलित कहानियाँ केवल कहानी नहीं है बल्कि दलित समाज के उत्पीड़न, संघर्ष और प्रतिरोध का सही चित्रण पेश करती है। तथा दलित लेखकों ने गैर दलित लेखन के जैसा ही अपनी संस्कृति सामाजिक संघर्ष और पारम्परिक वर्ण एवं जाति केन्द्रित सामाजिक व्यवस्था में अपना वजूद तलाशने का प्रयास किया है। दलित लेखकों ने वर्ण एवं जाति को अपने समाज के शोषण का सबसे बड़ा कारण माना है।

बोध प्रश्न

- 'सलाम' कहानी के लेखक का नाम बताएं?

10.3.3 दलित कहानियों में वर्ण एवं जाति

दलित लेखकों की कहानियों को पढ़ने के बाद ये लगता है कि इनल ेखकों का मुख्य लक्ष्य वर्ण एवं जाति केन्द्रित असमानता तथा उसके शोषण एवं दमन को अपने साहित्य में प्रादर्शित करना होता है। कुछ इतिहासकारों और समाजशास्त्रियों का यह मानना है कि वर्ण-जाति व्यवस्था का केवल उद्देश्य समाज को नियन्त्रित एवं संचालित करने के लिए भी तथा श्रमिकों का विभाजन इसका लक्ष्य था। किन्तु इसका विरोध करते हुए अम्बेडकर ने लिखा था कि ''जाति सिर्फ श्रमिकों का विभाजन नहीं है वह वंशगत है, जिसमें श्रमिकों का वर्गीकरण एक के ऊपर दूसरी सीढ़ीनुमा है, इसमें जिसका जन्म जिस तल (जाति) में होता है, वही उसी तल में मरता है''। इसी कारण यह वर्ण और जाति को दलित कहानीकारों ने इसे अपनी कहानी का हिस्सा बनाया है। इस संदर्भ में हम जयप्रकाश कर्दम की 'जो बार' कहानी का एक अंश देख सकते हैं-

''बेटी एक बात तो बताओ
क्या पापा?
इस लड़के की कास्ट क्या है?''

लड़की का पिता जो उच्च वर्ग का था उसे जब लड़के की जाति पता चलती है कि वह दलित है तब पिता बोलता है ''आखिर नो बार का यह मतलब नहीं कि किसी चमार-चूहड़े के साथ'' यह

कहानी झुठी प्रगतिशीलता का पर्दाफ़ाश करती है। हम देखते हैं कि आज भी हमारा समाज उसी पुरानी रूढ़ियों में जकड़ा है, और आज भी जाति एवं वर्ण-व्यवस्था से मुक्त नहीं हो पाया है।

बोध प्रश्न

- वर्ण एवं जाति व्यवस्था से आप क्या समझते हैं?

10.3.4 दलित कहानियां, परम्पराएँ एवं सामाजिक संबंध

अधिकतर यह देखने में आता है कि दलित कहानियों में उच्च वर्ग के भारतीय समाज में शोषण की बहुत सी परम्पराओं पर व्यंग्य किया गया है। दलित कथाकारों ने इन कहानियों में परम्पराओं से जुड़ी हुई निर्मितियों को खुद झेला है, तथा उनसे सीधी मुठभेड़ की है। इस सन्दर्भ में ओमप्रकाश वाल्मीकि ने सलाम कहानी में भारतीय समाज में दलितों के लिए सदियों से मौजूद 'सलामी देने की परम्परा का विरोध किया। इस प्रकार की परम्पराओं का निर्माण मुख्यधारा के समाज द्वारा दलित समाज को शेष समाज के सामने नीचा दिखाने के लिए किया गया है- कहानी का नायक हरीश ने तीखे शब्दों में कहा, 'आप चाहे जो समझें, मैं इस रिवाज को आत्मविश्वास तोड़ने की साज़िश मानता हूँ। यह सलाम की रस्म बन्द होनी चाहिए।'

लेखक जयप्रकाश कर्दम ने इस कहानी के माध्यम से दलित आत्मसम्मान को ठेस पहुँचानी वाली सामाजिक परम्पराओं का घोर विरोध किया है। गौर करने की बात यह है कि दलित समाज के अन्दर यह प्रतिरोध की भावना तथा चेतना शिक्षा के माध्यम से ही आती है। दलितों का अनपढ़ होना, उन्हें सामाजिक रूढ़ियों एवं असम्मान जनम परम्पराओं को मानने के लिए मजबूर करता है। दलित कहानीकारों ने अपनी कहानियों में इनका गहरा विरोध किया है।

10.3.5 अस्पृश्यता और दलित कहानियाँ

भारतीय समाज के शोषणकारी परम्पराओं को दलित साहित्यकारों ने अपनी कहानियों में बहुत ही सुन्दर ढ़ंग से दिखाने का प्रयास किया है। भारतीय समाज में प्रारम्भ से ही कुछ चीजें उत्कृष्टता और 'पवित्रता' का प्रतीक रही है, चाहे वह 'ज्ञान' का मन्दिर हो अर्थात शिक्षण संस्थान या फिर जल से जुड़े कुएँ, तालाब या नदी के घाट हो। इस तरह की निमिर्तियों को भारतीय के सर्वण वर्ग ने उत्कृष्ट और पवित्र घोषित कर दलित समाज लिए अस्पृश्य कर रखा है। इन सब जगहों पर अगर दलित समाज का व्यक्ति गलती से भी करीब आ जाए तो समाज के दूसरे लोग उन्हें प्रताड़ित करते हैं। दलित कहानियों में पानी अथवा जल को कथाकारों ने एक बड़ी समस्या के रूप दिखाने का प्रयास किया है। इस मुद्दे पर प्रकाश डालते हुए 1927 में अम्बेडकर द्वारा चलाए गए आन्दोलन महाड तालाब (1927 में) और 1930 में मन्दिर प्रवेश आन्दोलन को भी देखा जा सकता है। जिसका गहरा प्रभाव प्रेमचन्द की 'ठाकुर का कुआँ जैसी कहानियों पर भी देखा जा सकता है। दलित कहानीकार नीरा परमार की कहानी ''वैतरणी' और

सूरजपाल चैहान की टिल्लू का पोता कहानी में अस्पृश्यता के इस प्रसंग को बहुत ही गंभीरता से दिखाया गया है।

'बैतरणी कहानी के इस संदर्भ के द्वारा हम ब्राह्मणवाद की एक झलक देख सकते हैं। "नेताजी, आप तो अन्नदाता हैं, प्रजा के मालिक ठहरे। एक चापाकल हमारे आँगन में लग जाता। पण्डिताइन को दरवाज़े पर जातकुजात के बीच पानी भरने जाना पड़ता है।" दलित कहानियों में बहुत अधिक मात्रा में ब्राह्मणवाद का विरोध देखा जाता है।

दलित कहानियों में एक और हिस्सा है जो कि दलित जातियों के अन्दर की कहानी है और वो ये कि दलितों के अन्दर भी एक दूसरे के प्रति अस्पृश्यता का भाव भरा हुआ है। इस संदर्भ में ओमप्रकाश वाल्मीकि की कहानी शवयात्रा और सूरजपाल चैहान की कुएँ से तांगे तक जैसी कहानियों को देखा जा सकता है। इन कहानियों के लेखकों ने यह दिखाने का प्रयास किया है कि जातीय वर्चस्व का अन्तर्विरोध दलितों के अन्दर भी है। कहानी कुएँ से तांगे तक में यह अन्तर्विरोध दिखाने का प्रयास किया गया है किस प्रकार दलित समाज में 'चमार' अपने को भंगी से श्रेष्ठ मानते हैं। यहाँ पर एक अलग प्रकार का अन्तर्विरोध देखने को मिलता है।

बोध प्रश्न

- 'कुएँ से तांगे तक' कहानी के कहानीकार कौन हैं?

10.3.6 शिक्षण संस्थान और दलित कहानियाँ

दलित साहित्यकारों ने अपनी दलित कहानियों में इस बिन्दु पर बहुत अधिक ज़ोर दिया है कि किस प्रकार शिक्षण संस्थानों में दलित के साथ भेदभाव किया जाता है। इस संदर्भ में बहुत से कहानीकारों ने ये विचार किया है कि ज्ञान के बिना समाज का विकास सम्भव नहीं है। समाज के विकास के लिए शिक्षा एक अनिवार्य तत्व माना जाता है। इसके बिना विकास की कल्पना हम कर ही नहीं सकते हैं। शिक्षा से वंचित रहने से व्यक्ति अथवा समाज का मानसिक, आर्थिक और शारीरिक शोषण होता है। यदि एक व्यक्ति शिक्षा से वंचित रहता है, तब वह न तो अपना बौद्धिक विकास ही कर सकता है और न ही समाज में सम्मानपूर्वक रहने के लिए अर्थोपार्जन कर सकता है। किन्तु अगर वह इसी समय शिक्षा प्राप्त कर लेता तो वह अपना और अपने परिवार का बहुत ही अच्छे प्रकार से भरण-पोषण कर सकता है। दलित कहानीकारों का ऐसा मानना है कि ज्ञान की परम्परा से वंचित रहने के कारण ही दलित समाज का सबसे अधिक शोषण हुआ है तथा वे विकास से वंचित रह गए हैं। दलित समाज में बहुत अधिक गरीबी देखी जाती है और इस गरीबी का मुख्य कारण अशिक्षा है। इस शिक्षा की कमी के कारण ही उनका आर्थिक शोषण होता है। ओमप्रकाश वाल्मीकि की 'पच्चीस चैका डेढ़ सौ', सुशीला टाकभौरे की 'साक्षात्कार' श्यौराज सिंह बेचैन की 'शोध प्रबंध' आदि कहानियों में शिक्षण संस्थानों में दलित समाज की स्थिति का सही चित्रण पेश करती है। ओमप्रकाश वाल्मीकि की कहानी 'पच्चीस चौका डेढ़ सौ' में यह बताया है कि किस प्रकार अशिक्षा के कारण कथानायक के पिता का आर्थिक शोषण होता है

अशिक्षित होने के कारण गाँव के साहुकार और चौधरी दलित समाज के भोली-भाली जनता का आर्थिक शोषण करते हैं। इस कहानी के माध्यम से हम देखते हैं कि किस प्रकार एक अनपढ़ दलित का पुत्र शिक्षा प्राप्त कर यह सिद्ध कर देता है कि शिक्षा में बहुत बल है। और इससे न सिर्फ आर्थिक शोषण से मुक्त होने में मदद होती है, बल्कि इस प्रकार की धारणा का भी खण्डन करता है कि तथाकथित 'बड़े लोग' नैतिक दृष्टि से चरित्रवान और बेहद इमानदार होते हैं। यह केवल एक भ्रम है, सच्चाई कुछ और होती है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि दलित कहानियाँ शिक्षण संस्थानों में दलितों के साथ किए जा रहे भेदभाव की समस्या को दिखाने का प्रयास करती है।

बोध प्रश्न

- दलित समाज में गरीबी का मुख्य कारण क्या है?

10.3.7 दलित कहानियों में स्त्री समाज

आज के समय में हम यह देखते हैं कि दलित कहानियों का एक बहुत बड़ा भाग स्त्री जीवन के सवाल पर केन्द्रित है। दलित स्त्री के जीवन के सवाल को समझने के लिए भारतीय समाज में स्त्री जीवन के यथार्थ को जानना बहुत ही जरूरी है। ऐसा देखा जाता है कि भारतीय समाज में स्त्रियों की ज़िन्दगी को दो व्यवस्था नियंत्रित करती है एक पितृसत्ता और दूसरी वर्ण व्यवस्था। धर्म की इसमें बहुत ही मुख्य भूमिका होती है। विवाह जैसे बंधनों द्वारा ये स्त्रियों को सबसे अधिक बांधना चाहती है। इसलिए अन्य स्त्री लेखन की तरह सुशीला टाकभौरे, कौशल्या बैसन्त्री, रजनी तिलक, अनीता भारती, विमल थोराट, रजत रानी मीनू आदि दलित लेखिकाओं ने पितृसत्ता और वर्ण व्यवस्था के आधार पर दलित स्त्री के शोषण को अपने लेखन का केन्द्र बनाया है। इस संदर्भ में सुशीला टाकभौरे की 'सिलिया' कहानी इसका एक सुन्दर उदाहरण पेश करती है।

बोध प्रश्न

- दलित लेखिकाओं ने अपने लेखन का केन्द्र किसको बनाया है?

10.4 पाठ सार

कहानी और दलित कहानी में विद्या की दृष्टि से कोई विशेष अन्तर नहीं है किन्तु इनमें विषय वस्तु, शिल्प, पात्र चयन, मूल्य और सिद्धान्तों की दृष्टि से इनमें अनेक भिन्नताएं पाई जाती है। गैर दलित लेखक जो हिंदी के हैं उनके लेखों में मार्क्स, गांधी, लोहिया या अन्य विचारधारा का प्रभाव देखा जाता है, जबकि दलित लेखकों के लेखन में ज्योतिबा फुले, डॉ. अम्बेडकर के विचारधारा का प्रभाव देखा जाता है। दलित कहानियों में लेखकों ने दलित समाज की प्रमुख बुनियादी समस्याओं को कहानी का केन्द्रीय विषय बनाया है। इन समस्याओं में सबसे प्रमुख वर्ण और जाति का सवाल इन समस्याओं को दलित कहानियों में चित्रित किया गया है।

वर्ण और जाति के कारण ही उन्हें भारतीय समाज में ज्ञान और सम्पत्ति से वंचित रखा गया है। दलित समाज की गरीबी का सबसे बड़ा कारण उनके साथ अस्पृश जैसा व्यवहार करना। दलित लेखकों का कहना है कि दलित होने की पीड़ा की अनुभूति कोई दूसरा नहीं कर सकता है। इसलिए दलित उत्पीड़न का बयान भी स्वयं ही वे करते हैं। दलित लेखक अपने साहित्य में इन सवालों की कहानी का हिस्सा बनाते हैं। अतः ऐसा देखा जाता है कि साहित्य के क्षेत्र में दलित कहानियों का महत्वपूर्ण स्थान है।

10.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष उपलब्ध हुए हैं:-

1. दलित कहानियों के अध्ययन के बाद ऐसा लगा कि इन कहानियों का फलक बहुत ही विस्तृत है।
2. इन कहानियों में दलित समाज के शोषण और उत्पीड़न को बहुत ही सुन्दर ढ़ंग से दर्शाया गया है।
3. दलित समाज के उत्पीड़न का सबसे बड़ा कारण वर्ण एवं जाति केन्द्रित भारतीय सामाजिक संरचना को बताया गया है।
4. हिंदी में दलित जीवन से सम्बन्धित कहानी लेखन को तीन भागों में बाँटकर देखते हैं।दलित कहानियों का मुख्य मुद्दा अस्पृश्यता है अतः यह किसी भी समाज के लिए हानिकारक सिद्ध हो सकता है।

10.6 शब्द संपदा

1. वैचारिकी	-	विचार से संबंध रखने वाला
2. वर्ण	-	भेद, प्रकार, क़िस्म
3. अस्पृश्यता	-	अछूतपन
4. अभिव्यक्ति	-	किसी बात आदि को व्यक्त करना
5. प्रतिबद्धता	-	वचनबद्धता
6. हाशिए का समाज	-	एक ऐसा वर्ग जो किसी न किसी रूप में वंचना एवं वर्चजनाओं का शिकार है
7. संस्कार	-	मानसिक शिक्षा, शुद्धि, परिस्करण
8. शोषण	-	दूसरे के श्रम का अनुचित लाभ उठाना
9. दमन	-	दबाने या रोकने की क्रिया
10. सर्वण	-	उच्च वर्ग

10.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खण्ड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. दलित कहानी लेखन परम्परा की चर्चा कीजिए।
2. दलित कहानियों की वैचारकी पर प्रकाश डालिए।
3. दलित कहानियों में निहित अस्पृश्यता का वर्णन कीजिए।

खण्ड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. शिक्षण संस्थानों में दलितों का शोषण पर अपने विचार प्रकट कीजिए।
2. दलित कहानियों में स्त्रियों की दशा पर चर्चा कीजिए।
3. दलित कहानियों में लेखकों ने दलित समाज की बुनियादी समस्याओं को कहानी का 'केन्द्रीय विषय' बनाया है। इस कथन की पुष्टि कीजिए।

खण्ड (स)

। सही विकल्प चुनिए

1. 'एक टोकरी भर मिट्टी' के लेखक कौन हैं?

   (क) प्रेमचन्द (ख) जयशंकर प्रसाद (ग) माधव राव सप्रे (घ) यशपाल

2. 'दलित पैन्थर' का गठन किस वर्ष हुआ था?

   (क) 1979 (ख) 1960 (ग) 1962 (घ) 1972

3. हिंदी की पहली प्रकाशित दलित कहानी किसे माना जाता है?

   (क) वचनबद्ध (ख) सबसे बड़ा सुख

   (ग) अंधेरबस्ती (घ) एक टोकरी भर मिट्टी

।। रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1. सलाम कहानी के लेखक ..... हैं।
2. अछूत की शिकायत का प्रकाशन वर्ष ..... है।
3. मण्डल आयोग की रिपोर्ट वर्ष ..... में लागू किया गया।

।।। सुमेल कीजिए

(1) ओमप्रकाश वाल्मीकि	(क) वैतरणी
(2) मोहनदास नैमिशराय	(ख) पच्चीस चैका डेढ़ सौ
(3) सुशीला टाकभौरे	(ग) अपना गाँव
(4) नीरा परमार	(घ) सिलिया

10.8 पठनीय पुस्तकें

(1) हिंदी दलित कथा-साहित्य, अवधारणाएँ और विधाएँ रजत रानी 'मीनू' - अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्युटर्स, नई दिल्ली

(2) हिंदी कथा साहित्य में दलित विमर्श - दिलीप मेहरा क्लासिकल पब्लिशिंग कम्पनी - नई दिल्ली

(3) आधुनिक साहित्य में दलित विमर्श, देवेन्द्र चैबे, ओरियंट ब्लैक स्वान, दिल्ली

इकाई 11 : जयप्रकाश कर्दम : एक परिचय

इकाई की रूपरेखा

11. 1 प्रस्तावना
11.2 उद्देश्य
11.3 मूल पाठ : जयप्रकाश कर्दम : एक परिचय
11.3.1 जन्म एवं पारिवारिक जीवन
11.3.2 शिक्षा
11.3.3 रचना संसार
11.3.4 सम्मान एवं पुरस्कार
11.4 पाठ सार
11.5 पाठ की उपलब्धियाँ
11.6 शब्द संपदा
11.7 परीक्षार्थ प्रश्न
11.8 पठनीय पुस्तकें

11.1 प्रस्तावना

साहित्य में सामाजिक गतिविधियों का लेखा जोखा होता है। किसी भी रचना को पढ़कर पाठक के मन में उत्सुकता पैदा होती है कि साहित्यकार कौन है ? साहित्यकार समाज में रहकर ही साहित्य सृजन करता है। अपनी अनुभूति को अभिव्यक्त करता है। इस लिए पाठक साहित्यिक रचना के साथ-साथ साहित्यकार को भी जानने का प्रयास करता है। साहित्यकार अपने आस-पास की घटनाओं का जिक्र करता है और अपने रचना के माध्यम से समाज को जागृत करने का काम करता है। इस लिए पाठक अपने साहित्यकार के बारे में जानने को इच्छुक होता है।

भारतीय समाज में हजारों सालों से दबाया हुआ, कुछला हुआ, शोषित, दमित समाज को दलित या निम्न समाज कहा जाता है। दलित लेखक अपनी अनुभूति को लेखन के माध्यम से अभिव्यक्त कर रहें हैं। दलित साहित्य में समाज का यथार्थ रूप को प्रस्तुत करने का प्रयास किया जा रहा है। दलित लेखकों में ओमप्रकाश वाल्मीकि, मलखान सिंह, डॉ. जयप्रकाश कर्दम, डॉ. श्यौराज सिंह बेचैन, मोहनदास नैमिशराय, रजनी तिलक, सुशीला टाकभौरे आदि हैं। दलित साहित्य के प्रमुख लेखकों में से एक डॉ. जयप्रकाश कर्दम जी हैं। इन्होंने कविता, कहानी, उपन्यास और आलोचनात्मक रचना की है। प्रथम हिंदी दलित उपन्यास 'छप्पर' के लेखक हैं। इनका जन्म एवं परिवार तथा शिक्षा के साथ-साथ उनके रचना संसार के बारे में अध्ययन करेंगे।

11.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन के बाद आप –

- सुप्रसिद्ध हिंदी दलित लेखक डॉ. जयप्रकाश कर्दम जी का जन्म एवं पारिवारिक जीवन के बारे में जानेंगे।
- डॉ. जय प्रकाश कर्दम के रचना संसार से परिचित होंगे।

- डॉ. जयप्रकाश कर्दम के सम्मान एवं पुरस्कार को जानेंगे।
- हिंदी दलित साहित्य में डॉ. जयप्रकाश कर्दम का महत्त्व को जानेंगे।

11.3 मूल पाठ : जयप्रकाश कर्दम : एक परिचय

11.3.1 जन्म एवं पारिवारिक जीवन

डॉ. जयप्रकाश कर्दम का जन्म 6 जुलाई 1958 को उत्तरप्रदेश राज्य के गाजियाबाद जिले के इंदरगढ़ी ग्राम में हुआ। इनके माता का नाम अतरकली और पिता नाम हरिसिंह था। जयप्रकाश कर्दम का भाई-बहनों में दूसरा क्रम आता है। भाई-बहनों क्रम इस प्रकार आता है - सोनबत्ती, जयप्रकाश, खजान सिंह, मधुबाला, मालती, संदीप कुमार और कुलदीप। वे किसान परिवार से थे। इनका विवाह सन् 1988 ई. में तारा के साथ हुई। इनकी तीन संतान हैं - कपिला और विशाखा दो बेटियाँ, कुणाल बेटा हैं। इनकी आर्थिक स्थिति बहुत कमजोर थी। इनके पिताजी क्षय रोग से ग्रस्त थे इसी बीमारी के कारण सन् 1976 ई. में उनकी मृत्यु हो गई थी। इस समय जयप्रकाश कर्दम की उम्र सिर्फ सोलह साल की थी। वे कहते हैं कि "मुझे याद है, जब में छोटा-सा था, वे (पिताजी) मजदूरी करने गाजियाबाद जाते थे। स्टेशन पर मालगाड़ी में जो सामान आता था.....उसे उतारने का काम करते थे। मुझे पता नहीं उनकों क्या मजदूरी मिलती थी। हाथ-पैर काले हो जाते थे। साइकिल से आते जाते थे, बाद में बिमारी बड़ी तो और कुछ नहीं कर पाते थे। उन्होंने तांगा-घोड़े का काम किया। मरने से कुछ दिन पहले वो भी उनके बस का नहीं रहा था। वे टिक गए थे। जहाँ तक मेरी बात है, मैं परिवार में बड़ा बेटा था, एक बेटी के बाद दादाजी बहुत प्यार करते थे। माँ-बाप का भी लाडला था। उनकी हसरत थी कि मैं कुछ बनूँ। बहुत अछी तरह उन्होंने पाला और अपनी परिस्थिति के हिसाब से जितना बेहतर हो सकता था उन्होंने किया लेकिन परिवार की हालत बिगड़ती गई। स्थिति यह आ गई थी कि आठवीं पास करने के बाद मेरे पिताजी ने मुझे पढ़ाई से रोक कर वेल्डिंग का काम सीखने के लिए कहा।" (दलित साहित्य के वैचारिकी- डॉ. जयप्रकाश कर्दम पृ. सं 2) जयप्रकाश कर्दम जी को बचपन से ही पढ़ाई की ललक लग गई थी इसलिए उन्होंने पढाई को जारी रखा।

बोध प्रश्न –

- जयप्रकाश कर्दम जी जन्म कब हुआ ?
- जयप्रकाश कर्दम जी संतान कितनी हैं ?

11.3.2 शिक्षा- दीक्षा

जयप्रकाश कर्दम की प्रारंभिक शिक्षा अपने गाँव की महानंद मिशन हरिजन प्राइमरी पाठशाला, इंदरगढ़ी से हुई। इन्होंने सन् 1970 ई. को कक्षा पांचवीं (98.8) प्रतिशत अंक से उतीर्ण किया। उच्च माध्यमिक शिक्षा के समय इन्हें अनेक कठिनायों का सामना करना पड़ा। 6 से 12वीं तक की शिक्षा इंटरमीडिएट कॉलेज आध्यात्मिक नगर, गाजियाबाद से हुई। उनका ध्येय आई आई टी (IIT) करने का था इसलिए वे आई आई टी(IIT) की परीक्षा भी उत्तीर्ण किए थे लेकिन उनकी आर्थिक परिस्थिति के कारण उन्होंने आई आई टी में प्रवेश नहीं ले पाए। जयप्रकाश कर्दम जी ने हिंदी, अंग्रेजी और दर्शनशास्त्र विषय के साथ सन् 1980 ई. में बी.ए उत्तीर्ण हुए और दर्शनशास्त्र विषय में सन् 1982 ई. में एम्.ए की उपाधि प्राप्त की। चौधरी चरण

सिंह विश्वविद्यालय (मेरठ विश्वविद्यालय) से व्यक्तिगत (Private) छात्र के रूप में हिंदी एवं इतिहास से एम. ए किया. सन् 2000 ई. में चौधरी चरण सिंह विश्वविद्यालय (मेरठ विश्वविद्यालय) से 'राग दरबारी का शास्त्रीय अध्ययन' विषय पर पीएच-डी की उपाधि प्राप्त की। प्रस्तुत कार्यरत निदेशक के रूप में केंद्रीय हिंदी प्रशिक्षण संस्थान नई दिल्ली में हैं।

बोध प्रश्न –

- जयप्रकाश कर्दम जी ने बी.ए में कौनसे विषय लिए थे ?

11.3.3 रचना संसार

जयप्रकाश कर्दम जी किसी एक विधा के रूप में नहीं आए। उन्होंने कभी कवि, उपन्यासकार, कहानीकार, संपादकीय, अनुवादक और आलोचक के रूप में प्रस्तुत हुए हैं। उनके रचनाओं में स्वयं की अनुभूति की अभिव्यक्ति दिखाई पड़ती है। उनकी हर रचना में जीवन के यथार्थ को दर्शाती है और दलित वर्ग की समस्याएँ स्वयं बोलने लगती हैं। जयप्रकाश कर्दम जी के दो उपन्यास, एक बाल साहित्य, दो कहानी संग्रह, तीन कविता संग्रह, एक खंड काव्य, चार आलोचना/वैचारिकी पुस्तकें, दो संपादित एक अनुदि, एक साक्षात्कार और कुछ बाल पुस्तकें साहित्य कुल दो दर्जन से अधिक पुस्तकें प्रकाशित हैं।

काव्य संग्रह –

डॉ. जयप्रकाश कर्दम जी के काव्य संग्रह हैं – गूंगा नहीं था मैं (1997), तिनका तिनका आग (2004), और बस्तियों से बाहर (2013), दुनियाँ के बाजार में (2021), लाशों के शहर में (2022) आदि प्रकाशित हैं।

गूंगा नहीं था मैं –

यह काव्य संग्रह सन् 1997 ई. में प्रकाशित हुआ है। इसमें कुल 25 कविताएँ हैं। 'किले' से लेकर 'क्षणिकाएँ' तक कविताओं में दलित-चेतना हैं। इस काव्य संग्रह में 'मेरी चाह' नामक कविता में जप्रकाश कर्दम जी कहते हैं कि अब दलित सवर्णों की चालबाज को समझ चूका है। वे आगे कहते हैं –

"मैं भोर के सूरज सा
उदय होना चाहता हूँ
अज्ञान के अंधेरों से
निकलना चाहता हूँ
बहुत भटका हूँ
असमानता और अन्याय की
गलियों में, मैं
समता के राजपथ पर
चलाना चाहता हूँ।"

तिनका तिनका आग –

यह काव्य संग्रह सन् 2004 ई. में प्रकाशित हुआ है। इसमें कुल 38 कविताएँ हैं। दलित या पिछड़े हुए व्यक्ति को क्रांति का संदेश कपोत पक्षी के द्वारा भेजते हैं –

"कपोत, तुम उडो
दूर देश तक जाओ
लेकिन
प्रेम की पाती नहीं
इस बार
क्रांति का संदेश लेकर जाओ
उस व्यक्ति की पास
नहीं पहुंचती जिस तक
अखबार की खबरें भी।"

बस्तियों से बाहर –

इस काव्य संग्रह में कुल 46 कविताएँ संकलित हैं। इस संग्रह के बारे में स्वयं जयप्रकाश कर्दम जी लिखते हैं कि "इस कविता संग्रह की समस्त कविताओं का स्वर और तेवर एक जैसा नहीं है.....इनमें जीवन के कठोर यथार्थ से लेकर कोमल भावनाएँ और संवेदनाएँ तक शामिल है। संग्रह की प्रतिनिधि कविता 'बस्तियों से बाहर' यदि आज के समय ज्वलंत और जरुरी प्रश्न है और इसे मानव- प्रगति के तमाम आधुनिक मॉडलों पर व्यंग्यात्मक टिपण्णी के रूप में भी देखा जा सकता है तो 'स्त्री बनती बेटी', 'तुम्हारी कोख में', 'नीम' ऐसी कविताएँ हैं जिनमें मानव मन की कोमल संवेदनाओं की अभिव्यक्ति है।"

हिंदू या सवर्ण समाज 'वसुधैव कुटुम्बकम' में विश्वास रखता है फिर भी दलितों के साथ जाति के आधार पर भेदभाव करता है इसलिए जयप्रकाश कर्दम जी ने अपने 'बस्तियों के बहार' नामक कविता में लिखते हैं कि -

"बंद कर मेरी रोशनी की सुराख
वे उजालों की सैर करते हैं
वसुधैवों एक कुटुंब बताने वाले
जाति वर्ण में बंटे फिरते हैं।"

बोध प्रश्न –

- 'गूंगा नहीं था मैं' कविता संग्रह में कितने कविता संकलित हैं ?
- 'तिनका-तिनका आग' कविता संग्रह में कितने कविता संकलित हैं ?

दुनियाँ के बाजार में

यह काव्य संग्रह 2021 में प्रकाशित हैं इसमें कुल 111 कविताएँ संकलित हैं। इस कविता संग्रह में भारतीय समाज के विभिन्न आयामों को सामने लाते हैं और इसमें गरीबी अमीरी के बीच की खाई की और भी इंगित करते हैं। जयप्रकाश कर्दम ने इस काव्य संग्रह के माध्यम से मनुष्य और मानवता को बचाए रखने की बात करते हैं। यह संग्रह वर्त्तमान को परखने का काम करता है। इस संग्रह की प्रमुख कविता 'दुनियाँ के बाजार में' शीर्षक कविता के माध्यम से कवि ने इंसानियत, प्यार और अदब को महत्व देते हुए समाज के याथार्थ को स्पष्ट करते हैं।

लाशों के शहर में

यह कविता संग्रह सन् 2022 में प्रकाशित हुआ है। इसमें छोटी-छोटी कविताएँ संकलित हैं। जिनमें ज्यादातर लघु कविताएँ हैं, जो आकार में छोटी होने के बावजूद शिल्प, संवेदना और स्वरूप के दृष्टि से अपने गंभीर प्रभाव छोड़ने में सक्षम हैं। इन कविताओं के माध्यम से प्रेम, स्वातंत्र्य, न्याय और समानता, सौहार्दय, सद्भाव की आवाज हैं।

राहुल - (खंड काव्य)

इसका प्रकाशन सन् 2011 में हुआ था। इसमें पांच सर्ग हैं, सर्ग एक 'राहुल जन्म' नाम से हैं। इस सर्ग में राहुल का जन्म का हर्षोल्लास का वर्णन हैं। सर्ग दो 'सिद्धार्थ का अभिनिष्क्रमण' नाम से है। इसमें आधी रात में सिद्धार्थ अपनी पत्नी और पुत्र को छोड़कर जाने का वर्णन हैं। सर्ग तीसरा में धम्मचक्र- प्रवर्तन का वर्णन है। सर्ग चौथा 'राहुल – बुद्ध मिलन' का वर्णन है। सर्ग पांचवां राहुल गमन हैं। इस खंड काव्य का उद्देश्य बताते हुए जयप्रकाश कर्दम कहते हैं कि "इस खंड काव्य में राहुल समस्त वंचित वर्गों का प्रतीक हैं। राहुल केवल अपने अधिकारों के लिए नहीं, अपनी माता यशोधरा के अधिकारों के लिए आवाज उठाता है। राहुल और यशोधरा की तरह शुद्धोधन भी वंचित जन है। राहुल पितृ प्रेम से, यशोधरा पति-सान्निध्य से वंचित है तो शुद्धोधन पुत्र-स्नेह से वंचित है। वह भी बुद्ध के समक्ष अपने अधिकार की बात करते हैं। वंचितों की अधिकार चेतना की अभिव्यक्ति का प्रयास ही इस खंड काव्य की रचना का मूल उद्देश है।"

कहानी संग्रह –

तलाश –

इस कहानी संग्रह का प्रकाशन सन् 2005 ई. में हुआ। इसमें कुल 12 कहानियाँ है- तलाश, सांग, नो बार, मोहरे, बिट्टन मर गई, मूवमेंट, लाठी, जरुरत, जहर, कामरेड का घर, गंवार और शीत लहर आदि हैं। लगभग इस संग्रह के सभी कहानियों में जाति केंद्र में दिखाई देती हैं। जाति के साथ-साथ शोषण, अत्याचार, स्त्री चेतना, दलित चेतना, सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और शैक्षणिक आयम भी देखने को मिलते हैं। इस संग्रह की 'नो बार' कहानी में सवर्ण परिवार द्वारा जातिभेद का लक्षण दिखाई देता है। इसमें सवर्ण समाज का परिवार अपनी लड़की के अंतर्जातीय विवाह के लिए मैट्रीमोनियल में 'नो बार' कहकर वर (दूल्हा) के लिए विज्ञापन देते हैं। यह विज्ञापन देखकर जब दलित लड़का उस लड़की के घर जाता है, दोनों एक दूसरों को पसंद भी करते हैं। जब लडके की जाति के बारे में लड़की के पिता

को पता चलता है तो तब वह कहता है – "वह सब तो ठीक है कि हम जाति-पांति को नहीं मानते और हमने मैट्रीमोनियल में 'नो बार' छपवाया था। लेकिन फिर भी कुछ चीजें तो देखनी ही होती है। आखिर नो बार का यह मतलब तो नहीं कि किसी चमार-चूहड़े के साथ।..." सवर्ण और दलित दोनों भी आखिरकार मनुष्य ही है फिर भी इन दोनों में जाति के आधार पर अलग अलग हैं। उच्च नीच का भाव है। सवर्ण खुद को उच्च मानता है और दलितों को नीच मानता है।

खरोंच –

यह कहानी संग्रह प्रथम सन् 2012 ई. में प्रकाशित हुआ था। इसमें कुल 12 कहानियाँ हैं। सूरज, छिपकली, खरोंच, पेंशन, हाउसिंग सोसाइटी, मजदूर खाता, रास्ते, मॉनीटर, गोष्टी, पगड़ी, मंगलसूत्र और मंदिर आदि कहानियाँ हैं। यह कहानियाँ समाज को न केवल उसका आइना दिखाती हैं अपितु उसे सार्थक बदलाव के लिए सोचने का अवसर प्रदान करती हैं। यह कहानियाँ सिर्फ दलित समाज की नहीं पूरे भारतीय समाज की समस्याओं को उठाया है। इन सभी कहानियों में दलित चेतना एवं मानवीय संवेदना को उजागर करती हैं।

बोध प्रश्न –

- 'तलाश' कहानी का प्रकाशन वर्ष क्या है ?

उपन्यास –

करुणा-

यह उपन्यास सन् 1986 ई. में प्रकाशित हुआ। इसमें गौतम बुद्ध के परिवर्तनिक धर्म को एक भिक्षुणी के माध्यम से पुनः स्थापित करने का प्रयास है। लेखक ने उपन्यास के आत्मकथ्य में लिखा है – "यदपि उपन्यास की नायिका 'करुणा' एक भिक्षुणी है, जिसके इर्द-गिर्द ही सारा कथानक घूमता है, किन्तु वास्तव में लेखक ने कभी किसी भिक्षुणी को अपनी आँखों से नहीं देखा है। प्राचीन बौध्द साहित्य में भिक्षुणियों का उल्लेख हुआ है कि पुरुषों के भाँती नारियाँ भी धर्म में प्रवृजित हुई है। तथा उन्होंने भी धर्म के हेतु बड़े से बड़ा त्याग किया है। भिक्षुओं की भांति भिक्षुनियाँ भी श्रमण जीवन व्यतीत करती थी तथा संघ में रहती थी। भिक्षुणी के रूप में करुणा की कल्पना का आधार यही प्राचीन साहित्य है।" यह कर्दम जी का लघु उपन्यास है।

छप्पर-

इस उपन्यास को हिंदी दलित साहित्य का प्रथम उपन्यास माना गया है। इसका प्रकाशन वर्ष 1994 हैं। इसका मुख्य पात्र चंदन हैं जो एक दलित परिवार का शिक्षित युवक है। दलित बस्तियों में स्कूल खोलकर बच्चों को शिक्षित करके उनमें आत्मसम्मान की भावना को जागृत करता है। चंदन की आकांक्षा समाज में बदलाव लाने के लिए संघर्षरत रहती है। चंदन कहता है "अपनी शिक्षा का उपयोग अपने दिन-हिन समाज के उत्थान के लिए करूँगा मैं उन पीड़ित शोषित और उपेक्षित लोगों को ऊपर उठाने के लिए काम करूँगा जो कीड़े-मकोड़े की तरह जीते हैं। शेष समाज जिनके साथ पशुवत व्यवहार करता है। उनको अपने पास नहीं बिठाता है और घृणा करता है .....वे लोग ठाकुर जमीनदारों की मार सहते हैं, हर तरह के अन्याय, शोषण

और उत्पीड़न के शिकार होते हैं। उन लोगों को शिक्षित करूँगा ताकि अपने शोषण की जंजीरों को तोड़ फेंकने के लिए वे उठ खड़े हों। उन्हें खड़ा होना सिखाऊंगा मैं।"

बोध प्रश्न –

- 'करुणा' उपन्यास का प्रकाशन वर्ष बताइए।
- 'छप्पर' उपन्यास कब प्रकाशित हुआ ?

उत्कोच

इस उपन्यास का प्रकाशन सन् 2019 में हुआ है। उत्कोच का शाब्दिक अर्थ है – घूस, रिश्वत, भ्रष्टाचार। यह उपन्यास समाज के व्याप्त भ्रष्टाचार को चित्रित करता है। इस उपन्यास का प्रमुख पात्र मनोहर है जो पिछड़ी जाति का व्यक्ति है। जयप्रकाश कर्दम ने उपन्यास के माध्यम से जहाँ दलित लोगों को कैसे क्लर्क, सफाई कर्मचारी या प्यून जैसी निचली पोस्ट पर उलझाए रखने का साजिश को दिखाने का प्रयास करते हैं। मनोहर रिश्वत लेन-देन का सक्त विरोधी है। वह एक एक्साइज विभाग में क्लर्क के पद पर कार्यरत है और पदान्नोत के लिए परीक्षाएँ देते रहता है लेकिन उसे पदान्नोत के लिए रिश्वत मांगते है तो यह नहीं देता है। इसलिए उन्हें साक्षात्कार में कम मार्क्स दिया जाता है और उनके पदन्नोत होने से रोका जाता है। कार्यलयों में उसके साथी उपेक्षा, उपहास और उत्पीडन करते हैं इसी वजह से उसकी पत्नी श्यामा भी मानसिक तनाव की शिकार बन जाती है। और अंत में मनोहर के पत्नी की मृत्यु हो जाती है। इस उपन्यास में मानसिक एवं सामाजिक संघर्ष को दिखाया गया है।

आलोचना एवं वैचारिक पुस्तकें –

डॉ. जयप्रकाश कर्दम जी कवि एवं लेखक के साथ –साथ एक आलोचक भी हैं। उनके प्रमुख आलोचनात्म ग्रंथ निम्न प्रकार से हैं –

1. डॉ. अम्बेडकर और उनके समकालीन (1991)
2. बौद्ध धर्म के आधार स्तंभ (1999)
3. बुद्ध की शरणगत नारियाँ (2016)
4. बुद्ध और उनके प्रिय शिष्य (2016)
5. इक्कीसवीं सदी में दलित आंदोलन (साहित्य और समाज चिंतन) (2007)
6. दलित विमर्श : साहित्य के आईने में (2009)
7. डॉ. अम्बेडकर : दलित और बौद्ध धर्म (2009)
8. समाज संस्कृति और दलित (2015)
9. दलित साहित्य : सामजिक बदलाव की पटकथा (2016)
10. राग दरबारी का समाज शास्त्रीय अध्ययन (2018)
11. दलित साहित्य एवं : समकालीन परिदृश्य (2018)

12. दलित कविता : समकालीन परिदृश्य (2018)

संपादन –

जयप्रकाश कर्दम जी ने संपादन का भी कार्य किया है। इन्होंने 'जाति एक विमर्श :' 'धर्मांतरण और दलित' तथा 'ओमप्रकाश वाल्मीकि ' विचारक और सृजकव्यक्ति :किताबों का संपादन किया। इसी के साथ कई पत्र-पत्रिकाओं में भी संपादन का कार्य किया है। संपादक के रूप में 'दलित साहित्य वार्षिकी, 'आचार्य रामचंद्र शुक्ल साहित्य शोध संस्थान', 'वाराणसी की त्रैमासिक शोध पत्रिका 'नया मानदंड' के तीन विशेषांकों का संपादन किया – ''दलित चेतना पर केन्द्रित अंक', 'दलित साहित्य पर केन्द्रित अंक' तथा दलित आत्मकथाओं पर केन्द्रित अंक आदि संपादकीय कार्य हैं।

अनुवाद –

जयप्रकाश कर्दम जी ने वेस्टन बिग्स की पुस्तक 'दि चमार्स' का हिंदी अनुवाद 'चमार' नाम से किया है। यह पुस्तक सन् 1989 ई. में श्री पन्नीलाल 'निर्मीक' द्वारा प्राप्त हुई। इस पुस्तक में चमार जाति की दयनीय स्थिति का वर्णन किया गया है। इस पुस्तक को पढ़ने के बाद कर्दम जी को लगा कि इतनी अच्छी किताब हिंदी में अनुवाद होना चाहिए। दलित समाज के लिए यह बहुत महत्वपूर्ण किताब हैं। स्वयं डॉ. जयप्रकाश कर्दम जी इस किताब के बारे में कहते हैं कि "पुस्तक को पढ़ने से प्रथम दृष्टियाँ ही यह महत्वपूर्ण और उपयोगी लगी। दलितों के सामाजिक, धार्मिक जीवन का इतना व्यापक और तथ्यपरक अध्ययन अन्यत्र कहीं देखने को नहीं मिला था।"

बोध प्रश्न –

- 'बौद्ध धर्म के आधार स्तंभ' पुस्तक के लेखक हैं ?
- जयप्रकाश कर्दम ने किस किताब का अनुवाद किया ?

11.3.4 सम्मान एवं पुरस्कार

डॉ. जयप्रकाश कर्दम जी को मानव संसाधन विकास मंत्रालय (संस्कृति विभाग) भारत सरकार द्वारा फेलोशिप प्राप्त हुई। राष्ट्रीय अस्मितादर्शी साहित्य अकादमी उत्तर प्रदेश द्वारा उन्हें 'संत रविदास सम्मान' मिला है। 'संत कबीर' सम्मान भारतीय दलित साहित्य अकादमी, मध्यप्रदेश द्वारा प्राप्त हुआ। भारतीय दलित साहित्य अकादमी दिल्ली से 'डॉ. अम्बेडकर राष्ट्रीय सम्मान' प्रदान किया गया। उत्तर प्रदेश समाज विकास संगठन द्वारा ' डॉ. अम्बेडकर रत्न पुरस्कार' दिया गया। भारतीय बौद्ध महासभा, उत्तर प्रदेश द्वार फेलोशिप तथा भारतीय दलित अकादमी भोपाल ने 'डॉ. अम्बेडकर अस्मिता सम्मान' मिला। बहुजन अन्याय एक्शन समिति अमरावती, महाराष्ट्र ने आपको सम्मानित किया है। और 'राहुल सांकृत्यायन पुरस्कार' केन्द्रीय हिंदी संस्थान से प्रदान किया गया है।

बोध प्रश्न –

- डॉ. जयप्रकाश कर्दम जी को 'राहुल सांकृत्यायन पुरस्कार' से कौन सम्मानित किया ?

11.4 पाठ सार

दलित साहित्य में जाना पहचाना नाम डॉ. जयप्रकाश कर्दम जी का है। उन्हें दलित साहित्य का प्रमुख स्तंभ के रूप में माना जाता है। वे एक दलित परिवार से आने के वजह से अपना और समाज का दुःख दर्द को अच्छे से जाना है। वे स्वानुभूति के आधार पर लेखन किया है। जयप्रकाश कर्दम जी दलित साहित्य के पाठकों के लिए एक उर्जा के रूप हैं।

दलित साहित्य में जयप्रकाश कर्दम जी स्थान बहुत महत्वपूर्ण है। उन्होंने अपने रचनाओं के माध्यम से दलित समाज का संघर्ष को दिखाने का प्रयास किया है। उनका साहित्य के सभी विधाओं में अच्छी पकड़ हैं। अच्छे कवि और अच्छे लेखक के साथ-साथ अच्छे आलोचक भी हैं। उन्होंने तीन काव्य संग्रह की रचना कियी है, सभी में दलित चेतना और मानवीय संवेदनाओं से परिपूर्ण हैं। जयप्रकाश कर्दम जी अच्छे कहानीकार भी रहें हैं। उनका उपन्यास 'छप्पर' दलित साहित्य का प्रथम उपन्यास माना जाता है। उन्होंने अनेक आलोचक ग्रंथ की रचना की है।

डॉ. जयप्रकाश कर्दम के साहित्य को पढ़ने के बाद एक दलित समाज के उत्थान की मार्ग दिखाई देता हैं। उनके साहित्य में अम्बेडकर और बौद्ध दर्शन दिखाई पड़ता है। अम्बेडकरवाद और बुद्ध दर्शन में मानव केन्द्रित हैं। वे अम्बेडकरवाद विचारधारा से ओतप्रोत होकर दलित साहित्य की रचना करते हैं। दलित साहित्य में भी मानव केंद्र में हैं।

11.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन करने से निम्निखित निष्कर्ष उपलब्धियाँ प्राप्त हुई है।

1. दलित साहित्य में जयप्रकाश कर्दम जी महत्वपूर्ण स्थान माना जाता है।
2. डॉ. जयप्रकाश कर्दम जी का साहित्य के सभी विधाओं में अच्छी पकड़ हैं।
3. डॉ. जयप्रकाश कर्दम जी के साहित्य में दलित चेतना परिपूर्ण आती हैं। और उनके साहित्य में अम्बेडकरवाद एवं बुद्ध दर्शन का प्रभाव दिखाई देता है।
4. उनके साहित्य में जाति केंद्र में हैं जो दलितों के साथ भेदभाव एवं अन्याय किया गया है उसका कारण जाति हैं।
5. उनके साहित्य में मानव हित का संदेश देता है।

11.6 शब्द संपदा

1. दलित - जो सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक आदि रूपों से पिछड़ा हुआ हो, जिसका दलन या शोषण हुआ हो, रौंदा या कुचला हुआ, अति निर्धन या कंगाल।
2. गूंगा - मूक बधिर, बोल नहीं सकता।
3. तिनका - वह सुखी घास जिससे छप्पर आदि छाया जाता है, घासफूस, तृण
4. भोर - सूर्योदय के पूर्व की स्थिति, प्रातः काल
5. समता - समान या सैम होने का गुण, समानता, (इक्वलिटी)
6. कपोत - एक पक्षी, कबूतर, चिड़िया,

7. वसुधैव कुटुम्बकम - पूरा संसार एक है, धरती ही एक परिवार है
8. अभिनिष्क्रमण - संन्यास रूप में घर त्यागना
9. हर्षोल्लास - आनंद, प्रसन्नता, हर्ष, उल्लास
10. गमन - प्रस्थान, जाना
11. प्रवर्तन - कोई नया काम या नई बात आरंभ करना या ठानना, अविष्कार या खोज करना
12. सान्निध्य - समीप होने की अवस्था या भाव, सामीप्य, निकटता
13. मैट्रीमोनियल - विवाह संबंधी
14. भिक्षुणी - बौद्ध सन्यासिनी
15. आत्मसम्मान - स्वाभिमान, आत्माभिमान, आत्मगौरव, निजी सम्मान
16. धर्मांतरण - अपना धर्म त्यागकर दूसरे धर्म को ग्रहण करने की क्रिया

11.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

दीर्घ प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. डॉ. जयप्रकाश कर्दम जी का जीवन परिचय देते हुए उनके शिक्षा की चर्चा कीजिए।
2. डॉ. जयप्रकाश कर्दम के रचना संसार पर प्रकाश डालिए।
3. डॉ. जयप्रकाश कर्दम जी के कथा साहित्य पर प्रकाश डालिए।

खंड (ब)

लघु प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. डॉ. जयप्रकाश कर्दम के जन्म एवं पारिवारिक जीवन को समझाइए।
2. दलित साहित्य का प्रथम उपन्यास 'छप्पर' पर प्रकाश डालिए।
3. डॉ. जयप्रकाश कर्दम जी के काव्य संग्रह पर विचार कीजिए।
4. डॉ. जयप्रकाश कर्दम के कहानी संग्रह पर प्रकाश डालिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए।

1. डॉ. जयप्रकाश कर्दम जी के पत्नी का नाम हैं
   (अ) मीरा (ब) तारा
   (क) शीला (ड) सहारा
2. 'गूंगा नहीं था मैं' किस विधा की कृति हैं ?
   (अ) नाटक (ब) निबंध

(क) कविता (ड) उपन्यास

3. 'तिनका-तिनका आग' कविता संग्रह का प्रकाशन कब हुआ ?

(अ) 2004 (ब) 2005

(क) 2006 (ड) 2007

4. 'समाज संस्कृति और दलित' पुस्तक के रचनाकार हैं

(अ) ओमप्रकश वाल्मीकि (ब) मोहनदास नैमिशराय

(ब) श्यौराज सिंह बेचैन (ड) डॉ. जयप्रकाश कर्दम

5. डॉ. जयप्रकाश कर्दम जी को 'संत रविदास सम्मान' किसने प्रदान किया।

(अ) मानव संसाधन विकास मंत्रालय (ब) भारतीय दलित साहित्य अकादमी

(क) भारतीय बौद्ध महासभा (ड) राष्ट्रीय अस्मितादर्शी साहित्य अकादमी

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1. डॉ. जयप्रकाश कर्दम के पुत्र का नाम _____है।
2. राहुल खंड का प्रकाशन _____वर्ष में हुआ।
3. 'छप्पर उपन्यास का पात्र का नाम _____ है।
4. डॉ. जयप्रकाश कर्दम ने दि चमार्स पुस्तक अनुबाद _____ नाम से किया।
5. तलाश कहानी का प्रकाशन _____वर्ष है।

III. सुमेल कीजिए।

1. डॉ. अम्बेडकर और उनके समकालीन	(अ)	2018
2. बुद्ध की शरणगत नारियाँ	(ब)	1991
3. दलित विमर्श : साहित्य के आईने में	(क)	2015
4. समाज संस्कृति और दलित	(ड)	2016
5. दलित कविता : समकालीन परिदृश्य	(इ)	2009

11.8 पठनीये पुस्तकें

1. दलित साहित्य के स्तंभ : डॉ. राजपाल सिंह 'राज'
2. गूंगा नहीं था मैं : डॉ. जयप्रकाश कर्दम
3. तिनका –तिनका आग : डॉ. जयप्रकाश कर्दम
4. बस्तियों के बाहर : डॉ. जयप्रकाश कर्दम
5. छप्पर : डॉ. जयप्रकाश कर्दम
6. तलाश : डॉ. जयप्रकाश कर्दम

12. नो बार : आलोचना

इकाई की रूपरेखा

12.1 प्रस्तावना
12.2 उद्देश्य
12.3 मूल पाठ : नो बार : आलोचना
12.3.1 डॉ. जयप्रकाश कर्दम का कहानी लेखन
12.3.2 नो बार कहानी का संक्षिप्त कथा
12.3.3 नो बार कहानी के प्रमुख पात्रों का चरित्र-चित्रण
12.3.4 नो बार कहानी के पात्र संवाद
12.3.5 नो बार कहानी की आलोचना
12.3.6 नो बार कहानी का उद्देश्य और जीवन दर्शन
12.4 पाठ सार
12.5 पाठ की उपलब्धियाँ
12.6 शब्द सम्पदा
12.7 परीक्षार्थ प्रश्न
12.8 पठनीय पुस्तकें

4.1 प्रस्तावना

दलित साहित्य में प्रमुख स्तंभ माने जाने वाले दलित लेखक डॉ. जयप्रकाश कर्दम जी का है। भारतीय समाज में भिन्नता दिखाई देती है। दलितों के साथ ऊँच-नीच, भेदभाव का व्यवहार किया जाता रहा। कर्दम जी के कहानियों में दलित समाज का वर्णन किया गया है। डॉ। जयप्रकाश कर्दम के दो कहानी संग्रह हैं – प्रथम कहानी संग्रह 'तलाश' (2005) और दूसरा 'खरोंच'(2018) है। तलाश कहानी संग्रह में कुल तेरह कहानियाँ हैं और खरोंच कहानी में कुल बारह कहानियाँ संग्रहित हैं। इन दो कहानी संग्रह में जातिभेद, ऊँच-नीच, सामाजिक कुप्रथाओं का खंडन, दलित चेतना को दर्शाया गया है। डॉ. जयप्रकाश कर्दम की प्रसिद्ध कहानी 'नो बार' में जातिभेद का वर्णन किया गया है। वर्णव्यवस्था के उच्च या सवर्णों में नो बार का मतलब सिर्फ सवर्ण है न कि निम्न या दलित नहीं।

12.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप –

1. भारतीय समाज में जातिभेद की स्थिति को जानेगें.
2. दलित समाज के साथ सवर्णों का भेदभाव को समझेंगे.
3. जयप्रकाश कर्दम के कहानीकार के विचार को समझेंगे।
4. नो बार कहानी के माध्यम से जातिप्रथा को समझेंगे।

12.3 मूल पाठ : नो बार : आलोचना

12.3.1 डॉ. जयप्रकाश कर्दम का कहानी लेखन

दलित साहित्य में जयप्रकाश कर्दम जी स्थान बहुत महत्वपूर्ण है। उन्होंने अपने रचनाओं के माध्यम से दलित समाज का संघर्ष को दिखाने का प्रयास किया है। उनका साहित्य के सभी विधाओं में अच्छी पकड़ हैं। अच्छे कवि और अच्छे लेखक के साथ-साथ अच्छे आलोचक भी हैं। डॉ. कर्दम जी की कहानियों का विषय लगभग जाति आधारित दलित समाज का यथार्थ चित्रण को प्रस्तुत किया गया है। इनके कहानियों में अपने और समाज के अनुभव को अभिव्यक्त किया गया है। डॉ. जयप्रकाश कर्दम के कहानियों में आक्रोश, विद्रोह, अन्याय, अत्याचार का प्रतिरोध दिखाई देता है। दलित चेतना को समाहित करते हुए कहानियाँ लिखी गई है। इनके कहानियों में अम्बेडकरवादी विचारधारा के माध्यम से पूरे दलित समाज में चेतना जागृत करने का प्रयास किया गया है। इनके सभी कहानियों में अस्मिता के प्रति स्वाभिमान और संघर्ष के साथ समाज परिवर्तन का संदेश देती है। डॉ. एन. सिंह कहते हैं कि "हिंदी के अन्य दलित कथाकारों की कहानियों में और जयप्रकाश कर्दम की कहानियों में जो अंतर है, वह यह कि अन्य कथाकारों की कहानियों के दलित पात्र उत्पीड़न का शिकार तो हैं, लेकिन वे प्रतिकार नहीं कर पाते। उनकी बेबसी, हताशा और असहायता का चित्रण ही दलित कथाकारों ने किया है।"

'तलाश' कहानी संग्रह का प्रकाशन सन् 2005 ई. में हुआ। इसमें कुल 12 कहानियाँ है- तलाश, सांग, नो बार, मोहरे, बिट्टन मर गई, मूवमेंट, लाठी, जरुरत, जहर, कामरेड का घर, गंवार और शीत लहर आदि हैं। लगभग इस संग्रह के सभी कहानियों में जाति केंद्र में दिखाई देती हैं। जाति के साथ-साथ शोषण, अत्याचार, स्त्री चेतना, दलित चेतना, सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और शैक्षणिक आयम भी देखने को मिलते हैं। इस संग्रह की 'नो बार' कहानी में सवर्ण परिवार द्वारा जातिभेद का लक्षण दिखाई देता है। इसमें सवर्ण समाज का परिवार अपनी लड़की के अंतर्जातीय विवाह के लिए मैट्रीमोनियल में 'नो बार' कहकर वर (दूल्हा) के लिए विज्ञापन देते हैं। यह विज्ञापन देखकर जब दलित लड़का उस लड़की के घर जाता है, दोनों एक दूसरों को पसंद भी करते हैं। जब लडके की जाति के बारे में लड़की के पिता को पता चलता है तो तब वह कहता है – "वह सब तो ठीक है कि हम जाति-पांति को नहीं मानते और हमने मैट्रीमोनियल में 'नो बार' छपवाया था। लेकिन फिर भी कुछ चीजें तो देखनी ही होती है। आखिर नो बार का यह मतलब तो नहीं कि किसी चमार-चूहड़े के साथ।।.." सवर्ण और दलित दोनों भी आखिरकार मनुष्य ही है फिर भी इन दोनों में जाति के आधार पर अलग अलग हैं। उच्च नीच का भाव है। सवर्ण खुद को उच्च मानता है और दलितों को नीच मानता है।

डॉ. जयप्रकाश कर्दम के कहानी के पात्र अन्याय के प्रति लड़ते हैं 'तलाश' कहानी का नायक रामबीर सिंह जो बिक्रीकर अधिकारी है। जब उसका मकान मालिक गुप्ता जी ने जाति के कारण रामबती चुहड़ी से खाना बनवाना मना करता है तो तब रामवीर सिंह कहता है। "यदि यह बात हैं, तो मैं आपका मकान खाली करने को तैयार हूँ, लेकिन जातिगत भेदभाव के आधार पर मैं रामबती से खाना बनवाना बंद नहीं करूँगा।"

डॉ. जयप्रकाश कर्दम के बारे में हिंदी कथाकार कमलेश्वर कहते हैं – "कथा लेखन की यह एक बड़ी विशेषता है कि न तो वे सवर्ण को कोसते हैं और न अपनी जातिगत हीनभावना को धिक्कारते हैं। वे सजग रचनाकार की तरह अपने अनुभव, अंतर्द्वंद और आत्मगत संघर्ष को व्यक्त भर करते हैं।"

बोध प्रश्न-

- जयप्रकाश कर्दम के बारे में एन. सिंह का कथन क्या है ?
- कथाकार कमलेश्वर का जयप्रकाश कर्दम के प्रति क्या विचार है ?

12.3.2 'नो बार' कहानी का संक्षिप्त कथा

नो बार कहानी का शीर्षक अंग्रेजी में रखा गया क्योंकि इसी कहानी में शिक्षित समाज से संबंधित है। इसमें शिक्षित सवर्ण समाज का एक परिवार अपने बेटी का अंतर्जातीय विवाह के लिए मैट्रीमोनियल में विज्ञापन जारी करता है। उसमें लिखा है "वान्टेड सूटेबल ग्रूम फॉर एम. ए, 24 इयर्स, 158 सेंटीमीटर, स्लिम, शार्प फीचर्ड, ब्यूटीफुल गर्ल, एक्सपर्ट इन हाउस होल्ड, हाइली एजुकेटेड प्रोग्रेसिव फेमिली, नो बार।" यह विज्ञापन देखकर दलित लड़का राजेश आई. आर. एस अधिकारी ने मैट्रीमोनियल को लेटर भेज देता है। उसके लेटर को स्वीकृति मिलती है तब जाकर लड़की के घर वालों ने अपने घर राजेश को आमंत्रित करते हैं।

राजेश शरीर से स्वस्थ, सुन्दर और आकर्षक लड़का था। वह मिडिल क्लास फॅमिली की लड़की के साथ विवाह हेतु वह उपयुक्त था। राजेश लड़की वालों के घर जाता है तब राजेश लड़की को देखता है तो जैसा विज्ञापन में दिया था उसी तरह से लड़की थी। सबसे पहले राजेश और लड़की के पिताजी से बातचीत होती है तो उसमें लड़की के पिताजी कहते हैं "देखिए राजेश जी, हम बड़े खुले विचारों के आदमी हैं। जाति-पांति, धर्म-संप्रदाय किसी प्रकार के बंधन को हम नहीं मानते। ये सब पिछड़ेपन का प्रतीक हैं।" राजेश और अनिता को एक साथ बात करने के लिए और अपने-अपने खुलापण को निर्माण करने के लिए कहा जाता है। अनिता और राजेश बहुत घुमते हैं और दोनों एक दूसरे को पसंद करते हैं।

एक दिन राजेश और अनिता के पिताजी से बात करते समय राजनीतिक विषय पर चर्चा करते समय जब बीजेपी और बसपा का जिक्र होता है तब राजेश ने मायावती का ही गुण गान कर रहा था तभी अनिता के पिता को लगा कि यह लड़का कहीं दलित तो नहीं है। तुरंत अनिता से पूछते है कि लड़का कौन जात का है ? अनिता कहती है कि हमने तो जाति का उल्लेख विज्ञापन में तो नहीं किया फिर आप ऐसे क्यों पूछ रहे हो। अनीता के पिताजी कहते हैं कि हम अंतर्जातीय विवाह के लिए नो बार तो दिए हैं। लेकिन बेटी की शादी के लिए जो विज्ञापन दिया है वह ऐसा नहीं की किसी दलित लड़के के साथ शादी करें। इसलिए वह लड़की को पूछता है तो कहती है बेटी नो बार का मतलब किसी दलित, चूहड़े के साथ शादी करना नहीं है। प्रोग्रेसिव विचारधारा का व्यक्ति जाति को न मानने वाला व्यक्ति आज दलित लड़के के साथ अपने बेटी की शादी नहीं करता। बेटी से कहता है कि बेटी राजेश की जाति पूछ लिया क्या वह तो दलित लग रहा है उनसे आपकी शादी नहीं होगी क्योंकि वह दलित लड़का है। तब लड़की कहती है कि

हमने तो जाति उल्लेख नहीं किया ना तब अनीता के पिताजी कहते हैं कि बेटा नो बार का मतलब तो यह नहीं की किसी दलित चमार के साथ विवाह कर दे।

बोध प्रश्न-

- प्रोगेसिव परिवार किस का था ?
- राजेश किस समाज से संबंधित है ?

12.3.3 नो बार कहानी के प्रमुख पात्रों का चरित्र-चित्रण

इस कहानी में प्रमुख पात्र दो हैं दलित लड़का राजेश और सवर्ण लड़की अनिता इसी के साथ-साथ गौण पात्र अनिता जी पिताजी और राजेश के पिताजी हैं। निम्नलिखित इनका चरित्र-चित्रण किया गया है।

1. राजेश -

इस कहानी का मुख्य पात्र राजेश अविवाहित है। राजेश एक दलित परिवार से पढ़ा लिखा युवक है। और वह आई. आर. एस अधिकारी हैं। वह भी शादी के लिए लड़की की तलाश कर रहा था। इसलिए वह समाचार पत्र का मैट्रीमोनियल कालम देखता रहता था। एक दिन उसे मैट्रिमोनियल से लेटर आता है कि आप का पत्र स्वीकृत है। जब सवर्णों की लड़की अनिता थी अच्छे शिक्षित घर की थी। शिक्षित, सुंदर और स्मार्ट लड़की चाहता था यह लड़की उसके एकदम अनुकूल थी। राजेश भी शरीर से स्वास्थ्य, सुंदर और आकर्षक था और एम। एस-सी पास एक आई आर एस अधिकारी था।

2. अनिता

अनिता सवर्ण लड़की है जिसके शादी के लिए मैट्रीमोनियल में नो बार कहकर समाचार पत्र में विज्ञापन दिया गया है। हैं राजेश और अनिता दोनों एक दूसरें को पसंद करते और शादी के बाद हानीमुन जाने का योजना बनाते हैं लेकिन उनकी जाति के कारण उनकी शादी नहीं हो सकती है।

3. पिताजी

यह सवर्ण लड़की के पिताजी हैं। अपनी लड़की की शादी के लिए नो बार कहकर मैट्रीमोनियल में विज्ञापन देता है। पिताजी का कहना था कि नो बार अर्थात सिर्फ सवर्ण जातियाँ थी न कि दलित या शूद्र वर्ण की जातियों(चूहड़, महार, माँग और चमार) से नहीं। इसलिए राजेश की जाति का पता चलने पर शादी का प्रस्ताव रद्द करता है।

बोध प्रश्न-

- नो बार कहानी में गौण पात्र कौनसे हैं ?
- नो बार कहानी के प्रमुख पात्र कौनसे हैं ?

12.3.4 नो बार कहानी में सवांद

नो बार कहानी का संवाद निम्नप्रकार से हैं –

- राजेश को समझाते हुए उसके पिताजी कहते हैं कि "बेटा, मैं अनपढ़ गंवार आदमी हूँ, ज्यादा नहीं जानता। तुम जिन लोगों की बात कर रहे हो उनके बारे में मैं कुछ नहीं कह

सकता पर दुनियादारी को जो थोडा बहोत मैंने देखा है उसके आधार पर मेरा सुझाव है कि वे ना पूछें तब भी तुम्हें अपने और से उनको अपने जात बता देनी चाहिए।"

- राजेश ने लड़की के पिताजी से राजनीतिक बातचीत में कहता है "नहीं, ऐसा तो नहीं है कि कांशीराम और मायावती जातिवाद को भड़का रहे हैं। जातिवाद तो समाज में पहले से रहा है। हर चुनाव में उम्मीदवारों के चयन से लेकर मंत्रिमंडल के गठन तक सब जगह जाति का फेक्टर काम करता रहा है। हाँ, कांशीराम, मायावती या दूसरे नेताओं के आने से इतना अंतर अवश्य आया है कि पहले दलितों की अपने पार्टी नहीं होती थी और उनका वोट कांग्रेस या दूसरी पार्टियों को जाता था। लेकिन आज उनकी अपनी पार्टी है और वे अपनी पार्टी को वोट दे रहे हैं।"
- अनीता से पिताजी राजेश के जाति के बारे पूछते हैं तब अनीता कहती है "पर क्यों पापा, जब हम जाति-पांति को मानते ही नहीं तो फिर वह किसी भी कास्ट का हो उससे क्या फर्क पड़ता है।"
- अनीता के पिताजी राजेश के साथ राजनीतिक बातचीत करते समय कहते हैं "सब कुछ अच्छा ख़ासा चल रहा था। समाज प्रोग्रेसिव हो रहा था। जातिवाद अपनी मौत मारा रहा था। लेकिन वी. पी. सिंह के बच्चे ने मसीहा बनाने के चक्कर में मंडल कमीशन लागू कर जातिवाद को फिर से जिन्दा कर दिया। कोई द्सेश की बात नहीं करता, सब अगड़े-पिछड़ों की बात करते हैं। लालू और मुलायम की तो फिर भी गनीमत है। कांशीराम और मायावती को देखो। ये तो बिना जाति के बात ही नहीं करते। वी. पी. सिंह ने आग लगाईं ये आग में घी डालकर उसे भड़का रहे हैं।" और आगे अपने बेटी से राजेश की जाति के बारे में पूछते हैं तो लड़की जाति से हमें क्या लेना देना हम तो नो बार कहकर विज्ञापन दिया है। तब पिताजी कहते हैं "वह सब तो ठीक है कि हम जाति-पांति को नहीं मानते और हमने मैट्रीमोनियल में 'नो बार' छपवाया था। लेकिन, फिर भी कुछ चींजे तो देखनी ही होती हैं। आखिर 'नो बार' का यह मतलब तो नहीं कि किसी चमार-चूहड़े के साथ...."

बोध प्रश्न-

- राजेश के पिताजी क्या कहते हैं ?

12.3.5 'नो बार' काहनी की आलोचना

भारतीय समाज हिन्दू धर्म के अनुसार चार वर्णव्यवस्था में बंटा है। ब्राह्मण, क्षेत्रीय, वैश्य और शूद्र, शूद्र समाज निम्न और हीन माना जाता है। अंतिम या पंचम वर्ण अछूतों को माना जाता है जिसे दलित, बहिष्कृत, निम्न, अस्पृश्य, अंतिम वर्ण या पंचम वर्ण कहा जाता है। दलित हिन्दू धर्म की वर्णव्यवस्था से बाहर का समाज कहा जाता है। उन्हें गाँव के बाहर रखा गया था। उन्हें गाँवों में सवर्ण लोग उनकी परछाई से भी परहेज करते हैं। दलितों में शिक्षा का अभाव था। स्वतंत्र भारत में दलितों के लिए डॉ. भीमराव रामजी अम्बेडकर 'बाबासाहेब' ने शिक्षा का प्रावधान में संविधान में दिया है। इसलिए आज दलित लोग शिक्षित बन रहे हैं।

दलित लेखक अपनी अनुभूति व्यक्त कर रहें हैं उन्हीं में से एक डॉ. जयप्रकाश कर्दम जी भी हैं। इनकी एक प्रसिद्ध कहानी 'नो बार' हैं। जिसमें सवर्ण लड़की अनिता की शादी के लिए

मैट्रीमोनियल में नो बार कहकर विज्ञापन देते हैं। नो बार का मतलब है किसी भी जाति का वर(दूल्हा) हो। यानी दूल्हा की जाति नहीं देखी जाती है। यह विज्ञापन आई आर एस अधिकारी राजेश नामक युवक ने देखकर शादी के लिए लड़की के घर पत्र भेजता है। लड़की वालों ने भी राजेश का पत्र स्वीकार किया जाता है। राजेश को लड़की के घर से आमंत्रण आता है। राजेश और अनिता को एक दूसरों के बारे में जानने के लिए दोनों को एक साथ छोड़ देते हैं। दोनों एक दूसरे को अच्छी तरह से जान जाते हैं। दोनों एक दूसरे को पसंद करते हैं और शादी के लिए घर बताते हैं। जब राजेश और अनिता के पिता आपस में बातचीत में राजनीतिक से संबंधित चर्चा करते हैं तब अनिता के पिताजी को संशय आता है कि यह लड़का दलित तो नहीं है। वह अपनी बेटी अनिता से लड़के की जाति के बारे में पूछता है तो उसे नहीं पता और वह कभी पूछी भी नहीं। राजेश और अनिता के बीच कभी जाति का विषय नहीं आया है। अनिता के पिताजी को जब लड़का दलित है यह पता चलने पर अपनी बेटी की शादी करने से मना कर देता है।

अनिता का परिवार एक सुशिक्षित, प्रोग्रेसिव हैं उनकी दृष्टि में नो बार का मतलब सवर्ण की कौनसी भी जाति के साथ। लेकिन दलित के साथ नहीं। राजेश का परिवार अनपढ़ था, राजेश जैसा चाहता है वैसा ही माता-पिता मानते हैं। अनिता के पिताजी को मैट्रीमोनियल में ऐसा विज्ञापन नहीं छपवाना था कि नो बार। नो बार की वजह से राजेश ने अपनी जाति के बारे में कोई जिक्र करना उचित नहीं समझा। राजेश के पिताजी कहते है सबसे पहले अपनी जाति बता दे बेटा। लेकिन राजेश को लगा नो बार कहने वाला प्रोग्रेसिव परिवार में मैं क्यों जाति उल्लेख करूँ यह सोचकर राकेश अपनी जाति नहीं बताया। लेकिन अंततः अनिता के पिताजी को बातों बातों में राजेश की जाति पर संशय आता है। इसलिए अपनी बेटी अनिता से राजेश के जाति के बारे में पूछता है तो वह कह देती है कि मैंने उनसे कभी जाति नहीं पूछी। हम तो विज्ञापन में 'नो बार' कह कर दिया था ना पापा इसलिए मैं राजेश को कभी जाति के बारे में पूछा नहीं। तब अनिता के पिताजी कहते हैं कि "वह सब तो ठीक है कि हम जाति-पांति को नहीं मानते और हमने मैट्रीमोनियल में 'नो बार' छपवाया था। लेकिन, फिर भी कुछ चीजें तो देखनी ही होती हैं। आखिर नो बार का यह मतलब तो नहीं कि किसी चमार-चूहड़े के साथ..."

भारत स्वतंत्र होकर पच्चाहतर साल हो रहा है. लेकिन भारतीय समाज की जाति व्यवस्था में कभी सुधार नहीं आया। जाति के कारण ऊँच-नीच का भेदभाव अभी भी दिखाई देता है। जाति के आधार पर ही दलितों का शोषण किया जा रहा है। नो बार कहानी में भी यही दिखाया गया कि जाति अभी भी जीवित है। कमलेश्वर कहते हैं "जाति समाज का ऐसा मकडजाल है, जिससे निकल पाना असंभव नहीं तो मुश्किल जरूर है। इसमें घर-परिवार की अंतर्रात्मा जकड़ी हुई नजर आती है। 'नो बार' कहानी तो प्रगतिशील मानसिकता वाले लोगों के प्रति एक व्यंग्य भी है, जो जाति बंधन नहीं का विज्ञापन देकर अपनी बेटियों की शादी का प्रस्ताव सामने रख देते हैं, मगर जातीयता के वोध से निकल नहीं पाते।"

टेकसिंह अपने 'समकालीन दलित कहानी : कुछ वैचारिक' लेख में कहते हैं कि "यह कहानी सवर्णों की छद्म प्रगतिशील तबका मानसिक रोगी है। क्योंकि जब तक राजेश की जाति नहीं पता थी सब उस पर प्यार लुटा रहे थे लेकिन जाती का पता होती ही लड़की के पिता का

दिमाग फिर गया। ध्यान देने की बात यह है कि अनिता वहीं कड़ी रह गई थी। क्योंकि बाप (परिवार व समाज) द्वारा लगाईं गई जाति की बार को वह भी पार नहीं कर सकती। या संभवतः पार करना नहीं चाहती। इतने दिनों की मुलाकातों में अनिता की राजेश से प्यार जैसा ही चला था। कहते हैं कि प्यार अंधा होता है, पर लगता है कि तमाम अंधेपन के बावजूद प्यार जाति तो देख ही लेता होगा। यह कहानी से प्रमाणित होता है।"

बोध प्रश्न-

- 'नो बार' कहानी के बारे में कथाकार कमलेश्वर का क्या कथन हैं ?
- राजेश कौनसा अधिकारी हैं ?

12.3.6 'नो बार' कहानी का उद्देश्य और जीवन दर्शन

'नो बार' कहानी का मुख्य उद्देश्य भारतीय समाज में जातिभेद को प्रस्तुत करना था। जातिवाद को मिठाने के लिए नो बार का विज्ञापन दिया जाता है। इस कहानी के माध्यम से डॉ। जयप्रकाश कर्दम जी ने सवर्ण परिवार की मानसिकता को दिखाया है। 'नो बार' कहानी में अम्बेडकरवादी विचारधारा हैं। दलित लड़का आई आर एस अधिकारी होने पर भी उसके जातिभेद किया गया है। दलित अंतर्जातीय विवाह को प्रोत्साहन देते रहें हैं।

12.4 पाठ सार

दलित साहित्य में डॉ. जयप्रकाश कर्दम जी का नाम प्रसिद्ध है। उनका उपन्यास 'छप्पर' को दलित कथा साहित्य में प्रथम माना जाता है। उन्होंने अपने जीवन के अनुभवों पर लेखन कार्य किया है। दलित साहित्य के सभी विधाओं में हस्तक्षेप किये हैं। डॉ. जयप्रकाश कर्दम ने कहानी लेखन का कार्य भी बहुत अच्छा किया है। उनके दो कहानी संग्रह हैं तलाश और खरोंच। 'नो बार' कहानी 'तलाश' कहानी संग्रह में सम्मेलित है। इस कहानी में सवर्ण प्रगतिशील परिवार की कहानी है जिसमें यह परिवार अपने बेटी की शादी के लिए मैट्रीमोनियल में हाईली एजुकेटेड, नो बार कहकर विज्ञापन देते हैं। यह विज्ञापन दलित युवक (आई आर एस अधिकारी) ने देखकर लड़की के घरवालों को पत्र लिखता है। उसके पत्र को लड़कीवालों ने स्वीकृति देते हैं। इस कहानी में अनिता सवर्ण लड़की हैं और राजेश दलित लड़का हैं। लड़की के परिवार वालों ने दोनों को एक दूसरों के बारे में जानने के लिए साथ में रहने की अनुमति देते हैं। कई दिन दोनों साथ में रहकर एक दूसरों को जानते हैं और अपने शादी की बात करने लगते हैं तो अनिता के पिताजी को राजेश से बातचीत करने पर शंका निर्माण होती है तब अपने बेटी से पूछता है कि लड़के की जाति पूछ ली क्या ? तब लड़की कहती है पापा हमें तो नो बार कहकर विज्ञापन दिया था ना तब अनीता के पिताजी कहते हैं "वह सब तो ठीक है कि हम जाति-पांति को नहीं मानते और हमने मैट्रीमोनियल में 'नो बार' छपवाया था। लेकिन, फिर भी कुछ चीजें तो देखनी ही होती हैं। आखिर नो बार का यह मतलब तो नहीं कि किसी चमार-चूहड़े के साथ..." सवर्ण प्रगतिशील परिवार का 'नो बार' का मतलब सिर्फ सवर्णों में आने वाली जातियाँ हैं।

12.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई का अध्ययन करने से कुछ उपलब्धियाँ निम्न प्रकार से प्राप्त हुई है –

- भारतीय समाज में जातिभेद की कुप्रथा का ज्ञान हुआ.
- सवर्ण जातियाँ दलितों के प्रति किसी प्रकार का संबंध नहीं रखना चाहते हैं।
- सवर्ण प्रगतिशील परिवार पर व्यंग्य है।
- नो बार का मतलब सवर्णों की दृष्टि से किसी दलित जातियों के लिए नहीं सिर्फ सवर्ण जातियों के लिए हैं।

12.6 शब्द संपदा

1. चेतना - ज्ञान, बुद्धि, होश में आना, सावधान होना
2. विद्रोह - क्रांति, बगावत, खिलाफ़त
3. अत्याचार - जुल्म, दूराचार, अन्याय
4. शोषण - कर्मचारियों-श्रमिकों पर होने वाला शारीरिक अत्याचार, किसी व्यक्ति पर अत्याचार करना
5. अम्बेडकरवाद - अम्बेडकर का जीवन दर्शन, अम्बेडकर की विचारधारा
6. आकर्षक - रोचक, सुंदर, जिसमें आकर्षक हो
7. एजुकेटेड - शिक्षित
8. अंतर्राजातीय विवाह - अपनी जाति छोड़कर अन्य किसी भी जाति में विवाह करना
9. प्रोग्रेसिव - प्रगतिशील
10. मकड़जाल - साजिश, षड्यंत्र, मकड़ी द्वारा बनाया गया जाला
11. सवर्ण - हिन्दुओं में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तीनों जातियों के लोगों की सामूहिक संज्ञा .
12. अनपढ़ - अशिक्षित
13. दूल्हा - विवाह के लिए एसज हुआ युवक, वर

12.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. डॉ. जयप्रकाश कर्दम 'नो बार' कहानी का सारांश लिखिए।
2. 'नो बार' कहानी का संदेश क्या है ?
3. 'नो बार' कहानी की आलोचना कीजिए।
4. डॉ. जयप्रकाश कर्दम जी के कहानी साहित्य पर प्रकाश डालिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. 'नो बार' कहानी के पत्रों का चरित्र-चित्रण कीजिए।
2. 'नो बार' कहानी में व्यंग्य को समझाइए।
3. नो बार कहानी की प्रासंगिता पर प्रकाश डालिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए।

1. नो बार कहानी का मुख्य पात्र कौन हैं ?

(अ) राकेश (ब) राजेश

(क) शीला (ड) रमेश

2. 'नो बार' कहानी किस संग्रह में संग्रहित हैं ?

(अ) खरोंच (ब) संघर्ष

(क) तलाश (ड) सलाम

3. 'तलाश' कहानी संग्रह का प्रकाशन कब हुआ ?

(अ) 2004 (ब) 2005

(क) 2006 (ड) 2007

4. 'नो बार' कहानी के कहानीकार कौन है ?

(अ) ओमप्रकश वाल्मीकि (ब) मोहनदास नैमिशराय

(ब) श्यौराज सिंह बेचैन (ड) डॉ. जयप्रकाश कर्दम

5. डॉ. जयप्रकाश कर्दम जी की कहानी कौनसी है ?

(अ) सांग (ब) मोहरे

(क) आपना गाँव (ड) सभी

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1. डॉ. जयप्रकाश कर्दम के पुत्र का नाम _____है।
2. तलाश कहानी संग्रह का प्रकाशन _____वर्ष में हुआ।
3. 'नो बार' कहानी का पात्र का नाम _____ है।
4. 'नो बार' का मतलब _____ है।
5. 'नो बार' कहानी किस संग्रह में _____ है।

III. सुमेल कीजिए।

1. तलाश (कहानी संग्रह)	(अ)	अनिता के पिताजी
2. राजेश	(ब)	2005
3. खरोंच (कहानी संग्रह)	(क)	राजेश

4. आई. आर. एस अधिकारी	(ड)	नो बार
5. सवर्ण पिता	(इ)	2018

12.8 पठनीय पुस्तकें

1. तलाश (कहानी संग्रह) : डॉ. जयप्रकाश कर्दम
2. दलित साहित्य के स्तंभ : डॉ. राजपाल सिंह 'राज'

13 सुशीला टाकभौरे : एक परिचय

इकाई की रुपरेखा

13.1 प्रस्तावना

13.2 उद्देश्य

13.3 मूल पाठ – सुशीला टाकभौरे : एक परिचय

13.3.1 जन्म एवं पारिवारिक जीवन

13.3.2 शिक्षा – दीक्षा

13.3.3 रचना संसार

13.3.4 सम्मान एवं पुरस्कार

13.4 पाठ सार

13.5 पाठ की उपलब्धियाँ

13.6 शब्द संपदा

13.7 परीक्षार्थ प्रश्न

13.8 पठनीय पुस्तकें

13.1 प्रस्तावना

साहित्यकार समाज में रहकर ही साहित्य सृजन करता है। यदि कोई पाठक रचना पढ़ता है तो उसके मन मस्तिष्क में सबसे पहले यही सवाल आता है कि यह रचना किस साहित्यकार द्वारा रचित है। वह उस साहित्यकार के विषय में जानने का इच्छुक हो उठता है। क्योंकि पाठक तथा लेखक का अन्तः संबंध होता है। वह लेखक के प्रत्येक घटना को उसके व्यक्तित्व के साथ जोड़कर देखता है। इसलिए यदि पाठक किसी भी साहित्यकार या लेखक की कोई भी रचना पढ़ता है तो वह लेखक या साहित्याकर के जीवन या उनके द्वारा लिखी गई पुस्तकों के बारे में जानकारी प्राप्त करना चाहता है। तभी वह उस लेखक के द्वारा लिखी गई रचना को मन से ग्रहण कर पाता है। देखा जाए तो पिछले दो तीन दशकों से हिंदी साहित्य में जो आन्दोलन जोर पकड़कर समाज को झकझोर देने का काम कर रहा है। वह सिर्फ दलित साहित्य है। इस साहित्य में दलित लेखकों ने अपना भरपूर योगदान दिया है, और दे भी रहे हैं। ये लेखक चाहे स्त्री हो या पुरुष, अपने लेखन द्वारा समाज को जागृत कर रहे हैं। दलित रचना कारों में यदि हम बात करें तो कौशल्या बैसंत्री, कावेरी, कमल, रजनी तिलक, तथा सुशीला टाकभौरे का स्थान बहुत महत्वपूर्ण है। सुशीला टाकभौरे आज दलित साहित्य में एक सशक्त रचनाकार है। वह दलित तथा गैर दलित दोनों प्रकार के पाठकों द्वारा पढ़ी जाती है। सुशीला टाकभौरे जी केवल एक

विधा को लेकर लिखने वाली नहीं बल्कि उनकी लेखनी हर प्रकार की विधाओं में निपुण है। वह कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक, आत्मकथा एवं आलोचना जैसी विधाओं में दलित एवं नारी विषय को लेकर गूढ़ लिखने वाली सुप्रसिद्ध लेखिका है। इस अध्याय से हम सुशीला टाकभौरे के बारे में विस्तृत से जानेंगे।

13.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप –

- दलित लेखिका डॉ. सुशीला टाकभौरे के जन्म एवं परिवार के बारे में जानेंगे।
- सुशीला टाकभौरे की शिक्षा के बारे में जानेंगे।
- सुशीला टाकभौरे के कृतित्व के बारे में जानेंगे।
- सुशीला टाकभौरे के मान – सम्मान के बारे में जानेंगे।

13.3 मूल पाठ - सुशीला टाकभौरे : एक परिचय

दलित साहित्य की महत्वपूर्ण हस्ताक्षर सुशीला टाकभौरे का जीवन और साहित्य बाबा साहब भीमराव रामजी अम्बेडकर के जीवन दर्शन से उनके गहरे लगाव और प्रभाव का परिणाम है, जिन्होंने शिक्षित बनो, संगठित रहो और संघर्ष करो का महान संदेश दलित समाज के उत्थान के लिए दिया था। हिंदी दलित साहित्य की स्थापना के लिए रचनात्मक संघर्ष सुशीला टाकभौरे जी ने किया है। उसका दूसरा उदाहरण मिलना बहुत ही कठिन है। जब उन्होंने अपनी आत्म कथा शिकंजे का दर्द लिखा तो दलित स्त्रियों तथा अछूत जीवन की घनीभूत पीड़ा के अनेक चित्र को हमारे सामने प्रस्तुत किया है। आज दलित समाज की मानसिकता तथा मानवीय संवेदनाओं को जगाने का कार्य उनका साहित्य करता है। उनका लेखन सहज, सरल और सीधे शब्दों में अपनी बात कहता है। उनके पात्र दलित और स्त्रियों के हक़- अधिकार की मांग करते है। अन्याय और अत्याचार का विरोध करते है। जाति व्यवस्था और पितृ सत्ता का खात्मा चाहते है। अंतरजातीय विवाहों का समर्थन करते है। इनकी विधाओं के पात्र समता, समानता, स्वतंत्रता, न्याय और बन्दुत्व के पक्षधर होते दिखाई देते है।

13.3.1 जन्म एवं पारिवारिक जीवन -

सुशीला टाकभौरे का जन्म 4 मार्च 1954 को मध्य प्रदेश के जिला होशंगाबाद के, तहसील सिवनी मालवा के एक छोटा से गाँव बानापुरा में हुआ। उनकी माता जी के अनुसार उनकी सही जन्म तिथि 1954 ई। के आषाढ़ माह की शुक्ल पक्ष की नवमी है। स्कूल में नाम लिखवाते समय के अनुसार उनका नाम कुछ दूसरा बताया गया था। मगर उनके पिताजी को सुशीला नाम पसंद था। अतः सुशीला नाम रखा गया। घर में सभी लोग प्यार से उन्हें शीला कहते थे। उनकी माता जी का नाम श्रीमती पन्ना घावंरी और पिताजी का नाम श्री राम प्रसाद घावंरी है। पिताजी तीसरी कक्षा तक पढ़े थे। उन्हें हिंदी का अक्षर भाषा ज्ञान था। वे थोडा जोड़-

घटाना करके हिसाब भी कर लेते थे। उनकी माता जी अशिक्षित थी। वे कभी स्कूल नहीं गयी, फिर भी सभी बच्चों की पढाई के प्रति वे हमेशा सचेत रहती। उनकी प्रेरणा से सभी बच्चे आगे पढ़ते रहे। बच्चों को स्कूल भेजने के पहले पिताजी अक्षर ज्ञान करवाते थे। सुशीला जी की माता जी अपनी माँ की एक मात्र जीवित संतानो में से एक थी। विवाह के बाद वे अपनी ससुराल नेमावर (निमाडी) गाँव में रही। पिताजी का पैतृक गाँव हरदा से आगे नेमावर गाँव है। तब नर्मदा नदी पर वहां पुल न होने के कारण, नाव में बैठकर हरदा से नेमावर जाते थे। नेमावर गाव में प्रति वर्ष नर्मदा की बाढ़ का प्रकोप गाँव वालों पर होता था। किसी वर्ष कम हानि होती तो किसी वर्ष पूरा गाँव ही बाढ़ की चपेट में आ जाता था। इससे नर्मदा के किनारे रहने वाले ग्राम वासियों के घर मकान उजड़ जाते थे। जिन्हने फिर से बनाने सुधारने में काफी समय और धन लग जाता था। प्रतिवर्ष के आर्थिक नुकसान और जीवन की अस्त-व्यस्तता को देखते हुए, सुशीला जी के पिता रामप्रसाद जी पत्नी पन्ना बाई को साथ लेकर ससुराल बाना पूरा में आ गए। यहाँ उन्हें रेलवे में नौकरी मिल गई। इस तरह श्रीमती पन्ना घावंरी पति और बच्चों के साथ अपनी माता के पड़ोस में अलग घर में रहने लगी थी।

नानी के साथ रहने का प्रभाव बच्चों पर बहुत पड़ा। नानी सब बच्चों को लाड-प्यार से रखती थी। वे बच्चों की प्रत्येक जिद को पूरा करती थी। माता-पिता के गुस्से से बच्चों का संरक्षण भी करती थी। वे बच्चों को कहानियाँ भी सुनती थी। जिन्हें सुशीला जी बचपन से ही बहुत ध्यान से सुनती थी। वे प्रतिदिन नानी से शाम को कहानियाँ सुनाने के लिए आग्रह भी करती थी। नानी की कहानियों का प्रभाव उन पर बचपन से पड़ा था। वे अक्सर इन कहानियों के विषय में सोचती थी – "यह कहानी ऐसी क्यों बनी ? या ऐसा न होकर कुछ और क्यों नहीं हुआ ? वे बचपन से ही कल्पनाशील स्वभाव की है। बचपन में कल्पना की अधिकता इतनी थी कि वे अंधेरे से डरती थी। अंधेरा देखकर उनका कल्पनाशील मन अनेक डरावनी कल्पनाएँ कर लेता था। भूत-प्रेत जैसी भयानक कल्पना के साथ शेर और डाकू की कल्पना उन्हें भयभीत कर देती थी।"

सुशीला जी के चार भाई और दो बहनें हैं। दो भाई और दो बहनें उनसे बड़े है। दो भाई छोटे है। बहनों में छोटी होने के कारण वे अपने माता-पिता, नानी और सभी भाई बहनों की लाडली रही। छः वर्ष की आयु होने पर उनका नाम स्कूल में लिखाया गया। स्कूल जाने के लिए उनके मन में बहुत ही उत्सुकता, जिज्ञासा और आग्रह था "मेरा स्कूल कब शुरू होगा ? मैं कब स्कूल जाऊँगी ?" ऐसे प्रश्न वे अपने माता-पिता से पूछती थी। उनकी माता जी प्यार से उन्हें चिढाने के लिए कहती थी "हम तुम्हें स्कूल नहीं भेजेंगे, तुम घर का काम करो" तब वे रोते हुए जिद करती थी कि मैं स्कूल जाऊँगी।

13.3.2 शिक्षा दीक्षा-

सुशीला टाकभौरे की प्रारंभिक शिक्षा उनके गाँव के प्राथमिक पाठशाला के बानापुर में हुई। प्राथमिक पाठशाला से आठवीं की बोर्ड परीक्षा उत्तीर्ण किया उनके स्कूल का नाम 'शासकीय नेहरू स्मारक उच्चत्तर माध्यमिक पाठशाला'। इस के बाद समय वहां 10वीं और 11वीं उत्तीर्ण करके कॉलेज में पढ़ी। कॉलेज का नाम 'कुसुम महाविद्यालय, सिवनी मालवा' था। यह महाविद्यालय सागर विश्वविद्यालय से संबंध है। बानापुरा सिवनी रोड पर स्थित कुसुम महाविद्यालय से सन् 1974 में उन्होंने बी। ए की डिग्री प्राप्त की। उस समय वे अपनी जाति-समुदाय की पहली मैट्रिक और पहली ग्रेजुएट लड़की थी। बी.ए की परीक्षा के बाद उनका विवाह नागपुर निवासी श्री 'सुंदर लाल' जी के साथ संपन्न हुआ। वे नागपुर के हाईस्कूल के शिक्षक थे। विवाह के बाद, सुशीला जी का बी। ए का रिजल्ट के बाद उनके पति ने टीचर ट्रेनिंग के लिए एडमिशन नागपुर के बी।एड कॉलेज (वान खेड़े टीचर ट्रेनिग कॉलेज) में दाखिला करवा दिया।

इस तरह उन्होंने 1975-76 में नागपुर विश्वविद्यालय नागपुर से बी.एड की परीक्षा उत्तीर्ण की और 1976 के दीक्षांत समारोह में उपाधि प्राप्त की। 1977 में पति के स्कूल 'प्रकाश' हाईस्कूल में शिक्षा का पद खाली होने पर साक्षात्कार के बाद वे वहां शिक्षिका के पद पर नियुक्त की गयी। जुलाई 1977 से 16 जुलाई 1986 तक उन्होंने वहां अध्यापन का कार्य किया हाई स्कूल शिक्षिका के पद पर नौकरी करते हुए, घर गृहस्थी संभालते हुए, अपने छोटे बच्चों का पालन-पोषण और उनकी पढाई देखते हुए, सुशीला जी ने हिंदी साहित्य लेकर एम्.ए की परीक्षा दी और प्रथम श्रेणी से अच्छे अंक प्रात किए। 1986में एम्. ए की सफलता के बाद वे रुकी नहीं। राष्ट्रसंत 'तूकड़ो जी महाराज' नागपुर विश्वविद्यालय नागपुर से पीएच.डी की उपाधि हेतु शोध कार्य किया। 1991में उन्हें पीएच. डी की उपाधि प्राप्त हो गई।

बोध प्रश्न

सुशीला टाकभौरे की पारिवारिक पृष्ठभूमि पर दो वाक्य लिखिए।

13.3.3 रचना संसार –

सुशीला टाकभौरे दलित महिला रचनाकारों में एक सशक्त साहित्य है। वैसे पढ़ने-लिखने का शौक उन्हें बचपन से ही था। फिर भी समाज की विभिन्न तथा विकट परिस्थितियों के बावजूद उन्होंने अपने साहित्य को समाज के सामने उजागर किया है। जब उन्होंने कहानियाँ लिखना प्रारंभ किया था तो पाठक के रूप में सबसे पहले वे अपनी कहानी अपने पति को पढवाती थी। उन्हें यह उम्मीद रहती थी वे उनके लेखन की अच्छाई-बुराई बताकर उनका मार्गदर्शन करेंगे। इस सन्दर्भ में सुशीला जी कहती है "मैं पूछती ही रहती 'बताओं न।।। बताओं

न' वे कुछ बताते ही नहीं। उनकी खुशामद करने के लिए में उन्हें अच्छा खाना बनाकर खिलाती, हर वे कार्य करती थी जो वे बोलते थे। मगर वे अपना मुंह तक नहीं खोलते थे। मैं भी ऐसी समय में ऐसी पगला सी जाती थी। जैसे वे कहेंगे तो उसी से ही सही मार्गदर्शन मिलेगा। मैं यह मान बैठी थी।"

सुशीला जी भी किसी की मौहताज नहीं रही और अपना लेखन कार्य जारी रखा। आज वे कहानीकार, उपन्यासकार, नाटककार तथा आलोचक के रूप में ख्याति प्राप्त कर चुकी है। कई पत्र-पत्रिकाओं ने उनकी समीक्षाएं भी प्रकाशित होती रहती है।

काव्य संग्रह –

'स्वाति बूंद और खारे मोती' यह काव्य संग्रह 1993 में प्रकाशित हुआ। 'स्वाति बूंद और खारे मोती' में छोटी-छोटी कवितायेँ है। जो मन के अनेक भावों को व्यक्त करने वाली है। इसका दूसरा संस्करण सन् 2014 में प्रकाशित हुआ। इस काव्य संग्रह का मुख्य आधार अम्बेडकर वादी विचारधारा है। इन कविताओं में शोषण अन्याय के विरुद्ध विद्रोह और दुश्मनों को ललकारने की चेतना है। इनमें कहीं यातना के स्वर है तो कहीं चेतना के स्वर भी।

इनका दूसरा काव्य संग्रह 'यह तुम भी जानों' 1994 में प्रकशित हुआ। इस काव्य संग्रह में नारी चेतना और नारी विमर्श की दृष्टि से काफी महत्त्व प्राप्त है। इस काव्य संग्रह का दूसरा संस्करण 2013में प्रकाशित हुआ। 'स्त्री' नामक कविता में सुशीला जी स्त्री के अधिकारों पर बात करते हुए कहती है-

"एक स्त्री
जब भी कोई कोशिश करती है
लिखने की, बोलने की, समझने की
सदा भयभीत सी रहती है
मानो
पहरेदारी करता हुआ
कोई
सर पर सवार हो"

सुशीला टाकभौरे जी का तीसरा काव्य संग्रह 'तुमने उसे कब पहचाना' यह काव्य संग्रह 1995 ई. में प्रकाशित हुआ। इस काव्य संग्रह की विशेषता यह है कि इसमें नारी को भोग्या मानने वाले उसकी दुर्दशा तथा उसके पैरों में धर्मशास्त्रों द्वारा डाली गई बेड़ियों। सामाजिक रुढियों, पुरुष सत्ता आदि से संबंधित प्रश्न उठाकर पुरुष समाज को खुली चुनौती देता है।

सुशीला का चौथा काव्य संग्रह है 'हमारे हिस्से का सूरज' 2005 ई। जो काफी चर्चित काव्य संग्रह रहा। 'हमारे हिस्से का सूरज' काव्य संग्रह में दलित जातियों की यातनाओं-समस्याओं और वर्तमान स्थिति को स्वर दिया। सुशीला जी ने समता, स्वतंत्रता तथा बन्धुत्वता की बात करते हुए 'हमारे हिस्से का सूरज' नामक कविता में लिखा है।

"लाख कोशिशों की है, दुश्मनों ने
हमारे हिस्से के सूरज को ढाकने की
फिर भी
चमका है दुनिया के आकाश में
हमारा क्रान्ति सूर्य"

सुशीला जी का नवीनतम काव्य संग्रह 'प्रतिरोध के स्वर' 2021 इस काव्य संग्रह में सुशीला जी के विचार, उनके संघर्ष तथा विरोध की लम्बी यात्रा का एक दस्तावेज है। अपने मन मस्तिष्क तथा ह्रदय में विरोध के प्रथम अंकुर के प्रस्फुटन से लेकर उसके एक वृक्ष रुपी बनने की प्रक्रिया यहाँ कविता स्पष्ट करती है। इस काव्य संग्रह में जहाँ दलित वर्ग तथा स्त्री को दोयम स्थान पर रखने वालों की मानसिकता पर प्रहार, वहीँ स्त्री वर्ग को जागरुक करने का प्रयास भी है।

बोध प्रश्न

- सुशीला टाकभौरे के काव्य संग्रहों के नाम बताइए।

कहानी संग्रह –

सुशीला जी बचपन से ही कहानियाँ लिखने आरंभ कर दिया था। उनके चार कहानी संग्रह प्रकाशित है – 'टूटता वहम', 'अनुभूति के घेरे', 'संघर्ष' और 'जरा समझो' आदि। उनकी सभी कहानी संग्रह दलित समाज का यथार्थ के साथ-साथ नारी तथा नारी भावनाओं से जुडी हुई है। अपनी कहानियों के संदर्भ में लेखिका स्वयं कहती है "मेरी कहानियाँ दलित जीवन की समस्याओं से जुडी कहानियाँ है, साथ ही नारी भावनाओं से जुडी हुई है। ये कहानियाँ दलित व अदलित दोनों प्रकार की नारी की हो सकती है।" संघर्ष कहानी संग्रह की सिलिया नामक कहानी में एक अछूत लड़की के जीवन का कड़वा सत्य है। उच्च शिक्षा प्राप्त करके अपने उद्देश्य को प्राप्त कर पाना तथा दलित समुदाय के लिए वे एक प्रेरणा स्त्रोत बनी। 'सिलिया' कहानी के कथाक्रम की घटनाएं सत्य घटनाओं पर आधारित है। इसलिए इतना सजीव और सार्थक चित्रण इस कहानी का हो पाया है।

बोध प्रश्न

- सुशीला टाकभौरे के कहानी संग्रहों के नाम बताइए।

उपन्यास –

सुशीला टाकभौरे का 'नीला आकाश' उपन्यास सन् 2013 ई. में प्रकाशित हुआ। इस उपन्यास में दलित जीवन के कठोर यथार्थ का जीवंत तथा वर्त्तमान और भविष्य की आशाओं, आकांक्षाओं को व्यक्त करने का प्रयास किया गया है। इस उपन्यास के माध्यम से सुशीला जी ने उपन्यास की नायिका नीलिमा द्वारा दलितों के बीच एकता संगठन और भाईचारे के संदर्भ में कहना चाहती है कि "हिन्दू वादी रीति ने हमें दिया है- छुआ-छत, अपमान, शोषण, अत्याचार। क्या कभी किसी ने सोचा है हम हिन्दू केवल इस लिए है कि हम सवर्ण हिन्दू समाज की सेवा करते हैं। क्योंकि वे जानते हैं- जिस दिन सफाई कर्मी समाज, इसाई, मुसलमान या बौद्ध धर्म स्वीकार कर लेना, फिर वह उनके घर की सफाई करने नहीं जाएगा। कम से कम अब तो हमारे लोगों को इस बात को समझाना चाहिए।" 'तुम्हें बदलना ही होगा' (2015)। सुशीला टाकभौरे जी का दूसरा उपन्यास है। इस उपन्यास में दलित जीवन की वर्ण-जाति भेद की समस्याओं को वर्तमान सन्दर्भों में बहुत गहराई से रेखांकित करने का प्रयास किया गया है। सुशीला टाकभौरे जी का अंतिम उपन्यास 'वह लड़की' (2017), यह उपन्यास नारी जीवन संघर्ष से जुडा हुआ है। इस उपन्यास में अनेक नए मुद्दे उठाए गए हैं। स्त्री शोषण पहले भी था, अभी भी हो रहा है। नयी पीढ़ी की लड़कियाँ शिक्षित होकर स्वावलंबी बन रही है। साथ ही सबल और जागृत भी हो रही है। शैला, बबली, प्रिय, इक्कसवीं शताब्दी की जागृत युवा पीढ़ी की लड़कियाँ है। वे स्त्री पुरुष असमानता और लिंग भीड़ को समाप्त करने के कदम उठाती है। निशा महिला आन्दोलन से जुड़कर शोषित-पीड़ित महिलाओं को जाग्रत और सबल बनाने की मुहीम चलाती है।

'शैला' घर और परिवार की जिम्मेदारी उठाने के साथ, दलित आंदोलन और महिला आंदोलन में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। ममता की बेटी 'प्रिया' डॉक्टर बनने के बाद शोषित – पीड़ित महिलाओं की मद्दत करके, समाज सेवा का कार्य करना चाहती है। ममता की बेटी 'निम्मी' विवाह के बाद पति के साथ अपने माता-पिता के घर में रहने की शर्त रखकर सामाजिक परंपराओं को बदलने की बात कहती है। विवाह के बाद लड़की ही ससुराल जाकर क्यों रहे ? वे विवाह के बाद भी अपने माता-पिता के साथ रहकर उनको सहयोग दे सकती है। अतः प्रस्तुत उपन्यास स्त्री प्रश्न को व्यापक परिप्रेक्ष्य में, तटस्थ दृष्टि से नए दृष्टिकोण के साथ प्रस्तुत करता है। आज की दलित स्त्री अब शिक्षित स्वावलंबी होकर नया समाज बनाना चाहती है। वह पुराने मूल्यों से संघर्ष कर, समता के आधार पर स्त्री-पुरुष के भेद को मिटाकर अम्बेडकरवादी विचार धारा से पूर्ण सम्यक समाज का सपना देखती है। इस उपन्यास का मूल उद्देश्य भी नारी स्वतंत्रता है।

बोध प्रश्न

- सुशीला टाकभौरे ने कौन कौन से उपन्यास लिखे हैं ?

आत्मकथा –

'शिकंजे का दर्द' सुशीला टाकभौरे की प्रसिद्ध आत्मकथा है। जिसका प्रकाशन सन् 2011 ई। में हुआ। शिकंजा यानी पंजा, जिसकी जकडन में रहकर कुछ कर पाना कठिन हो। शिकंजा यानी कठघरा जिसमें कैद होकर उसके बाहर जाना कठिन हो। अर्थात शिकंजे का अर्थ एक प्रकार का प्राचीन यंत्र है। जिसमें अपराधी की टांग कस दी जाती है। जिस प्रकार किसी ताकतवर को शिकंजे में जकड़कर उसकी पूरी ताकत को नगण्य बना दिया जाता है। सुशीला जी को भी सामाजिक जीवन की मनुवादी विषमता ने वर्णवादी जातिवादी समाज व्यवस्था ने शिकंजे में जकड़कर रखा, जिसका परिणाम पीड़ा-दर्द छटपटाहट के सिवा कुछ नहीं है। शिकंजे का दर्द में संताप है दलित होने का, स्त्री होने का। इसमें शोषित पीड़ित, अपमानित, अभाव ग्रस्त दलित जीवन की व्यथा है। सुशीला जी कहती हैं – "स्त्री होना ही जैसे व्यथा की बात है। चाहे हमारा देश हो या विश्व के अन्य देश, हर जगह शोषण उत्पीडन का शिकार स्त्री ही रही है। जिस देश में वर्णभेद- जातिभेद की कलुषित परम्पराएँ हैं वहाँ दलित स्त्री शोषण की व्यथा और भी गहरी हो जाती है। शिकंजे का दर्द का उद्देश्य भी पीड़ित को मानवाधिकार दिलाना और दलित जीवन की व्यथा-कथा का दर्द उकेरना रहा है।"

बोध प्रश्न

- सुशीला टाकभौरे की आत्मकथा का क्या नाम है ?

नाटककार –

सुशीला टाकभौरे जी ने दो नाटकों की रचना की है। 'रंग और व्यंग' नाटक का प्रकाशन सन् 2006 में हुआ। इस संग्रह में 5 नाटक संकलित है। जैसे 'रंग और व्यंग्य', 'जीवन के रंग', 'चश्मा', 'व्हीलचेयर', 'समर्पित जीवन'। इसी प्रकार दूसरा नाटक 'नंगा सत्य' है। जिसका प्रकाशन वर्ष सन् 2007 में हुआ। यह नाटक भी समाज के सत्य को उजागर करने वाला नाटक है। इन नाटकों का मुख्य उद्देश्य भी भारतीय समाज में परिवर्तन लाना है। इसी प्रयास को सुशीला जी ने अपने नाटकों में प्रस्तुत किया है। लेखिका का मुख्य उद्देश्य भी यही रहा है कि फुले-अम्बेडकर, पेरियार तत्वज्ञान और दलित साहित्य लेखन के उद्देश्य को जन-जन तक पहुंचाने का प्रयास किया गया है।

आलोचनात्मक साहित्य-

सुशीला जी न सिर्फ कवयित्री है बल्कि वह लेखिका और अच्छी आलोचक भी है। उनकी आलोचना के अंतर्गत आने वाली प्रमुख रचनाओं में 'दलित साहित्य एक आलोचना दृष्टि'

(2016), 'भारतीय नारी : समाज और साहित्य के ऐतिहासिक संदर्भ' (2015) में प्रकाशित हुआ.

अन्य विधा-

सुशीला जी ने अन्य विधाओं पर भी अपनी लेखनी चलाई है। जैसे- 'हाशिये का विमर्श'(1997), 'साक्षी है सवांद', 'कैदी नं. 307 (सुधीर शर्मा के पत्र)(2017) में प्रकाशित हुई। मेरे साक्षात्कार (2016), धन्यवाद के बहाने (2020), सवादों का सफ़र (2018), कारवां बनता ही गया (2019), हिंदी साहित्य के इतिहास में नारी (2020),में इसका दूसरा संस्करण प्रकाशित हुआ।

भ्रमण-

सुशीला जी ने समाज जाग्रति और साहित्य से जुड़ी अनेक यात्राएं भी की हैं। वह केवल देश ही नहीं बल्कि विदेशों की यात्राएं भी कर चुकी है। वह उस समय के लिए बहुत खुशी की बात थी।

विदेश यात्रा-

सुशील जी ने 2004 में मुंबई की संस्था ने 'समकालीन साहित्य सम्मेलन' की और से श्रीलंका में 'हिन्दी साहित्य सम्मेलन' आयोजित किया। उन्होंने उसमे सक्रिय सहभागिता के साथ संगोष्टी में भाग लिया।

- 2006 में 'समकालीन साहित्य सम्मेलन' की और से आयोजित कार्यक्रम में इंग्लैंड यात्रा का अवसर मिला।
- 2008 में दुबई में आयोजित 'हिन्दी साहित्य सम्मेलन' कार्यक्रम में 'साहित्य जी दिशा और दशा' के अंतर्गत 'हिन्दी कथा साहित्य के तीन दशक' विषय पर आलेख वाचन किया।

सुशीला जी दुबई, मारीशस के प्रवासी भारतीय साहित्यिक लोगों और अपने साथ आये साहित्यकारों के सामने उन्होंने दलित साहित्य और अम्बेडकरवादी विचारधारा की जानकारी भी दी।

13.3.4 पुरस्कार और सम्मान:

सुशीला टाकभौरे जी को कई पुरस्कार तथा सम्मानों से भी नवाजा गया है।

- अन्विता प्रासद मर्मट जी के 'मध्य प्रदेश दलित साहित्य अकादमी' की और से उज्जैन में आयोजित दलित साहित्य सम्मलेन कार्यक्रम में उनकी कविता संग्रह 'यह तुम ही जानों' पर शिक्षा और संस्कृति मंत्री द्वारा उन्हे 10,000/- रुपये का नकद पुरस्कार दिया गया ।

- ❖ उत्तर प्रदेश दलित साहित्य अकादमी फरुखाबाद की तरफ से 'पदम् श्री गुलाब सम्मान' से सम्मानित किया गया।
- ❖ नागपुर में ही 'मैगनम' संस्था द्वारा ज्ञान 'ज्योति सम्मान' से भी सम्मानितकिया गया ।
- ❖ 2009 में 'समता साहित्य सीमिति हैदराबाद' के अध्यक्ष नें उन्हें संस्था के वार्षिक कार्यकर्म में 5000 नकद राशि से सम्मानित किया गया ।
- **सामाजिक कार्य:** सुशीला जी ने कई सामाजिक आन्दोलनों में भाग लेकर स्त्रियों की सामाजिक, पारिवारिक आदि प्रमुख समस्याओं के निवारण पर काम किया।
- ❖ 1975 में महाराष्ट्र में उन्होंने स्त्रियों को उनको अधिकारों एवं पारिवारिक समस्याओं के प्रति जागरूक करने का कार्य किया ।
- ❖ 10 दिसम्बर मानव अधिकार दिन और 8 मार्च अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिन अनेक कार्यक्रमों में भाग लेकर अपने श्रम, साहस, आर्थिक सहयोग के साथ वैचारिक योगदान देती रही ।
- ❖ सामाजिक शिक्षा तथा शोध समिति 'जाग बिरादर' वाल्मीकि युवा समिति का प्रतिनिधित्व करते हुए महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, बिहार, पश्चिम बंगाल, गुजरात और आंध्रप्रदेश आदि राज्यों का भ्रमण तथा समय समय पर दिलत साहित्य और सामाजिक वर्कशॉप में भाग लेकर सामाजिक कार्यों का प्रतिनिधित्व भी किया।

13.4 पाठ सार

साहित्यकार समाज में रहकर ही साहित्य सृजन करता है। यदि कोई पाठक, कोई रचना पढ़ता है तो उसके मन मस्तिष्क में सबसे पहले यही सवाल आता है कि यह रचना किस साहित्यकार द्वारा रचित है। वह उस साहित्यकार के विषय में जानने का इच्छुक हो उठता है। क्योंकि पाठक तथा लेखक का अन्तः संबंध होता है। वह लेखक के प्रत्येक घटना को उसके व्यक्तित्व के साथ जोड़कर देखता है। इस लिए यदि पाठक किसी भी साहित्यकार या लेखक की कोई भी रचना पढ़ता है तो, वह लेखक या साहित्यकार के जीवन या उनके द्वारा लिखी गयी पुस्तकों के बारे में जानकारी प्राप्त करना चाहता है। तभी वह उस लेखक के द्वारा लिखी गई रचना को मन से ग्रहण कर पाता है । पिछले दो तीन दशकों से हिंदी साहित्य में जो आंदोलन जोर पकड़कर समाज को झकझोर देने का काम कर रहा है वह सिर्फ दलित साहित्य है । इस साहित्य में दलित लेखकों ने अपना भरपूर योगदान दिया है, और दे भी रहे है। ये लेखक चाहे स्त्री हो या पुरुष, अपने लेखन द्वारा समाज को जागृत कर रहे है। सुप्रसिद्ध दलित पुरुष रचनाकारों में ओमप्रकाश वाल्मीकि, मोहनदास नैमिशराय, जयप्रकाश कर्दम, कवल भारती, सूरजपाल चौहान, आदि के नाम आदर भाव के साथ लिए जा सकते हैं। इन दलित साहित्यकारों ने समाज जीवन के साथ-साथ नई

सोच, नई मान्यता, नए विचार आदि को अपनाया है। उन्होंने अपने साहित्य में चाहे वे कविता हो, उपन्यास, नाटक, कहानी ही क्यों न हो सभी विधाओं में शोषित, उपेक्षित, दलित मजदूर, किसानों तथा दलित नारी व्यथा को प्रस्तुत किया है। दलित स्त्री रचनाकारों की यदि बात की जाए तो कौशल्या बैसंत्री, कावेरी, कमल, रजिनी तिलक आदि को हम समावेश कर सकते है।

दलित साहित्य की सशक्त लेखिका की-

दलित साहित्य में सुशीला टाकभौरे एक सशक्त लेखिका मानी जाती है। दलित साहित्य की सुप्रसिद्ध लेखिका का जन्म 4 मार्च 1954 को मध्य प्रदेश के जिला होशंगाबाद के तहसील सिवनी मालवा के एक छोटे से गाँव बानापुरा में हुआ। सुशीला जी ने दलित साहित्य के बारे में लेखन किया है। सुशीला टाकभौरे जी ने लगभग सभी विधाओं में लिखने का प्रयास किया है। सुशीला टाकभौरे जी की आत्मकथा शिकंजे का दर्द दलित साहित्य की आत्मकथाओं में एक महत्वपूर्ण स्थान रखती है। उन्होंने कविता, कहानी, उपन्यास की भी रचना की है। उनकी हर रचना जीवन के यथार्थ को दर्शाती है जिसने दलित वर्ग की समस्याएँ स्वयं जैसे बोलने लगती है। 'सिलिया' कहानी की प्रसिद्धि के बाद वह कहानी कई पत्र-पत्रिकाओं में छपती रही है। 'सिलिया' कहानी कल्पना की कहानी नहीं यथार्थ भाव की कहानी है। एक अछूत लड़की के जीवन का कड़वा सत्य इसे ही सिलिया ने अपने जीवन का सम्बल बनाया। उच्च शिक्षा पाना उसके जीवन का उद्देश्य बन गया था। तभी वह अपने दलित जाति समुदाय के लिये प्रेरणा का प्रतिक बन सकी।

13.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप

1. दलित लेखिका सुशीला टाकभौरे का जीवन परिचय के बारे में जान चुके हैं।
2. सुशीला टाकभौरे के रचना संसार के बारे में जानकारी प्राप्त हुआ है।
3. सुशीला टाकभौरे के रचना संसार में दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र के आधार पर लेखन किया गया है।
4. सुशीला टाकभौरे के लेखन स्वानुभूति के आधार पर माना जाता है।
5. सुशीला टाकभौरे दलित साहित्य की एक महत्वपूर्ण लेखिका मानी जाती है।

13.6 शब्द सपंदा

1. शिकंजा - पंजा, कठघरा, जिसकी जकड़न में रहकर कुछ पाना कठिन हो.
2. सवर्ण - जो वर्णव्यवस्था में सम्मेलित समाज
3. अछूत - जो छुआ न जा सके
4. यथार्थ - उचित, सभावना

5. शोषण - अत्याचार

6. स्वावलंबी - आत्मनिर्भर, स्वाश्रित

13.7 परीक्षार्थी प्रश्न

खंड (अ)

दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिये।

1. सुशीला टाकभौरे के व्यक्तित्व पर प्रकाश डालिए।
2. सुशीला टाकभौरे के कृतित्व पर प्रकाश डालिए।
3. सुशीला टाकभौरे का दलित साहित्य में स्थान के बारें में बताइए।

खंड (ब)

लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिये।

1. सुशीला टाकभौरे का जीवन परिचय संक्षिप्त में दीजिए।
2. सुशीला टाकभौरे के काव्य में दलित चेतना को बताइए।
3. सुशीला टाकभौरे दलित कवयित्री हैं संक्षिप्त समझाइए।

खंड (स)

I. बहु विकल्पीय प्रश्न

1. सुशीला टाकभौरेका जन्म कब हुआ है ? ( )

   (अ) 1958 (आ) 1954

   (इ) 1956 (ई) 1960

2. सुशीला टाकभौरे का लेखन विषय क्या है ? ( )

   (अ) मुस्लिम विमर्श (आ) मार्क्सवादी

   (इ) दलित विमर्श (ई) वृद्ध विमर्श

3. 'संघर्ष' कहानी किस लेखक की है ? ( )

   (अ) जयप्रकाश कर्दम (आ) मोहनदास नैमिशराय

   (इ) सूरजपाल चौहान (ई) सुशीला टाकभौरे

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये।

1) सुशीला टाकभौरे का जन्म _____वर्ष में हुआ।

2) सुशीला टाकभौरे की आत्मा कथा का नाम _____ है।

3) _____विमर्श की लेखिका है।

III. सुमेल कीजिये।

1.	स्वाति बूंद खारे मोती	(अ) 2011
2.	शिकंजे का दर्द	(आ) 1993
3.	नीला आकाश	(इ) 2007
4.	नंगा सत्य	(ई) 2013

13.8 पठनीय पुस्तकें

1. दलित लेखन में स्त्री चेतना की दस्तक : सं. शिवरानी प्रभात पुहाल
2. 'शिकंजे का दर्द' : डॉ. सुशीला टाकभौरे
3. 'स्वाति बूंद और खारे मोती' : डॉ. सुशीला टाकभौरे
4. 'यह तुम भी जानों' : डॉ. सुशीला टाकभौरे
5. 'संघर्ष' (कहानी संग्रह) : डॉ. सुशीला टाकभौरे
6. हिंदी कथा साहित्य में दलित विमर्श : सं. डॉ. दिलीप मेहरा
7. दलित अभिव्यक्ति : संवाद और प्रतिवाद : रूपचंद गौतम

इकाई 14 : संघर्ष : आलोचना

इकाई की रूपरेखा

14.1 प्रस्तावना

14.2 उद्देश्य

14.3 मूल पाठ : संघर्ष कहानी का तात्विक विवेचन

14.3.1 सुशीला टाकभौरे का व्यक्तित्व

14.3.2 सुशीला टाकभौरे का कहानी विधा

14.3.3 संघर्ष कहानी का संक्षिप्त कथा

14.3.4 संघर्ष कहानी के प्रमुख पात्रों का चरित्र-चित्रण

14.3.5 संघर्ष कहानी में संवाद

14.3.6 संघर्ष कहानी का देशकाल और वातावरण

14.3.7 संघर्ष कहानी का उद्देश्य और जीवन दर्शन

14.4 पाठ सार

14.5 आलोचना

14.6 पाठ की उपलब्धियाँ

14.7 शब्द संपदा

14.8 परीक्षार्थ प्रश्न

14.9 पठनीय पुस्तकें

14.1 प्रस्तावना

भारतीय समाज की सबसे बड़ी विडंबना धार्मिक मान्यताओं के आवरण में एक वर्ग विशेष रूप से शोषण ही रहा है। पुराण पंथी जड़ता ने दलित वर्ग के शोषण को आध्यामिक मुखौटा देकर, हमेशा उनके मनोभावों पर प्रहार किया है। डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने दलित वर्ग को अपने अधिकारों के प्रति सजग करते हुए, नवचेतना प्रदान की है। आज अतीत से संघर्षरत, दलित वर्ग का संघर्ष, विजयपथ की ओर अग्रसर है। इसी वैचारिक संघर्ष की कहानी में प्रतिध्वनित होती है। संघर्ष कहानी में आदर्श तथा यदपि साथ-साथ चित्रित हुए है, जो कहानी के पात्रों तथा अन्य जनों के परिवर्तन के मूल में डॉ। अम्बेडकर और उनका संविधान है न कि गांधी का सिद्धांत। इस यथार्थ को लेखिका ने प्रमुखता से 'संघर्ष' कहानी में चित्रित किया है।

'संघर्ष' कहानी के शंकर को लगता है कि उसकी नानी ऐसा गंदा काम क्यों करती है ? वह उसे यह काम छोड़ने के लिए कहता है। शंकर का बाल जीवन जातीय उत्पीड़न के प्रति अराजक हो गया है। जो उसको जाति के कारण चिढ़ाते है, शंकर को उन्हें सताने, तंग करने में सुख मिलता है। शंकर का आपत्ति अपनी नानी द्वारा सूअर पालने और बेचने पर नानी का बाल पकड़ कर झंझोड़ना ये कुछ ऐसे प्रसंग है, जो दलित समाज के अतद्वंद को बखूबी उभारते है। पुरानी पीढ़ी का अपने पेशे के प्रति मज़बूरी और मोह व नई पीढ़ी की होगी, ऐसा तय है। इसी मत को सुशीला टाकभौरे ने संघर्ष कहानी में स्थापित किया है। कहानी में लेखिका डॉ. सुशीला टाकभौरे जी ने अपनी भूमिका में ही स्पष्ट किया है कि संघर्ष में होकर ही दलित मुक्ति का रास्ता प्रगति और परिवर्तन की और चला है। परंतु प्रगति और परिवर्तन की ओर जाने के लिए सभी जनजातियों को गांधीवाद को छोड़कर आम्बेडकरवाद से जुड़ने की आवश्यकता है, इस बात को उन्होंने 'संघर्ष' कहानी में प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष माध्यम से व्यक्त किया है।

14.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप

- संघर्ष कहानी से बाल-जीवन उत्पीड़न के कारण को जानेंगे।
- सुशीला टाकभौरे का व्यक्तित्व को जानेंगे।
- संघर्ष कहानी के सार को जानेंगे।
- संघर्ष कहानी के माध्यम से दलित जीवन की मार्मिकता को जान पाएँगे।

14.3. मूल पाठ : संघर्ष कहानी का तात्विक विवेचन

'संघर्ष' कहानी चौदह साल के शंकर के ऊपर है। जो मध्यम कद काठी, चेहरा चौड़ा, नाक लम्बी मगर सामने से थोड़ी फैली। आँखे छोटी और तीखी। रंग कुछ ज्यादा ही सांवला है। शंकर बहुत उधमी, मस्ती, शरारत खेलकूद आदि करने से बाज नहीं आता है। वह दलित समाज का प्रतिनिधित्व करता है, इसलिए समाज का बर्ताव, अन्य किसी को भी उसके कृत्य में बचपना नजर नहीं आता है। बल्कि हर किसी को उसमें अछूत नीच आदि दिखाई देता है। सड़क के किनारे, सरकारी डॉक बंगले से आगे जामुन के दो बड़े पेड़ हैं। जामुन के मौसम में एक दिन शंकर ने जामुन के पेड़ पर खूब पत्थर चलाये पेड़ के पास 'ठुट्टी तेलन' का घर है। उसका बाया हाथ जन्म से ही ठूठा है। जामुन पर पत्थर मारने से कुछ पत्थर तेलन के घर के ऊपर गिरे। वह घर के बाहर निकलकर चिल्लाई, उसने शंकर को खूब गालियाँ बकी "मरई खाये.....ठकरी बंधे ....जामुन पे पत्थर मारे है. पत्थर हमारे घर पे गिरे हैं.....तेरो बाप खरीद के देयगो हमें ? शनीचर कहीं के .....इसके पेट में आग लगे..... नानी बेचारी तो सारे गाँव का गू-मूत करती

फिरे है और इको मस्ती चढ़ी है. इसका नाश हो जाए....." शंकर गालियाँ सुनते ही वहां से भाग गया। ठुट्टी तेलन उसे कहती है..... अपनी जाति औकात में नहीं रहता। अभी यह हाल है तब आगे चलाकर पता नहीं क्या करेगा ? .....जरा डरता नहीं है. ... बदमाश ..... छोरा का." शंकर का पिता बेटे की इस करतूत पर उसे थप्पड़ तो मार देता है है, पर उसे पश्चाताप और अपने आप पर ग्लानि होती है. तब वह कहता है "बच्चा है.....बच्चे धूम करते ही हैं। मगर लोगों को हमारा बच्चा ही बुरा लगता है। न जाने लोग हमारे ही पीछे क्यों रहते हैं ? जहाँ देखो जात-पात की बात करके, हमें नीचा दिखाते रहते हैं। जैसे हमारी कोई इज्जत ही नहीं है।..?" शकर अपनी नानी के साथ रास्ते से जाते समय, नानी के मना करने पर भी सवर्णों को जान बूझकर छूता है, तब लोग उसे कोसते हैं, गालियाँ देते हैं और डंडे से मारते हैं. भागते-भागते शंकर भी उन्हें कहता है – "तुम कुत्ते हो.....तुम सूअर हो..... तुम पाजी हो ..... कभी वह उन पर पत्थर भी फेंकता। शंकर के इस कृत्य में सवर्णों के प्रति प्रत्युत्तर का दुस्साहस और संघर्ष की मानसिकता का अंकुरण होता हुआ दिखाई देता है। एक बार वह स्कूल के बाहर कुछ सवर्ण बच्चों के अभद्र व्यवहार के कारण उसे स्कूल से बाहर कर दिया जाता है। तब हेड मास्टर जी से माफ़ी मांग कर परीक्षा में बैठने की अनुमति प्राप्त कर पाता है। इस प्रकार अपने आत्मबल और संघर्ष के बल पर आगे बढ़ते हुए, वह अपनी जाति का पहला मैट्रिक पास होने का सम्मान पाता है। अंततः उसका संघर्ष सफल हो जाता है। "

14.3.1 सुशीला टाकभौरे का व्यक्तित्व

डॉ. सुशीला टाकभौरे का जन्म मध्यप्रदेश के, जिले होशंगाबाद की तहसील सिवनी मालवा के, एक छोटे से गाँव 'बानापुर' में हुआ। उनकी जन्म तिथि 4 मार्च सन् 1954 है। उनकी माता जी के अनुसार उनकी सही जन्म तिथि 1954 के आषाढ़ माह की शुक्ल पक्ष की नवमी है। उनकी माता जी का नाम श्रीमति 'पन्ना घांवरी' तथा पिताजी का नाम श्री 'राम प्रसाद घावंरी' है। पिताजी तीसरी कक्षा तक ही शिक्षा का ज्ञान प्राप्त कर पाए थे। उनकी माता जी अशिक्षित थी। मगर अपने बच्चों को स्कूल भेजने की तथा उनका पढ़ाई के प्रति नजरिया हमेशा सचेत बना रहा। सुशीला जी चार भाई और तीन बहनें है। दो भाई और दो बहनें उनके बड़े हैं। दो भाई छोटे है। बहनों में छोटी होने के कारण वे अपने माता-पिता तथा नानी और सभी की लाडली बनी रही। उनकी प्राथमिक शिक्षा गंज प्राथमिक शाला, बानापुर,में हुई। उच्चतर प्राथमिक शिक्षा उतीर्ण करके वे कॉलेज 'कुसुम महाविद्यालय', सिवनी से सन् 1974 में बी.ए. की डिग्री प्राप्त की। बी.ए. की परीक्षा के बाद 'सुशीला' जी का विवाह नागपुर निवासी श्री 'सुंदर लाल' जी के साथ संपन्न हुआ। उनका ह्रदय बहुत संवेदन शील है। इसी के कारण वे किसी के दुःख या

तकलीफ को देखकर दुखी हो जाती है। दया, ममता, करुणा, क्षमा, त्याग की भावना उनके आतंरिक व्यक्तित्व गुण रहे है। यदि देखा जाए तो लेखन के प्रति रूचि बचपन से ही रही है।

वैवाहिक जीवन : सुशीला जी जब मैट्रिक में पढ़ रही थी, तब से उनकी शादी के रिश्ते आने लगे थे। एक बार रिश्ते के लिए भोपाल से मोहन आये थे। लड़के के पिताजी गोरे, ऊँचे, सुन्दर भोपाली नवाब जैसे दिख रहे थे। उन्होंने सुना था वे बहुत रईस हैं। फिर भी उनकी माँ उनके लिए ऐसे वर की तलाश में थी जो सबसे अलग अनूठे, सबसे अच्छे और दिल से प्यार करने वाला हो। उनका मन भी अब कल्पनाओं में उड़ान भरने लगा था। 6 मार्च, 1974 में सुशीला जी की शादी सुन्दरलाल टाकभौरे के साथ तय हुई। उनकी माँ ने गाँव के साहूकारों से रुपये उधार लेकर उनकी शादी की तैयारियाँ की थी। अतः उनकी शादी 6 मार्च को सुन्दरलाल से हो गई। पढ़ा-लिखा और आधुनिक विचार के होने के कारण उन्होंने भी सुन्दरलाल टाक भौरे को स्वीकार कर लिया। क्योंकि माँ और नानी ने भी यही शिक्षा दी थी कि माता-पिता जिसके साथ उनका विवाह तय करेंगे, उसी से प्यार करना है और उसी का प्यार पाना है। प्रेम शादी के बाद पति से ही किया जाता है, यह संस्कार बचपन से उन्हें मिली थी। किन्तु यह भ्रम भी उनका जल्दी टूट गया। जब सुशीला जी शादी के बाद 7 मार्च 1974 को पहली बार नागपुर रेलवे स्टेशन पर जब वे उतरी तब उनका घूंघट एक हाथ लम्बा था। जीना उतरते समय टाकभौरे जी ने उन्हें डांटकर कहा था- क्या तमाशा है? उन्होंने अपना घूंघट थोड़ा कम कर लिया था। रूखेपन के साथ कहीं इस बात से मन को चोट भी लगी थी। गाँव में दुल्हन के साथ उसका घूंघट अभिन्न बात मानी जातीथी। बचपन से देखे, सीखे और सिखाये गये संस्कार स्वयं ही अपना काम करते हैं। इस प्रक्रिया को देखते हुए तथा टाकभौरे जी के व्यवहार से सुशीला जी का मन बहुत आहत हो उठा। वह वही सदियों से चली आ रही पुरुषीय मानसिकता स्वामित्व, गुलामी तोड़ना, मारना पीटना, पैरों की जूती समझना, नौकर सा बर्ताव तथा अनमेल विवाह की शिकार हो चुकी थी। सुशीला जी और सुन्दर लाल टाकभौरे जी का अनमेल विवाह होने के कारण उनके स्वभाव में जमीन तथा आसमान तक फर्क था। क्योंकि हिन्दू धर्मग्रंथ मनुस्मृति में निर्देश है, लड़की की उम्र से तीन गुना बड़ी उम्र के वर से विवाह किया जा सकता है। यदि लड़की दस साल की हो तो तीस साल के वर से विवाह हो सकता है। हिन्दू धर्म इसे अनमेल विवाह नहीं कहता, बल्कि प्रोत्साहन देता है। लोग धर्म के नाम पर अक्सर चुप रह जाते हैं। स्त्रियाँ यह संताप चुपचाप भोगती है। बचपन से निर्बल-अबला के सांचे में ढाली गई कमजोर मानसिकता के कारण वे इस अन्याय का विरोध नहीं कर पाती। सुशीला जी इसी तरह कमजोर स्त्री बनी पड़ी थी।

व्यावसायिक जीवन:

घर में आर्थिक तंगी हमेशा बनी रहती थी। टाकभौरे जी भी चाहते थे कि बी.एड. के तदुपरांत सुशीला जी नौकरी करने। ताकि घर के खर्च में मदद मिले। टाकभौरे जी ने सुशीला जी की नौकरी के लिए लगातार प्रयत्न भी किए। अत: नागपुर में सीताबर्डी के मातृसेवा संघ' अस्पताल में लीनन कीपर की नौकरी की। जब दानी मैडम बार-बार कह रही थी- आपकी मिसेस बी.ए., बी.एड. हैं, आप उनसे गंदे कपड़े धोबी को देने के हिसाब की यह नौकरी क्यों करवाना चाहते हैं? उसे तो कहीं भी शिक्षिका की नौकरी मिल जायेगी। तो टाकभौरे जी ने अपने घर की आर्थिक परेशानी और सुशीला जी की नौकरी की जरूरत बताते हुए यह नौकरी पक्की कर ली। इस तरह सुशीला जी ने प्रथम बार व्यावसायिक जीवन में प्रवेश किया। सन् 1977 में प्रकाश हाई स्कूल में शिक्षिका की नौकरी करने लगी। अगले ही दिन से वे टाकभौरे जी की साइकिल पर डबल सीट बैठकर स्कूल जाने लगी थी। वहाँ उन्होंने जीवन के सुखद अहसासों का अध्ययन किया। और सन् 1986 तक वे इस स्कूल में अध्यापन का कार्य करती रही। प्रकाश हाई स्कूल में नौकरी लगने के बाद ही वे राजनीति और समाज सेवा की बातों पर अधिक ध्यान देने लगी थी। सन् 1986 में नागपुर शहर से 17 कि.मी. दूरकामठी के 'सेठ केसरीमल पोरवाल कॉलेज' में एक बार हिन्दी विषय के प्राध्यापक की जगह रिक्त बनी थी। जुलाई में उन्होंने इंटरव्यू दिया, तब 'डॉ. नागराजन' जी प्राचार्य उनके साक्षात्कार और हिन्दी साहित्य विषय का गहरा ज्ञान होने तथा उनसे प्रसन्न होकर ये नौकरी उन्हें प्रदान की। 16 जुलाई, 1986 को प्रकाश हाई स्कूल, गांधीबाग, नागपुर के शिक्षिका पद से त्यागपत्र देकर कॉलेज का कार्यभार संभाला। अपने मिलन सार हृदय तथा दृढ़ निश्चय के कारण वे मार्च 2012 तक इसी कॉलेज में कार्यरत रही।

भ्रमण:

सुशीला जी ने समाज जाग्रति और साहित्य से जुड़ी अनेक यात्राएं भी की हैं। वह केवल देश ही नहीं बल्कि विदेशों की यात्राएं भी कर चुकी है। वह उस समय के लिए बहुत खुशी की बात थी। सन् 1968 में कक्षा आठवीं में ही उन्होंने अपनी पहली कहानी लिखी थी जिसे बाद में व्रत और व्रती शीर्षक से 'टूटता वहम' कहानी संग्रह में छापा गया है। उनके अब तक कई कविता संग्रह तथा कई साहित्यिकी कृतियों की रचना की है।

काव्य संग्रह

स्वाति बूंद और खारे मोती – 1993

यह तुम भी जानों - 1994

हमारे हिस्से का सूरज - 2005

प्रतिरोध के स्वर - 2021

कहानी संग्रह

अनुभूति के घेरे - 1997

टूटता वहम - 1997

संघर्ष - 2006

जरा समझो - 2014

उपन्यास

नीला आकाश - 2013

तुम्हें बदलना ही होगा 2015

वह लड़की - 2018

नाटक

रंग और व्यंग्य - 2006

नंगा सत्य - 2007

आत्मकथा

शिकंजे का दर्द - 2011

निबंध तथा लेख संग्रह

हिंदी साहित्य के इतिहास में नारी – 1994

हाशिए का विमर्श - 1996

भारतीय नारी : समाज और साहित्य के ऐतिहासिक संदर्भ में – 1996

दलित साहित्य एक आलोचनात्मक दृष्टि – 2015

सुशीला जी ने अब तक कई विधाओं पर अपनी लेखनी चलाई है। उनकी अधिकांश कविताएँ कथ्य एवं शिल्प की दृष्टि से मंजी हुई है। किन्तु उनकी कहानियों के विषय अच्छे रहे हैं। उन्होंने दलित एवं स्त्री विमर्श पर पर्याप्त मात्रा में लिखा है। उनकी कुछ कहानियाँ कथ्य एवं शिल्प के धरातल पर श्रेष्ठ है। कुछ कहानियों में परिवेषण डिटेल्स, पात्रों की भाव-भंगिमाएं एवं अंतर्द्वंद आनुपातिक रूप से नहीं आ पाए है अतः ये कहा जा सकता है कि महिला दलित लेखकों में सुशीला टाकभौरेजी निश्चित एक बड़ी सशक्त साहित्यकार है।

14.3.2 सुशीला टाकभौरे: कहानी विधा –

सुशीला टाकभौरे ने चार कहानी संग्रह लिखें हैं। उनके हर कहानी संग्रह में दलित जीवन की यथार्थ को देखा जा सकता है। वह अम्बेडकरवादी विचारधारा से दलित समाज को एक समुदाय के रूप में देखना चाहती है। उनके कहानी संग्रह कुछ इस प्रकार से हैं-

1. अनुभूति के घेरे – 1997
2. टूटता वहम - 1997
3. संघर्ष - 2006
4. जरा समझो -2014

देखा जाए तो सुशीला टाकभौरे जी के सभी कहानी संग्रह दलित अस्मिता के प्रति स्वाभिमान और जुझारूपन है। लेखिका ने स्वयं लिखा है "समय के साथ शताब्दियाँ बीत रही है, मगर इन पिछड़े दलित समुदायों की सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक, राजनीतिक और धार्मिक स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं हो सका है। इन समुदायों की स्थिति में परिवर्तन होना तभी संभव हो सकेगा, जब वे गांधीवादी और मनुवादी विचारधारा को छोड़ कर, अम्बेडकरवादी विचारधारा से जुड़ेंगे। इसी में संघर्ष की सफलता है। अतः सुशीला टाकभौरे की सभी कहानी संग्रह अम्बेडकरवादी साहित्य आंदोलन की मशाल की तरह काम करती है।"

14.3.3 संघर्ष कहानी का संक्षिप्त कथा

शंकर चौदह साल का कद, काठी से सुडौल चेहरा चौड़ा, नाक लम्बी मगर सामने से थोड़ी फैली। आखें छोटी और तीखी। रंग कुछ ज्यादा ही सांवला है। शंकर बहुत उधमी है। मौका मिलते ही शैतानी करने से बाज नहीं आता। बहुत उलाहने लाता है। उसके कारण उसके मां-बप्पा और नानी बहुत परेशान रहती है। माँ चिंता करते हुए कहती है "किसी दिन गिर जाएगो, हाथ-पांव टूट जाएँगे, जिंदगी भर के लिए लूला-लंगड़ा हो जाएगो। कबूतरों के पीछे अपनी जिंदगी दांव पर लगाये है।" गाँव में छुआछूत और आचार-विचार की भावना ज्यादा होने पर भी, इतना परिवर्तन नहीं हो पाया है कि, शंकर स्कूल में अपने उच्च वरन सहपाठियों के साथ कक्षा में बैठकर पढ़ सकता है। परन्तु लड़के उसे चिढ़ते, अपनी भड़ास निकालने के लिए वे उस पर हंसते, उसका मजाक उड़ाते है। वे कहते हैं- "शंकर तू तो बड़ा होशियार है रे.....क्यों रे शंकर, तू किस चक्की का आता खाता है रे .....?" उनकी इन बातों पर दूसरे लडके हंसे. शंकर ने शर्म के साथ अपना सर झुका लिया। उसकी आँखों में गाँव और बस्ती की रोटियाँ और जूठन के टोकने घूमने लगे। उसे अपनी नानी पर गुस्सा आया। घर पर आकर उसने नानी को नींद से जगाया। उसने नानी की साडी पकडर खिंची कहा "नानी, तू इसी समय यहाँ से चली जा.....

मैं तुझे इस घर में नहीं रहने दूँगा ."...कोई और समय होता तो नानी हंसकर कहती "यह तो मेरा ही घर है। तुम जाओ तुम्हारे घर।" नानी का इस तरह से झाड़ू टोकना घर के सामने रख देने से शंकर दो बहत गुस्सा आता है। जैसे ही नानी घर में आती है तो उनकी शामत आजाती है "तुड़ाकर फेंक दूंगा।.. घर के सामने दिखाना नहीं चाहिए..." और सही में लात मार-मार कर वह झाड़ू टोकना तोडा देता। बांस की लम्बी मार की बारीक सींके बिखर जाती है। वह अपनी बेटी से कहती है "पढ़ाई करने से और स्कूल जाने से इस लड़के का दिमाग कहीं खराब तो नहीं हो गया" हिन्दू समाज व्यवस्था में 'जाति' ऐसी चीज है जो इन्सान के जन्म के साथ ही उससे जुड़ जाती है और इंसान के मरने के बाद भी नहीं जाती। चाहे गाँव हो या शहर, जातिभेद की भावना लोगों के ह्रदय में रहती ही है। फर्क बस इतना रहता है कि कुछ लोग अप्रत्यक्ष रूप से, अपने व्यवहार और कार्यकलापों से जातिभेद को मान्यता देते हैं और अपने उच्चता को हमेशा के लिए कायम रखना चाहते हैं। एक बार स्कूल के लड़कों ने शंकर के साथ कुश्ती का खेल खेलने का निर्णय लिया। जात-पांत मानने वालों के प्रति उसका मन आक्रोश से भरा हुआ था। उसने एक-एक लड़के को उठाया और पटकने लगा। उसे पिछले दिनों की बात याद आने लगी कि द्विवेदी ने कहा था "अरे, शंकर अंडा खाता है, मुर्गा खाता है, बकरा खाता है, इसलिए बड़ा पहलवान है।" इस बात पर त्रिवेदी और चतुर्वेदी ने – छी.....छी आंक थू। कहते हुए उसके सामने ठुका था। उस दिन छुप रहा। परन्तु आज वह उन लड़कों से यही कहा रहा था "मेरे सामने फिर थूको और अपने थूक को मेरे सामने चाटो तभी जाने दूंगा। नहीं तो, जाने दूंगा।"

दूसरे दिन इसकी शिकायत लड़कों ने मास्टर जी के पास कर दी। शंकर चुपचाप खड़ा रहा। हेडमास्टर जी ने ट्रांसफर सर्टिफिकेट बनाकर शंकर के हाथ में दे दिया। स्कूल से शंकर का नाम निकाल दिया गया। जातिभेद मानने वाले, अन्याय-अत्याचार, दमन शोषण करने वाला उच्चवर्ण समाज बहुत ताकतवर है शंकर अकेला निहत्था है। कैसे उनसे जीत सकेगा ? परन्तु उसने हार नहीं मानी। नानी रोती किलपती गाँव के 'पटेल' के पास गई। वे भी चुप रहे, अपने काम में वे व्यस्त रहे। नानी हाथ जोड़कर उनके विनंती करती रही।.. "पटेल जी, मास्टर जी को हुकुम दे दो, मेरे शंकर को स्कूल में बैठने दो। मेरो नाती पड़ने में हुशियार है। वह मैट्रिक की परीक्षा में अच्छे नंबर से पास होयगो, अची नौकरी करेगो.....वह जीवन भर आपको नाम लेगो. उस पर दया करो पटेल जी...." पटेल जी का मन नहीं पसीजा. शंकर की कक्षा दसवीं बोर्ड की पढ़ाई होती रही.

तब उसे डॉ. अम्बेडकर की बातें याद आई कि "डॉ. अम्बेडकर ने उन्हें पढ़ने का अधिकार दिलाया है। फिर उसे स्कूल से कोई नहीं निकाल सकता।" शंकर ने मास्टर जी की अपने सूझबूझ से मास्टर जी से बोर्ड की परीक्षा में बैठने की अनुमति प्राप्त कर ली। अपनी लगन और मेहनत के आत्मबल पर और संघर्ष से वह दसवीं की परीक्षा में वह प्रथम श्रेणी में अच्छे अंको से पास हुआ। एक दिन शंकर को स्कूल में बुलाकर बताया गया। "शिक्षा अधिकारी का पत्र आया है....अपने गाँव का शंकर गाँव में अपनी जाति का पहला मैट्रिक लड़का है। स्कूल और गाँव की ओर से उसका स्वागत-सम्मान किया जा रहा है। शंकर समझ गया, सफलता के लिए शिक्षा चाहिए तभी उनका संघर्ष सफल हो सकता है।"

बोध प्रश्न

- 'संघर्ष' कहानी की मुख्य घटनाओं की सूची बनाइए।

14.3.4 कहानी के प्रमुख पात्रों का चरित्र-चित्रण

संघर्ष कहानी के निम्नलिखित पात्र है –

शंकर – कहानी का मुख्य पात्र है। जो मध्यम कद काठी का चेहरा रोबीला तथा रंग सांवला है। हमेशा संघर्षशील बना हुआ है। अपनी जाति के लिए संघर्ष करता है।

माँ – शंकर की माँ जो हमेशा अपने बेटे के लिए चिंताग्रस्त रहती है कि शंकर कोई शैतानी करके कहीं हाथ पैर ना तुड़वा बैठे।

नानी – शकर की नानी जो शंकर के प्रति उसका दिल ममता से भरा रहता है। नानी जो गाँव के घरों में जा-जा कर जूठन इकट्ठा करती है। तथा वे गली तथा मोहल्लों की गंदगी को साफ़ करने का कार्य करती है।

मास्टर जी – जो दलितों पर अत्याचार करते हैं। जब शंकर के प्रति स्कूल के लड़कों ने मास्टर जी से शिकायत करी तो मास्टर जी ने छड़ी से उसके हाथ, पैर और पीठ की चमड़ी उधेड़ दी। पर छड़ी की मार से भी शंकर नहीं डरा क्योंकि उसे पता था, उसनें कोई गलत कार्य नहीं किया।

बोध प्रश्न

1. 'संघर्ष' के पात्रों की सूची बनाइए।

14.3.5 संघर्ष कहानी में सवांद –

संघर्ष कहानी में सवांद निम्न प्रकार से हैं।

- माँ चिंता करते हुए कहती है "किसी दिन गिर जाएगो, हाथ-पांव टूट जाएंगें, जिदंगी भर के लिए लूला लगंडा हो जाएगो। कबूतरों के पीछे अपनी जिंदगी दांव पर लगाये है।"

- लड़के सहनकर को चिढाते और भड़ास निकालने के लिए एक दिन कहा "शंकर तू तो बड़ा होशियार हे रे..... क्यों रे शंकर, तू किस चक्की का आटा खाता है रे .....?" उनकी इन बातों पर दूसरे लड़कें हंसे। शंकर ने शर्म के साथ अपना सर झूका लिया। उसका मन क्षोभ से मर गया। उसकी आँखों के सामने गाँव-बस्ती की रोटियां और जूठन के टोकने घूमने लगे।
- नानी अपने नाती (शंकर) के सामने अपनी गलती मानते हुए प्यार से कहा – "हां बेटा, अब मैं ऐसो नहीं करुँगी। तू गुस्सा मत हो.....मैं कपड़ा लता अच्छे से पहना करुँगी....ऐसी बुरी हालत में नहीं दिखूंगी" फिर वह शांत भाव से समझाते हुए शंकर से बोली "बेटा, मैंने शुरू से यही काम कियो है, मैं कौन हूँ। अब मैं यह काम छोड़ भी देऊ, तो क्या मेरी जात बदल जाएगी ? जो जात है, वह तो वही रहेगी। काम करो, कहलायेगें हम भंगी ही।"

14.3.6 कहानी का देशकाल और वातावरण

गाँव में बरसात के दिनों में भीगते हुए वह कीचड़ पानी में घूमता और गलगल, तीतर पकड़ने की फिराक में रहता। कबूतर पकड़ने के लिए वह माल गोदाम की छत पर चढ़ जाता, पुराने बंद घरो की मुडेरों पर चढ़ जाता। जिस दिन वह कुछ पकड़कर लाता – घर में अच्छी तरकारी हो जाती मगर साथ ही शंकर को गालियाँ भी खुब मिलती। माँ चिंता करते हुए कहती – "किसी दिन गिर जाएगों, हाथ-पांव टूट जाएँगे, जिंदगी भर के लिए लूला- लंगड़ा हो जाएगो, हाथ-पांव टूट जाएँगे, जिंदगी भर के लिए लूला-लंगड़ा हो जाएगो। कबूतरों के पीछे अपनी जिंदगी दांव पर लगाये है"

वातावरण

स्कूल के वातावरण में जाने से शंकर में एक आत्मविश्वास जाग जाता है। अक्सर उसने हेडमास्टर जी को कहते सुना है- "मध्यप्रदेश में और पुरे देश में यह सरकारी नियम बन गया है, शंकर को स्कूल से नहीं भगा सकते। नहीं तो, कानून हमें भगायेगा। शंकर को स्कूल में आने और पढ़ने का अधिकार मिल गया है। डॉ. अम्बेडकर ने देश के संविधान में उन्हें मूलभूत अधिकार दिये है।"

शंकर के घर में बिजली की लाइन नहीं है। रात में घास लेट तेल की चिमनी और जलाते है। बप्पा बड़ी उम्मीदों के साथ कहते हैं – "हमारा बेटा खूब पढाई कर रहा है। वह जरुर साहब बनेगा। वह जरुर बाबू की नौकरी करेगा।"

14.3.7 संघर्ष कहानी का उद्देश्य और जीवन दर्शन

नि:स्सेह 'संघर्ष' कहानी में लेखिका अपने उद्देश्य में सफल रही है। यह कहानी न केवल पठनीय है बल्कि अम्बेडकरवादी विचारधारा की दृष्टि से साहित्य के लिए 'संघर्ष' कहानी नींव की भूमिका जैसी कहानी साबित होगी। इस प्रकार यहाँ संघर्ष कहानी कथ्य एवं शिल्प दोनों ही दृष्टियों से साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान रखती है। इस कहानी का मुख्य उद्देश्य भी समतामूलक समाज की स्थापना करना रहा है।

बोध प्रश्न

- 'संघर्ष' में वर्णित परिवेश की विशेषताएँ बताइए।

14.4 पाठ सार

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप

संघर्ष कहानी के माध्यम से दलित समाज की परिस्थियों को लेखिका सुशीला टाकभौरे जी ने नायक 'शंकर' के बाल-जीवन, जातीय उत्पीडन को उजागर करने का प्रयास किया है। शंकर को जो उसके जाति के कारण चिढ़ाते है, शंकर को उन्हें सताने, तंग करने में सुख मिलता है। शंकर का अपनी नानी से मैला उठाने को मना करना, उससे लड़ना व् सूअर पालने और बेचने पर नानी के बाल पकड कर झंझोड़ना- ये कुछ ऐसे प्रसंग है, जो दलित के अंतर्द्वंद को बखूबी उभारते है। पुरानी पीढ़ी का अपने पेशे के प्रति मजबूरी और मोह व नई पीढ़ी का पुश्तैनी पेशे के खिलाफ विद्रोह, घृणा में जीत आखिर नई पीढ़ी की होगी, ऐसा तय है। इसी मत को लेखिका बार-बार इस कहानी के माध्यम से स्थापित करना चाहती है। समाज में अनेक शंकर आज इस संकट के भंवर मे फंसे है | वे शिक्षा के माध्यम से वहाँ से निकलने का प्रयास भी करते है, किन्तु उनकी एक गलती उन्हें अंधकार में ढकेल जा ले जाती है। जब-जब दलित अपने अधिकारों के प्रति सजग और संचेत होने का प्रयास करते है, उच्चवर्णियों की कुटिलता जाग जाती है। उनके सिहासन डोल उठते है। यही शंकर के साथ होता है। स्कूल में शिकायत पहुंचने पर, उसे स्कूल से निकाल दिया जाता है। विद्यार्थियों की आपसी झंझट का शिकार शंकर बन जाता है। यहां स्कूली व्यवस्था में अन्याय और जातिवाद की बू जाती है। जय प्रकाश कर्दम लिखते है- " दलितों की आर्थिक स्थिति खराब है कि वे न अच्छा खा सकते है, न पहन सकते है, न अपने बच्चों को समुचित शिक्षा दिला सकते हैं कि वे प्रतिस्पर्धा के माहौल में खड़े हो सकें। यदि किसी तरह वे ऐसा करना भी चाहे, तो समाज द्वारा अनेक प्रकार की बाधाएं मार्ग में खड़ी की जाती है। स्वर्ण अहंकार आज भी दलित छात्रों के मामले में द्रोणाचार्य की भूमिका निभा रहे हैं"।

14.5 आलोचना

संघर्ष कहानी संग्रह की प्रेरणा अम्बेडकरवादी विचारधारण से प्रेरित है। इस संग्रह की कहानी 'संघर्ष' के पात्र शंकर अपने जीवन से संघर्ष करता हुआ नजर आता है। मान- अपमान के घूंट पीकर, 'संघर्ष' कहानी का शंकर शिक्षा प्राप्त करता है। जिससे स्कूल तथा गांव की भेट से उसका स्वागत सम्मान किया जाता है। अत: प्रस्तुत कहानी शिक्षा का आदर्श उपस्थित कर, उससे समाज परिवर्तन का एक आवश्यक उपकरण बताने का प्रयास करती है। शिक्षा ही मात्र एक ऐसा साधन है, जो व्यक्ति और बिरादरी तथा समाज में होने वाले परिवर्तन को उद्घाटित कर सकती है। संघर्ष कहानी में आदर्श तथा यर्थाथ साथ-साथ चित्रित हुए है, जो कहानी के पात्रों तथा अन्य जनों के परिवर्तन का संदेश देती है। समाज में हो रहे परिवर्तन के मूल में डॉ. आंबेडकर और उनका संविधान है, न कि गांधी। इस यथार्थ को लेखिका ने प्रमुखता से चित्रित किया है। इस कहानी का पात्र (शंकर) अम्बेडकर की विचारधारा के साथ दिखाई देता है। प्रस्तुत कहानी में एक ओर समाज में हो रहे अन्याय, अत्याचार, छुआछूत तथा भेदभाव का पर्याय चित्रित हुआ है, तो दूसरी ओर शिक्षा से परिवर्तन की राह पर चल रहे पात्र, आदर्श को स्थापित कर रहे है।

सुशीला टाकभौरे ने अपनी कहानियों में जहां पीढ़िया दर पीढ़िया विद्रोह को प्रकट किया है, वहीं परंपरागत राह पर चल रही, वर्तमान पीढ़ी और उसके विद्रोह पर नई रहा अपनाते हुए, विकास की ओर अग्रसर होते हुए दिखाया है। संघर्ष कहानी का शंकर को लगता है कि उसकी नानी ऐसा गंदा काम क्यों करती है? वह उसे यह काम छोड़ने के लिए कहता है। लेखिका ने अन्याय, अत्याचार तथा भेदभाव के साथ बेकारी, जनसंख्या, रिश्वतखोरी जैसी समस्याओं को नई राह देने का प्रयास किया है। शिल्प की दृष्टि से यदि देखें तो 'संघर्ष' कहानी सरल व विवेचना पूर्ण भाषा में लिखी गई करनी है। कहानी का तथ्य तथा उद्देश्य में अच्छा समन्वय दिखाई देता है। यथास्थान दिए जाने वाले कथात्मक बिंबों एवं प्रतीकों ने, कथावस्तु के सम्प्रेषण को प्रभावशील बनाया है।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि कथ्य एवं शिल्प दोनों ही दृष्टियों से संघर्ष' कहानी समकालीन साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान रखती है। आशा है 'संघर्ष' कहानी को पढ़कर सामाजिक समता की ओर उन्मुख होंगे। संघर्ष कहानी एक चेतना के माध्यम में काफी उत्कृष्ट कहानी है।

14.6 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप

- संघर्ष कहानी के माध्यम से दलित समाज की समस्याओं को जान चुके हैं।
- दलित लेखिका सुशीला टाकभौरे का जीवन परिचय के बारे में जान चुके है।

- संघर्ष कहानी का सार व पात्रों को जान चुके है।
- संघर्ष कहानी दलित समाज के स्वानुभूति के आधार पर लिखी गई है।
- संघर्ष कहानी बाल जीवन के अंतर्द्वंद को बखूबी उजागर करती है।

14.7 शब्द सपंदा

1. मुखौटा -नकाब, छदम वेश, नकली चेहरा
2. संघर्ष - उद्देश्य को प्राप्त करना, प्रयासरत
3. शोषण -अत्याचार
4. सवर्ण -जो व्यवस्था में सम्मेलित समाज
5. परिवर्तन - बदलाव, एक वस्तु के बदले दूसरी वस्तु देना
6. यथार्थ - वाजिब, उचित
7. समस्या - कठिन या विकत प्रसंग
8. बेकरी -बेरोगरी, वह अवस्था या स्थिति जिसमें मनुष्य के हाथ में कोई काम धंधा नहीं होता है
9. आपमान -बेइज्जती, निरादर, तिरस्कार
10. समकालीन - वर्तमान कल या एक ही समय का

14.8 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिये।

1. संघर्ष कहानी का संक्षिप्त सार लिखिए।
2. सुशीला टाकभौरे का जीवन परिचय पर प्रकाश डालिए।
3. संघर्ष कहानी के उद्देश्य और जीवन दर्शन पर प्रकाश डालिए।
4. 'संघर्षी' कहानी अम्बेडकरवादी विचारधारा से परिपूर्ण कहानी है। कैसे प्रकाश डालिए।
5. 'शंकर' जातिवादी ढाँचे द्वारा किए जा रहे शोषण के विरुद्ध एक क्रान्ति की मशाल है कैसे, स्पष्ट किया।

खंड (ब)

लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिये।

1. संघर्ष कहानी के माध्यम से शंकर का चरित्र-चित्रण पर प्रकाश डालिए।
2. संघर्ष कहानी में संवाद पर प्रकाश डालिए।
3. संघर्ष कहानी का तात्विक विवेचन को समझाइए।

खंड (स)

I बहु विकल्पीय प्रश्न

1. संघर्ष कहानी किसके द्वारा लिखी गई है ? ( )

   (अ) ओमप्रकाश बाल्मीकि (आ) सुशीला टाकभौरे

   (इ) जय प्रकाश कर्दम (ई) मोहनदास नैमिषराय

2. संघर्ष कहानी किस विमर्श से संबंधित कहानी है ? ( )

   (अ) मुस्लिम विमर्श (आ) मार्क्सवादी

   (इ) दलित विमर्श (ई) वृद्ध विमर्श

3. 'संघर्ष' कहानी का मुख्य नायक कौन है ? ( )

   (अ) शंकर (आ) सूरज

   (इ) राम (ई) मोहन

4. शंकर ने किस कक्षा की परीक्षा पास किया ( )

   (अ) पाँचवी (आ) छटी

   (इ) सतवी (ई) मैट्रिक

II रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये।

1) 'संघर्ष' कहानी _____चेतना पर लिखी गई है।
2) सुशीला टाकभौरे के _____ कहानी संग्रह है।
3) शंकर _____वर्ष का बालक है।
4) नानी _____ जानवरों को पालती है।
5) सुशीला टाकभौरे का _____ प्रदेश में हुआ।
6) सुशीला टाकभौरे जी के पिता का नाम _____है।

7) सुशीला टाकभौरे की आत्मकथा _____है।

8) सुशीला टाकभौरे प्रथम उपन्यास_____है।

9) हमारे हिस्से का सूरज का प्रकाशन वर्ष _____है।

10) संघर्ष' कहानी _____ विचारधारा से प्रभावित है।

III) सुमेल कीजिये।

1.	अनुभूति के घेरे	(अ) 2014
2.	टूटता वहम	(आ) 2016
3.	संघर्ष	(इ) 1997
4.	जरा समझो	(ई) 1997

14.9 पठनीय पुस्तकें

1. संघर्ष कहानी संग्रह : डॉ. सुशीला टाकभौरे
2. दलित लेखन में स्त्री चेतना की दस्तक : संकलन शिवरानी प्रभात पुहाल
3. दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र : ओमप्रकाश वाल्मीकि
4. दलित साहित्य के वैचारिकी : डॉ. जयप्रकाश कर्दम
5. दलित साहित्य का समाजशास्त्र : हरिनारायण ठाकुर
6. सुशीला टाकभौरे की चुनी हुई कहानियाँ : अमन प्रकाशन कानपुर
7. दलित विमर्श की भूमिका : कवँल भारती
8. दलित विमर्श के आईने में : डॉ। जय प्रकाश कर्दम

इकाई 15: ओमप्रकाश वाल्मीकि: एक परिचय (कहानीकार)

इकाई की रूपरेखा

15.1 प्रस्तावना

15.2 उद्देश्य

15.3 मूल पाठ: ओमप्रकाश वाल्मीकि: एक परिचय

15.3.1 जीवन परिचय

15.3.2 रचना यात्रा

15.3.3 रचनाओं का परिचय

15.3.4 हिंदी साहित्य में स्थान एवं महत्व

15.4 पाठ सार

15.5 पाठ की उपलब्धियाँ

15.6 शब्द संपदा

15.7 परीक्षार्थ प्रश्न

15.8 पठनीय पुस्तकें

15.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रो ! पिछले पाँच-छः दशक से हिंदी साहित्य में बहुत सारे विमर्शों ने जन्म लिया इन्हीं विमर्शों में से एक प्रमुख विमर्श दलित विमर्श है। हिंदी साहित्य में दलित चेतना, दलित आंदोलन, दलित विमर्श, दलित साहित्य और विविध सामाजिक संघर्षों ने साहित्यकारों और सामाजिक चिंतकों, राजनीतिज्ञों और आलोचकों का ध्यान सबसे ज्यादा आकृष्ट किया है, क्योंकि दलित विमर्श ने पुराने साहित्यक मापदंडों के समस्त समीकरण बदल दिए हैं। दलित विमर्श ने हिंदी साहित्य को एक नई दिशा दी और परम्परागत रूढ़ियों को कटघरे में लाकर खड़ा कर दिया।

हिंदी साहित्य में जिन दलित लेखकों ने महत्वपूर्ण योगदान दिया है, उनमें चर्चित रचनाकार 'ओमप्रकाश वाल्मीकि' का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण है। ओमप्रकाश वाल्मीकि खुद एक दलित हैं। उनकी यात्रा दलित पीड़ित, शोषित बस्ती को पार करती हुई सवर्णों के अन्याय, अत्याचारों को झेलती हुई आगे बढ़ती है। साहूकार, सामंती, जमींदारों तथा सवर्णों की दर्दनाक पीड़ा को सहते हुए जीवन का अर्थ खोजते ओमप्रकाश वाल्मीकि आज़ादी के बाद भी दलित होने

की पीड़ा को झेलते रहे। ये अपने और अपनी जाति का क्षोभ समस्त संतापों और अभाव से संघर्ष करके वे उच्च कोटि के दलित साहित्यकार के रूप में जाने जाते हैं।

15.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो ! इस इकाई के अध्ययन के बाद आप-

- ओमप्रकाश वाल्मीकि के व्यक्तित्व से परिचित हो सकेंगे।
- उनकी रचनाओं से परिचित होंगे।
- उनके काव्य की विशेषताओं से अवगत हो सकेंगे।
- दलित कवियों में ओमप्रकाश वाल्मीकि के महत्व को जान सकेंगे।

15.3 मूल पाठ: ओमप्रकाश वाल्मीकि: एक परिचय

15.3.1 जीवन परिचय

आधुनिक दलित चिन्तकों में अपनी विशिष्ट पहचान बनानेवाले ओमप्रकाश वाल्मीकि का जन्म 30 जून 1950 को बरला मुजफ्फरनगर उत्तर प्रदेश में हुआ। उन्होंने हिंदी साहित्य से एम.ए. की उपाधि प्राप्त की। कहानी कला के क्षेत्र में आने से पहले ओमप्रकाश ने सबसे पहले काव्य के क्षेत्र में अपनी कलम चलाई और दो कविता संग्रह क्रमशः 'सदियों का सन्ताप' और 'बस बहुत हो चुका' प्रकाशित हुआ।

हिंदी साहित्य में जिन दलित लेखकों ने उल्लेखनीय लेखन कार्य किया है, उनमें चर्चित रचनाकार ओमप्रकाश वाल्मीकि का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण है। ओमप्रकाश वाल्मीकि खुद दलित हैं। उनकी यात्रा दलित, पीड़ित, शोषित बस्ती से निकलकर सवर्णों के अन्याय अत्याचारों को झेलती हुई आगे बढ़ती है। उनमें दलित जीवन की पीड़ाएँ असहनीय और स्वानुभूत है। वह साहूकार, सामंती, जमींदार तथा सवर्णों की दर्दनाक पीड़ा को सहते हुए जीवन का अर्थ खोजते रहें। ओमप्रकाश वाल्मीकि आज़ादी के बाद भी दलित होने की पीड़ा को झेलते रहे। अपने और अपनी जाति का क्षोभ समस्त संतापों और अभाव से संघर्ष करके वे उच्च कोटि के दलित साहित्यकार के रूप में पहचाने जाते हैं।

जैसा कि हम जानते हैं कि कोई भी साहित्यकार युग प्रवर्तक होता है। उसकी लेखनी के ज़रिये समाज में बहुत से नूतन परिवर्तन देखने को मिलते हैं। ओमप्रकाश वाल्मीकि का साहित्य दलित जीवन की दर्दनाक दास्तान प्रस्तुत करते हुए समकालीन समाज व्यवस्था के प्रति विद्रोह प्रकट कर अधिकार, समानता और न्याय की स्थापना करता है। ओमप्रकाश वाल्मीकि का सम्पूर्ण साहित्य सवर्ण के अन्याय, अत्याचारों एवं शोषण के विरूद्ध है। वह मानव मुक्ति के लिए आवाज़ उठाने वाला साहित्य है। हज़ारों वर्षों से दलित समाज को ज्ञान के प्रकाश से वंचित रखा गया था। दलित साहित्य इन शोषितों की इच्छा आकांक्षाओं का चित्रण करने वाला साहित्य है।

दलित लेखन के आन्दोलन को हम केवल साहित्यिक आंदोलन मात्र ही नहीं कहेंगे, बल्कि यह व्यापक रूप में सामाजिक, राजनैतिक और सांस्कृतिक आंदोलन कहे जा सकते हैं।

ओमप्रकाश वाल्मीकि 'चूहड़' जाति के थे। चुहड़ों की बस्ती का चित्रण कुछ इस प्रकार से किया गया है, उनका घर चंद्रमान तगा के घर से सटा हुआ था। उसके बाद कुछ परिवार मुसलमान जुलाहों के थे। तगा और जोहड़ी ने गाँव के बीच एक फासला कर लिया था, जिनके एक ओर तगाओं के पक्के मकानों की ऊँची दीवारें थी और दीवारों से समकोण बनती हुई झीवरों के दो-तीन परिवारों के कच्चे मकानों की दीवारें थी। डब्बोवाली जोहड़ी के किनारे पर चूहड़ों के मकान थे, चारों तरफ गंदगी भरी होती थी। तंग गलियों में घूमते सुअर, कुत्ते, रोज़मर्रा के झगड़े ऐसे वातावरण में ओमप्रकाश वाल्मीकि जी का बचपन बीता। उनका जन्म ऐसी जाति में हुआ जिसमें वर्ण-व्यवस्था के मुताबिक पढ़ने-लिखने की कोई इजाजत नहीं थी। सरकारी स्कूलों में इन लोगों को कोई घुसने नहीं देता था। अस्पृश्यता का बोल बाला था, इन लोगों की स्थिति कुत्ते-बिल्लियों से भी खराब थी। जानवरों को उतना बुरा नहीं समझा जाता था जितना कि इन चूहड़ों को तुच्छ समझा जाता था। यदि चूहड़े का स्पर्श हो जाए तो पाप लग जाता था ऐसी मान्यता थी, जो इंसानियत से गिरी हुई बातें थीं।

ओमप्रकाश वाल्मीकि का जन्म आज़ाद भारत में हुआ था। अंग्रेज़ों की गुलामी से मुक्त होकर भारत आज़ादी की हवा में सांस ले रहा था। परन्तु फिर भी इन दलितों की दयनीय अवस्था वैसी की वैसी ही थी। महात्मा गाँधी ने अस्पृश्यता उन्मूलन के लिए देश में सब सभी जाति-धर्म के लिए स्कूल के दरवाज़े खोलने का ऐलान किया था। फिर भी दलितों की बस्ती में यह हवा घुस नहीं सकी। दलित चूहड़ों की बस्ती में सेवक राम मसीही, जो ईसाई थे, मुहल्ले के बच्चों को पढ़ना-लिखना सिखाते थे। मास्टर सेवक राम मसीही जो ईसाई थे, मुहल्ले के बच्चों को पढ़ना-लिखना सिखाते थे। मास्टर सेवक राम मसीही के खुले, बिना कमरों के, बिना टाट चटाई वाले स्कूल में ओमप्रकाश वाल्मीकि ने अक्षर ज्ञान का आरम्भ किया। बाद में वे बरला के प्राइमरी स्कूल में पढ़ने लगे। स्कूल में उनके साथ कोई भी अच्छा व्यवहार नहीं करता था। ऊँचे जाति के बच्चे उन्हें 'चूहड़े कह कर पुकारते थे' भारत देश को स्वतंत्रता मिल चुकी थी। गाँधी जी के अछूतो का उद्धार की आवाज़ सुनाई पड़ने लगी। सरकारी स्कूलों के दरवाज़े अछुतों के लिए भी अब खुलने लगे थे। किन्तु जनसामान्य की मानसिकता में कोई विशेष बदलाव नहीं आया था। स्कूल में दूसरे बच्चों से दूर बैठना पड़ता था। वह भी ज़मीन पर, स्कूल में प्यास लगने पर हैण्डपम्प के पास किसी ऊँची जाति के बच्चे के आने का इन्तज़ार करना पड़ता था। यदि गलती से किसी अछूत के बच्चे ने हैण्डपम्प स्पर्श भी किया तो बवेला खड़ा हो जाता था। ओमप्रकाश वाल्मीकि का बचपन बड़ा ही संघर्षशील और कष्टदायक बीता था। इसी अनुभूति ओमप्रकाश वाल्मीकि ने सोचने नहीं देते इस कविता में व्यक्त किया है

''चायघरों में बैठकर
जब करते हो दार्शनिक विवेचन
समाज व्यवस्था का
बचपन के दिन
जब प्यास लगने पर
खड़ा रहना पड़ता था घण्टों
किसी कुएँ या नल के पास
करनी पड़ती प्रतीक्षा
किसी जन्मना श्रेष्ठ के आने की''

इसी पीड़ा को सहते हुए वे अपने तथा अपनी जाति के दर्द को लेखनी के माध्यम से वर्तमान के आईने में प्रतिबिम्बित करते हैं। अन्याय, अत्याचार के विरूद्ध लिखने का जोश वाल्मीकि जी में बचपन से ही था। इसलिए उन्होंने जीवन में कभी हार नहीं मानी। विभिन्न प्रकार का कशमकश भरा उनका जीवन विभिन्न अभावों, छल-छलावे, अपमान की पीड़ा को झेलते हुए दलित चेतना का मार्ग प्रशस्त करता है।

बोध प्रश्न

1. ओम प्रकाश वाल्मीकि किस जाति परिवार से थे?

15.3.2 रचना यात्रा

आज़ादी के बाद भी दलितों पर अनेक तरह के होने वाले अन्याय के खिलाफ ओमप्रकाश वाल्मीकि ने अपनी लेखनी चलाई। दलित समस्याओं पर एक लेख 'नवभारत टाईम्स' (मुंबई) में छपवाया था। इसी तरह नवभारत, युगधर्म, नई दुनिया आदि प्रमुख पत्रिकाओं में उन्होंने अपनी सार्थक कविताएँ लिखीं थी। चंद्रपुर के साप्ताहिक 'जनप्रतिनिधि' में उन्होंने स्तंभ लेखन भी किया। सार्थक कविताओं के साथ-साथ ओमप्रकाश वाल्मीकि ने विभिन्न पत्र पत्रिकाओं में लेख तथा कविताएँ लिखकर प्रकाशित कीं।

वैसे देखा जाए तो सृजनशीलता में सबसे पहले आरम्भ उन्होंने कविताओं से किया था। कहानी लिखने का आरम्भ उन्होंने 1978-1979 के आसपास शुरू किया था। कहानी लेखन की प्रेरणा उन्हें भदंत आनंद कौशल्यायन जी से मिली। ओमप्रकाश वाल्मीकि जी भदंत आनंद की प्रेरणा से राहुल सांस्कृत्यायन की बहुत ही अनुवादित बौद्ध धर्म की पुस्तकों का अध्ययन किया। और इन्हीं ग्रंथों एवं व्यक्तियों से प्रेरणा लेकर ओमप्रकाश वाल्मीकि ने अपने साहित्य की रचना करना शुरू किया था।

ओमप्रकाश वाल्मीकि की कविताओं, कहानियों तथा अन्य रचनाओं के अनुवाद हिंदी के साथ-साथ पंजाबी, उर्दू, मराठी, बंगाली, गुजराती भाषाओं के अतिरिक्त अंग्रेज़ी में भी हो चुके हैं। हिंदी साहित्य में रचित उनकी कुछ महत्वपूर्ण रचनाएं निम्नलिखित हैं-

काव्य संग्रह :-

सदियों का संताप - 1989

बस्स !! बहुत हो चुका - 1997

अब और नहीं - 2009

कहानी संग्रह :-

घुसपैठिए - 2003

सलाम - 2004

आत्मकथा :-

जूठन - 1996

आलोचना :-

दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र - 2001

विविध लेखन :-

संकलित कवि

दलित साहित्य के प्रमुख हस्ताक्षर

पाठ्यपुस्तकों में लेखन कार्य :-

इंदिरा गाँधी मुक्त विश्वविद्यालय के लिए लेखन कार्य

अनुवाद - Why I am not Hindu (लेखक - कांचा इलैया) का हिंदी अनुवाद

संपादन :-

(1) प्रज्ञा साहित्य के दलित साहित्य विशेषांक का अतिथि संपादन

(2) दलित हस्तक्षेप (रमणिका गुप्ता)

(3) तीसरा पक्ष - सलाहकार संपादक

नाट्य मंचन :-

मेघदूत नाट्य संस्था, चंद्रपुर (महाराष्ट्र)

लगभग 60 नाटकों का सफल दिग्दर्शन कर उत्कृष्ट अभिनय भी किया।

नाटक मंचन :-

आधे अधूरे

दुलारी बाई

हिमालय की छाया

सिंहासन खाली है

पुरस्कार / सम्मान :-

ओमप्रकाश वाल्मीकि अपने व्यक्तित्व से साहित्य और समाज में हमेशा जुड़े रहे। इसके कारण उन्हें विविध संगठन एवं संस्थानों से साहित्य सेवा और सामाजिक दायित्व के लिए विविध पुरस्कार और सम्मान से नवाज़ा गया। महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश के साथ-साथ देश के विभिन्न भागों में ओमप्रकाश वाल्मीकि ने अपनी कविताओं का पाठ किया। नाटकों में भी उन्होंने स्वयं अभिनय और निर्देशन भी किया है। साहित्य के क्षेत्र, अभिनय तथा सामाजिक प्रतिबद्धता के लिए उन्हें बहुत से पुरस्कारों से सम्मानित किया गया है। जो इस प्रकार हैं।

1. प्रथम हिंदी दलित साहित्य सम्मेलन, नागपुर 1993 में अध्यक्ष रहे
2. 28वें अस्मिता दर्शन साहित्य सम्मेलन, चंद्रपुर 2008 अध्यक्ष रहे
3. डॉ. बाबा साहेब अम्बेडकर राष्ट्रीय पुरस्कार - 1993
4. उत्कृष्ट अभिनय सम्मान 1994
5. परिवेश निर्देशक - 1995
6. सर्वोत्तम निर्देशक - 1995
7. जयश्री सम्मान - 1996
8. प्रथम दलित लेखक साहित्य सम्मेलन 1993 नागपुर के अध्यक्ष पद का सम्मान
9. दलित साहित्य के प्रथम हस्ताक्षर सम्मान 1999
10. प्रज्ञा-साहित्य पुरस्कार 1999
11. अभिनय और निर्देशन के लिए बहुत सारे पुरस्कार
12. कथाक्रम सम्मान 2001
13. न्यु इंडिया बुक पुरस्कार 2004
14. आठवाँ विश्व हिंदी सम्मेलन 2007
15. न्यूयार्क, अमेरिका सम्मान 2007
16. साहित्य भूषण सम्मान 2008

बोध प्रश्न

ओमप्रकाश वाल्मीकि को 'परिवेश सम्मान' किस वर्ष में मिला था?

15.3.3 रचनाओं का परिचय

हिंदी दलित कविता की विकास यात्रा में ओमप्रकाश वाल्मीकि का महत्वपूर्ण स्थान है। स्वयं दलित जाति से होने के कारण उन्होंने दलितों का दर्द, अपमान, छुआछूत की भावना, समाज व्यवस्था पर विरोध, मनुष्य के प्रति अपने और अपने समाज एवं परिवेश के प्रति सचेत होकर निर्भयता के साथ अतीत की पीड़ा को और वर्तमान की चुनौतियों को स्वीकार करके हिंदी दलित कविताओं के माध्यम से समाज के प्रति प्रतिबद्धता को अभिव्यक्ति प्रदान की है।

ओमप्रकाश वाल्मीकि के काव्य में विविध बिन्दु

ओमप्रकाश वाल्मीकि ने अपनी कविताओं में निम्न बिन्दुओं पर बहुत गंभीरता से प्रभाव डाला है। जो निम्नलिखित है-

1. समकालीन आशय
2. समकालीन युग बोध
3. समकालीन समाज व्यवस्था
4. जाति के प्रति क्षोभ
5. सामाजिक सांस्कृतिक विद्रोह

1. समकालीन आशय:- ऐसा माना जाता है कि कविता मूलतः युग संदर्भों की देन होती है। उसमें अतीत के चित्रण और भविष्य के संकेत भी युग संदर्भ से जुड़कर ही आते हैं। समकालीनता से आशय यह है कि अपने समय के प्रति ईमानदार होना, अपने समय के प्रति व्यक्ति तभी ईमानदार होता है, जब वह संकटों की परवाह किये बिना समय के क्रूर यथार्थ से अभेद सम्बंध स्थापित कर लेता है। और यथार्थ की ज्वाला में जलता हुआ अदभुत साहस के साथ समय को चुनौती भी देता है। जैसा ओमप्रकाश वाल्मीकि ने लिखा है-

"उनके हाथों में होंगे
तमंचे, बंदूक, लाठी, डंडे हथगोले
साथ होगी पुलिस, सेना शक्ति
और तुम निहत्थे/ मारे जाओगे
बचकर भागने से पहले ही
तुम्हारी चुप्पी ही हो जायेगी खड़ी
तुम्हारा रास्ता रोककर"

2. समकालीन बोध:- ओमप्रकाश वाल्मीकि की कविता में समकालीन बोध के दर्शन होते हैं। भारतीय मानस में दलितों के प्रति कितनी घृणा है और वे दलितों को किस दृष्टि से देखते हैं। दलितों को मनुष्य न मानने की इस दूषित मानसिकता के कारण देशभर में दलितों के प्रति भेदभाव और अत्याचार की घटनाएँ हो रही है। हिंदी दलित कविता के समकालीन बोध की यह

दृष्टि दलित कवियों की कविता में नई भाषा और शिल्प के साथ वैचारिक समता को प्रदर्शित करती है।

3. समकालीन समाज व्यवस्था:- भारत में सदा से ये परंपरा रही है कि ऊँची जातियाँ दलितों के मानवाधिकारों का हनन करती आई हैं। भारतीय समाज में दलितों या अछूतों की कहानी सदियों से चलती आ रही है। हिन्दू धर्म की चतुर्थ वर्ण व्यवस्था में अछूतों को अवर्ण, अन्यज, अतिशूद्र अथवा पंचम आदि कहा जाता है। अर्थात ये दलित चतुर्थ वर्ण व्यवस्था में भी नहीं आते इसलिए इन्हें पंचम भी कहा जाता है। 'ओमप्रकाश वाल्मीकि हिन्दू धर्म की जाति व्यवस्था पर व्यंग्य करते हुए लिखते हैं-

"छूना भी जिन्हें पाप
हिस्से में जिनके सिर्फ
उपेक्षा और उत्पीड़न
जाति कही जाए जिनकी नीच
आप बता सकते हैं"

4. जाति के प्रति क्षोभ:- ओमप्रकाश वाल्मीकि की रचनाओं में दलित प्रतिबद्धता का एहसास होता है। इनकी कविताओं में काव्य दृष्टि साफ-साफ दिखाई पड़ती है। जाति के प्रति क्षोभ भी कवि ने अपने काव्य में प्रकट किया है। जाति व्यवस्था ने सामाजिक संवेदना को ही रौंद डाला है। उनका कहना है कि जाति, धर्म पुराने पाखंड कर्मकाण्ड में से बाहर निकलकर ही दलितों का उद्धार होगा।

5. सामाजिक सांस्कृतिक विद्रोह:- ओमप्रकाश वाल्मीकि की कविताओं में सामाजिक और सांस्कृतिक विद्रोह उभरकर आता है। उनकी कविताओं में एक ओर अपनी जाति तथा जाति समूह की पीड़ा को सशक्त आवाज़ देने की कोशिश की गई है।

ओमप्रकाश वाल्मीकि के कहानी साहित्य की विशेषताएँ

ओमप्रकाश वाल्मीकि हिंदी दलित कहानी के प्रमुख हस्ताक्षर माने जाते हैं। उनकी कहानियाँ दलित जीवन की संवेदनशीलता और अनुभवों का दस्तावेज़ हैं। दलित की दर्दनाक पीड़ाव्यथा जिजीविषा 'छटपटाहट सरोकार इनकी कहानियों में साफ-साफ दिखाई देता है।

ओमप्रकाश वाल्मीकि के कहानी साहित्य की कुछ मुख्य विशेषताएँ निम्नलिखित हैं :-

1. अस्तित्व बोध :-

दलित कहानीकार ओमप्रकाश वाल्मीकि पर दलितों के मसीहा बाबा साहब डॉ॰ भीमराव अम्बेडकर के विचारों का प्रभाव है। क्योंकि वे स्वयं दलित थे। अम्बेडकर का यह मानना था कि शिक्षा के बिना किसी भी जाति या समुदाय का विकास सम्भव नहीं है।

शिक्षा का महत्व अब दलित कहानियों में भी उभरता हुआ देखा जा सकता है। दलितों में अस्तित्व बोध की भावना का विकास यानी युग की माँग के अनुरूप और अपेक्षित परिवर्तन करना होगा।

2. अधिकारों के लिए संघर्ष :-

दलितों को अपने उचित अधिकारों के लिए भी संघर्ष करना पड़ता है। सवर्ण वर्ग, दलितों का उत्पीड़न करते हैं, उनकी प्रताड़ना करते हैं, उन्हें बड़ा ही तुच्छ समझा जाता है। ओमप्रकाश की 'घुसपैठिए' कहानी में दलित छात्र 'सुभाष' सोनकर के साथ भी कुछ ऐसा ही व्यवहार होता है।

3. न्याय के लिए आंदोलन :-

भारतीय समाज व्यवस्था में अधिकार का हनन और अपहरण कोई आश्चर्य कर देने वाली घटना नहीं है। जहाँ हज़ारों सालों से दलितों का दलन तथा दमन हुआ है। जब वहाँ उनके अधिकारों की रक्षा हो तो आश्चर्य तो होगा। भारत के संदर्भ में और दलितों की दृष्टि से 20वीं सदी की सबसे महान घटना है भारतीय संविधान का निर्माण। संविधान ने जैसे ही सबको उन्नत्ति का समान अधिकार दिया, सामाजिक परिवर्तन का उद्घाटन वहीं से आरम्भ हुआ। स्त्री हो या पुरूष, आदिवासी हो या बंजारा और स्वामी हो या मज़दूर सर्वहारा प्रत्येक को संविधान ने समानाधिकार दिया है।

ओमप्रकाश वाल्मीकि की घुसपैठिए, प्रमोशन, दिनेशपाल जाधव उर्फ दिग्दर्शन आदि कहानियों में दलित अपने अधिकार के लिए संघर्ष करके न्याय के लिए आन्दोलन करता हुआ दिखाई देता है।

4. प्रतिशोध की मानसिकता :-

दलित कहानी या साहित्य में मूलतः सदियों से प्रताड़ित दलित और अपमानित आत्मा की आवाज़ है, जिसे चाहकर भी दबाया नहीं जा सकता है। इनमें दलितों के जीने की अदम्य जिजीविषा को शक्ति और संवेदना के साथ उत्तेजित करना चेतना का आधार है। इसलिए ओमप्रकाश वाल्मीकि की दृष्टि में ये सदियों के संताप की कहानियाँ हैं।

5. अस्मिता की रक्षा और 'ना' कहने का साहस :-

आज की दलित कहानी का सशक्त और सर्वाधिक सकारात्मक पहलू है दलित पात्रों में उभरता अस्मिता का सवाल और उसकी रक्षा करना। आरंभ की दलित कहानियों की तुलना में वर्तमान दलित कहानी में विदित अस्मिता को उत्तरोत्तर बढ़ता हुआ दिखाई देता है। सदियों से पीड़ित और अपमानित जीवन जीने वाले दलितों में एक ऐसी पीढ़ी उभर रही है, जो शिक्षा के परिणामस्वरूप 'ना' कहने का साहस कर रही है। जर्जर, अमानवीय और अपमानजनक

परम्पराओं में निर्वाह के लिए असहमति दर्शानेवाले दलित पात्रों का सृजन आज की कहानी की महत्वपपूर्ण उपलब्धि मानी जा सकती है।

अतः हम यह कह सकते हैं कि ओमप्रकाश वाल्मीकि का कहानी संसार सामाजिक मान्यताओं को नकारते हुए जीवन के विभिन्न पक्षों को चयनित करता हुआ दलित कहानी को एक नया मोड़ देता है।

बोध प्रश्न

'ना' कहने का साहस से क्या अभिप्राय है?

15.3.4 हिंदी साहित्य में स्थान एवं महत्व

ओमप्रकाश वाल्मीकि के साहित्य में निहित सामाजिक न्याय और दलित चेतना का चित्रण न केवल दलित साहित्य के लिए बल्कि हिंदी साहित्य की एक बड़ी उपलब्धि कही जा सकती है। उनकी रचनाओं में अपने अधिकार के प्रति संघर्ष, समाज में क्रांति की पहल एवं वर्ण व्यवस्था के अमानवीय बंधनों ने सदियों से दलितों के भीतर उत्पन्न हुई हीन भावना और उस भावना के विरूद्ध उठी आवाज़ को स्पष्ट रूप में अभिव्यक्ति मिली है। ओमप्रकाश वाल्मीकि का सम्पूर्ण साहित्य स्वतंत्रता, समता, बंधुत्व और न्याय की स्थापना के लिए कटिबद्ध है।

हम कह सकते हैं कि ओमप्रकाश वाल्मीकि का संपूर्ण साहित्य लोगों में चेतना पैदा कराने वाला क्रांतिकारी साहित्य है। अन्याय, अत्याचार और शोषण के विरोध में खड़ा होने वाला साहित्य है। उनके साहित्य का आधार ही मनुष्य है। इनके साहित्य में मनुष्य के ऊपर हो रहे उत्पीड़न, अत्याचार और असमानता के खिलाफ विरोध है। उनका सम्पूर्ण साहित्य जाति व्यवस्था की जटिल संरचना का बोध कराता है। उनका साहित्य मानव को जगाने का साहित्य है। ओमप्रकाश वाल्मीकि एक ऐसे साहित्यकार हैं, जिनके जीवन-दर्शन में सम्पूर्ण मानव समाज का विकास निहित है।

बोध प्रश्न

1. ओमप्रकाश वाल्मीकि का दलित साहित्य किस प्रकार का साहित्य है?

15.4 पाठ सार

ओमप्रकाश् वाल्मीकि हिंदी दलित साहित्य के उन श्रेष्ठ साहित्यकारों में से एक है, जिन्होंने अपने जीवन के प्रत्येक क्षण को बहुत ही संघर्ष के साथ बिताया है। ओमप्रकाश का बचपन से ही अपनी और अपनी जाति के प्रति विशेष लगाव था। उनका जन्म वर्णव्यवस्था की आखिरी पायदान में आने वाली चूहड़-भंगी जाति के परिवार में हुआ था। उनके दलित जीवन की पीड़ाएँ असहनीय और अनुभूति से पूर्ण हैं।

'बरला' का यह दलित शिक्षा प्राप्त कर अपनी अनुभूति के स्तर से साहित्य तक पहुँचा। सदियों से दलित, शोषित और पीड़ित समाज को अपने सामाजिक अधिकार समानता, न्याय और बंधुत्व के लिए स्वतंत्रता के पक्षधर डॉ० बाबा साहब अंबेडकर अपने जीवन पर्यन्त लड़ते रहे।

ओमप्रकाश वाल्मीकि को जीवन और लेखन की प्रेरणा बाबा साहब डॉ० अम्बेडकर की विचारधारा से प्राप्त हुई। वे अम्बेडकर की विचारधारा से प्रभावित होकर उन्हें अपना और अपने साहित्य का प्रेरणा स्रोत मानते हैं। समकालीन समाज के भोगे हुए यथार्थ का चित्रण उन्होंने अपने काव्य के माध्यम से किया है।

आज़ादी के बाद मोहभंग से त्रस्त अपनी जाति की विवशता चित्रण, कुंठा, अलगाव, मानसिक द्वंद पारिवारिक घुटन, तड़प, संबंधों में तनाव तथा मानवीय रिश्तों के संदर्भों को पारिभाषित करके आम आदमी की तुलना में दलितों के दर्द को आवाज़ देकर दलित साहित्य को नई पहचान दी है। उनका साहित्य अन्याय, अत्याचार और शोषण के विरूद्ध आवाज़ है। उनकी कविताओं में सदियों का संताप है।

ओमप्रकाश वाल्मीकि अपने विचारों को प्रखर एवं प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करने में सिद्धहस्त हैं। हिंदी दलित साहित्य में नई जान फूककर उसे हिंदी के पारंपरिक साहित्य की मुख्य धारा में लाने उन का प्रयास बहुत ही सराहनीय है।

15.5 पाठ की उपलब्धियाँ

छात्रो! इस इकाई के अध्ययन में निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए।

1. ओमप्रकाश वाल्मीकि आज दलित लेखकों में एक सिद्धहस्त लेखक कहे जाते हैं।
2. कथाकार ओमप्रकाश वाल्मीकि का प्रारंभिक दलित लेखन मुख्यतः कविता के माध्यम से प्रारम्भ हुआ है।
3. समकालीन हिंदी साहित्य में दलित चेतना की दस्तक देने वाले ओमप्रकाश वाल्मीकि ने दलित साहित्यकारों की प्रथम पंक्ति में अपना स्थान बनाया है।
4. ओमप्रकाश वाल्मीकि का साहित्य अन्याय अत्याचार और शोषण के विरूद्ध एक आवाज़ है।
5. उनकी कविताओं में सदियों का संताप दिखाई देता है।

15.6 शब्द संपदा

1.	चेतना	-	बुद्धि, ज्ञानात्मक मनोवृत्ति
2.	विमर्श	-	किसी बात का विवेचन या विचार
3.	सशक्त	-	मज़बूत, शक्तिशाली, बलवान
4.	शोषित	-	दबाया हुआ, क्षीण किया हुआ
5.	संताप	-	दुःख, कष्ट, व्यथा, ग्लानि

6. अस्पृश्यता - अछूतपन
7. अक्षर ज्ञान - प्रारम्भिक पढ़ाई
8. चूहड़े - एक जाति (भंगी)
9. संघर्षशील - संघर्ष करने वाला
10. सर्वण - समान वर्ण का

15.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खण्ड (अ)

दीर्घ प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. ओमप्रकाश वाल्मीकि के व्यक्तित्व की चर्चा कीजिए।
2. ओमप्रकाश वाल्मीकि के साहित्य की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।
3. ओमप्रकाश वाल्मीकि के रचना संसार की चर्चा कीजिए।

खण्ड (ब)

लघु प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 250 शब्दों में दीजिए।

1. ओमप्रकाश वाल्मीकि के काव्य की विशेषताएँ बताइए।
2. ओमप्रकाश वाल्मीकि की कहानियों की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।
3. ओमप्रकाश वाल्मीकि का हिंदी दलित साहित्य में क्या स्थान है? चर्चा कीजिए।

खण्ड (स)

। सही विकल्प चुनिए

1. ओमप्रकाश वाल्मीकि किस जाति के थे?

(क) जुलाहा (ख) चूहड़ (ग) चमार (घ) झीवर

2. ओमप्रकाश वाल्मीकि का जन्म कब हुआ था?

(क) 1940 (ख) 1945 (ग) 1949 (घ) 1950

3. ओमप्रकाश वाल्मीकि के गाँव का नाम क्या था?

(क) बालापूर (ख) जामपूर (ग) बरला (घ) राजापूर

।। रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1. ओमप्रकाश वाल्मीकि को परिवेश सम्मान वर्ष ..... में मिला।

2. अभिनय सम्मान वर्ष ..... में मिला।

3. सदियों का संताप का प्रकाशन वर्ष ..... है।

।।। सुमेल कीजिए

(1) अब और नहीं	(क) कहानी संग्रह
(2) सलाम	(ख) काव्य संग्रह
(3) जूठन	(ग) आलोचना
(4) दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र	(घ) आत्मकथा

15.8 पठनीय पुस्तकें

(1) हिंदी कथा साहित्य में दलित विमर्श - दिलीप मेहरा, क्लासिकल पब्लिशिंग कम्पनी - न्यू दिल्ली

(2) ओमप्रकाश वाल्मीकि के साहित्य में दलित चेतना- डॉ० चंद्रभान सुखाडे, रोली प्रकाशन, कानपूर

(3) हिंदी दलित कथा-साहित्य रजत रानी 'मीनू' अवधारणाएँ और विधाएँ अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स - नई दिल्ली

इकाई 16: बैल की खाल : आलोचना

इकाई की रुपरेखा

16.1 प्रस्तावना

16.2 उद्देश्य

16.3 मूल पाठ – बैल की खाल : आलोचना

16.3.1 कथानक

16.3.2 कहानी का उद्देश्य

16.3.3 चरित्र-चित्रण

16.3.4 भाषा शैली

16.4 पाठ सार

16.5 पाठ की उपलब्धियाँ

16.6 शब्द संपदा

16.7 परीक्षार्थ प्रश्न

16.8 पठनीय पुस्तकें

16.1 प्रस्तावना

आप जानते हैं कि ओमप्रकाश वाल्मीकि ने आत्मकथा 'जूठन' लिखकर तहलका मचा दिया था। वास्तव में कविता के साथ साथ कथा लेखन में भी इनका कोई मुकाबला नहीं। इनके कई कहानी संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं– 'सलाम'(2000), घुसपैठिये'(2003) और 'छतरी'(2013)। और बहुत सी कहानियाँ पत्र-पत्रिकाओं में भी प्रकाशित हुईं। वाल्मीकि कथा एवं आत्मकथा लेखन की एक बड़ी परंपरा अपने पीछे छोड़ गये हैं। ओमप्रकाश वाल्मीकि की कहानियाँ उनके भोगे और जिए हुए जीवन के सच का बयान हैं। ओमप्रकाश वाल्मीकि के 'सलाम' कहानी संग्रह में कुल 14 कहानियाँ हैं जिनमें से एक है - बैल की खाल। इस इकाई में आप इस कहानी को कथाकार की प्रतिनिधि कहानी मानकर पढ़ेंगे। यहाँ कहानी के कुछ अंश ही आपको उदाहरण के लिए मिलेंगे, पर अच्छा होगा आप इस कहानी को पहले पढ़ लें। दलित कहानी में और ओम प्रकाश वाल्मीकि की कहानियों में भी भाग्यवाद, पुनर्जन्म, परंपराएँ, रूढ़ियाँ, दासता, अंधविश्वास, जातिवाद के प्रति आक्रोश, उच्चता-निम्नता, जातीय संकीर्णता इत्यादि के विरुद्ध आवाज़ उठती दिखाई देती हैं। ये कहानियाँ जातिगत प्रश्नों, शैक्षिक वंचनाओं, आर्थिक शोषण, सामाजिक शोषण, धार्मिक बहिष्कार, सांस्कृतिक कूप-मण्डूकता, राजनीतिक

अज्ञानता, चेतना मूलक दिशा देने, जड़वादी सामंती मानसिकता पर प्रहार और तिरस्कार के विरुद्ध आवाज़ बुलंद करती दिखाई पड़ती हैं। दलित जीवन की व्यथा, छटपटाहट, सरोकार इस कहानी में भी साफ साफ दिखाई देती हैं। ओम प्रकाश वाल्मीकि ने दबे, कुचले, शोषित पीड़ित जन समूह को मुखरता देकर उनके इर्द गिर्द फैली विसंगतियों पर भी चोट की है।

'बैल की खाल' कहानी किसी बैल की कहानी नहीं बल्कि दो दलितों –काले और भूरे – की कहानी है जो सवर्ण समाज के द्वारा कष्ट पा रहे हैं आपको 'बैल की खाल' कहानी को पढ़ते समय यह गौर करना होगा कि इस कहानी में इन अनेक लक्षणों में से कितने दिखाई देते हैं। आपको केवल इतना ही नहीं करना होगा बल्कि कहानी से दलित चेतना के उदाहरण छाँट कर रख देना होगा। इसलिए इसे प्रेमचंद की 'दो बैलों की कथा' जैसी न मानकर उनकी दूसरी कहानी 'कफन' से तुलनीय मानकर भी पढ़ना होगा। तभी यह माना जाएगा कि आपने कहानी को पढ़ लिया है और समझ भी लिया है।

16.2 उद्देश्य

इस कहानी के पाठ के अध्ययन के उपरांत आप-

- 'बैल की खाल' कहानी का कथानक जान सकेंगे।
- कहानीकार की कथा संवेदना और दलित प्रश्नों को जान सकेंगे।
- हिन्दू वर्ण-व्यवस्था में मौजूद अस्पृश्यता, असमानता और जाति की ऊंच नीच को देख सकेंगे।
- दलित जीवन की आकांक्षा और उम्मीद को रेखांकित कर सकेंगे।
- हिन्दू सामाजिक व्यवस्था के गुण दोषों की परख कर सकेंगे।

16.3 मूल पाठ : बैल की खाल : आलोचना

16.3.1 कथानक –

दलित साहित्य के विशेष अध्ययन के अंतर्गत आप ओम प्रकाश वाल्मीकि की प्रतिनिधि कहानी 'बैल की खाल' पढ़ने जा रहे हैं। यह कहानी न केवल दलित जीवन की कहानी है बल्कि वर्तमान समय की सच्चाई भी है। गरीब और वह भी दलित समाज में आज भी दुहरी मार झेलता है। एक ओर तो वह मुफलिस होता है दूसरी ओर समाज के ऊंची जाति के लोग उन्हें अपमानित करते हैं। उसका शोषण करते हैं। इस कहानी में है तो एक मरे हुए बैल और उसकी खाल खीचने की कहानी पर वास्तव में यह कहानी 'खाल' की नहीं उन दो खाल खींचने वालों की है जो गरीब और दलित हैं। मरे हुए बैल की खाल निकालकर किसी तरह गुजर बसर कर रहे मजदूर वर्ग के दो दलित किस प्रकार धनी मानी सम्मानित और तथाकथित उच्च जाति के शोषण और यातना के लगातार शिकार होते हैं, यहाँ यह चित्रण है। यह उनकी आदमीयत की भी कहानी है। यह उनकी अनेक चिंताओं की कहानी है। यह भी आपको गौर करना होगा। बैल की खाल कहानी में काले और भूरे गाँव में मरे

हुए जानवरों को उठाकर गाँव के बाहर ले जाते हैं। वे वहाँ बड़ी सावधानी से उनकी खाल उतारकर उसे शहर ले जाकर बेच देते हैं। यही इनका काम धंधा है। पंडित बिरिज मोहन का बैल मर जाता है। यह कहानी का आरंभ है और अंत क्या है ? आप अब कहानी का पाठ करेंगे। यहाँ जो कहानी दी जा रही है वह पूरी कहानी नहीं बल्कि उसका अंश है। इसमें सभी वाक्य मूल कहानी के हैं। कुछ भी अपनी तरफ से जोड़ा नहीं गया है।

बोध प्रश्न

- यह किसकी कहानी है? इस कहानी के तीन पात्रों के नाम क्या हैं ?
- खाल खींचना एक मुहावरा भी है, क्या यहाँ वही अर्थ है या कोई दूसरा ?

बैल बूढ़ा और कमजोर था। पसली में चोट लगी और मर गया। पंडित बिरिज मोहन खबर मिलते ही दौड़ा आया था। रास्ते में पड़े बैल को कुएं के पास से हटाना जरूरी था। 'जब तक बैल जीवित था तो कोई बात नहीं थी। कल तक काम करने वाला बैल मरते की अपवित्र हो गया था। जिसे छूना तो दूर उसके पास खड़े होना भी किसी पाप से काम न था।

काले और भूरे पता नहीं कहाँ गए हुए थे। गाँव में किसी का भी मवेशी मरता उसे उठाकर गाँव से बाहर ले जाना उनकी ही जिम्मेदारी थी।

सामने गली से काले और भूरे चले आ रहे थे। उनके चेहरे बुझे हुए और आँखें गड्ढों में धँसी हुई थीं। सख्त हाथों की हथेलियां चौड़ी और माँस विहीन थीं। जिससे हाथों की नसे और अधिक उभरी हुई दिखाई पड़ती थी। दोनों ने घुटनों तक मटमैली सफेद धोती का टुकड़ा लपेट रखा था। कमर से ऊपर कमीज की जगह पुराने किस्म की बंदी नुमा चीकट बनियान पहन रखी थी। जिसमें जगह जगह छेद हो गए थे। उनके पौर पौर से विपन्नता झलक रही थी। वे सीधे आकर बैल के पास रुके। भूरे के हाथ में मोटे बाँस की एक लंबी –सी बाही थी।

गाँव के लोगों ने राहत की साँस ली।

भूरे का छुटकू छुरी –चाकू लेकर आ गया था।

वे खाल उतारने में सिद्धहस्त थे। ये कला उन्होंने अपने बाप से सीखी थी।

उन्होंने गीली खाल को उतारकर नाले में मिट्टी पर फैला दिया। ताकि उस पर लगा खून सूख जाए।

वे काफी थक चुके थे। खाल को लपेटकर उन्होंने एक फटी-पुरानी चादर में गठरी की शक्ल में बांध लिया। वे नाले से होते हुए पुलिया तक आ गए।

धीरे धीरे साँझ होने लगी थी। पुलिया पर बैठे काले और भूरे की चिंताएं भी साँझ की तरह और गहरी हो रही थीं। दो महीने बाद आज यह बूढ़ा बैल मरा थे जिसने उनकी डूबती आशाओं को पल भर के लिए बचा लिया था। गाँव में जानवरों का डॉक्टर आ जाने से इनका धंधा ही चौपट हो होने लगा था।

' भूरे हमें यो काम छोड़ देना चाहिए।'

क्यूँ ... जो हमने इस काम कू छोड़ दिया तो करेगा कौन। क्या मारे हुए ढोर-डंगर गाँव में ही पड़े सड़ते रहेंगे।

सड़ने दे ... इस सड़ांध में हम गले-गले तक डूब जाते हैं। किसे परवाह है ... कोई अपने धोरे (पास) बी ना बैठावे हैं।"

कुछ देर रुककर काले बोला, ' और वो सहर का लाला ... सौ बाते सुनावे है। "

लंबी सड़क पर निगाह जमाते हुए बोला, " भूरे, चल कहीं कहते हैं ...।"

काले की बात भूरे को ऐसी सुनाई पड़ रही थी जैसे वह कई कोस दूर खड़ा उसे आवाज दे रहा हो। उसके खयालों में तो गाँव के वे बच्चे घूम रहे थे जो बस्ता लिए किलकारियाँ मारते स्कूल जा रहे होते हैं। उसने स्कूल के मास्टर से भी बात कर ली थी। बस दो पैसे हाथ में आ जाएं तो छुटकू को इस साल स्कूल भेजना ही है।

उन्हें पुलिया पर बैठे काफी समय हो गया था। यदि वे समय पर शहर न पहुंचे तो खाल सड़ भी सकती है। जो दो पैसे हाथ में आने वाले हैं वे भी न निकाल जाएं।

दूर खेतों के बीच कच्चे रास्ते पर एक बछड़ी के रंभाने की आवाज उन्हें सुनाई दी। शायद लल्लू के गोधन से बछड़ी पीछे छूट गई थी। चौकन्नी मुद्रा में बछड़ी दौड़ी चली आ रही थी। पलक झपकते ही तेज गति से आते ट्रक की चपेट में आकर बछड़ी गिर पड़ी। ट्रक आगे निकल चुका था। उसकी चिकनी नरम पीठ पर हाथ फेरते हुए काले को लगा जैसे बछड़ी नहीं कोई छोटा बच्चा है जो दर्द से तड़प रहा है।

बछड़ी को दर्द से तड़पता देखकर काले की समझ में कुछ नहीं आ रहा था, क्या करे।

अचानक उसके दिमाग में डॉक्टर का ख्याल आया, उसने भूरे को पुकारा।

काले गाँव की ओर जाने के लिए उठा। बछड़ी का बदन ऐंठकर शांत हो गया था। अचानक बछड़ी का इस तरह मर जाना उन्हें दुखी कर गया था।

पुलिया पर रखी बैल की खाल पर काले ने एक नजर डाली। चादर में बंधी बैल की खाल गंधियाने लगी थी। उसने एक लंबी सांस ली और गाँव की ओर चल पड़ा। बछड़ी के मरने की खबर देने।

बोध प्रश्न

- भूरे और काले की क्या जिम्मेदारी थी ?
- इनका धंधा क्यों चौपट हो रहा था ?
- काले छुटकू को लेकर क्या स्वप्न देख रहा था ?
- बछड़ी को दर्द से तड़पता देखकर काले को क्या ख्याल आया और क्यों ?
- बिरिज मोहन समाज के किस वर्ग के प्रतिनिधि हैं और उनका व्यवहार दोनों के प्रति कैसा है ?

16.3.2 कहानी का उद्देश्य

"मुख्यधारा और दलित साहित्य" पुस्तक में ओमप्रकाश वाल्मीकि ने दलितों के प्रति अपने नजरिए को बताते हुए लिखा है कि "उनकी संवेदनशीलता, और जज़्बातों को ग़ैर दलितों ने हमेशा अनदेखा किया है, उनके प्रति दुर्भावनापूर्ण व्यवहार किया है, उनकी मानवीय संवेदना के प्रति साहित्य का नज़रिया भी नकारात्मक ही है। उनका सुख-दुख, उनकी पीड़ा साहित्य के लिए त्याज्य ही रहा है। लेकिन यह मेरी प्राथमिकताओं में है; समाज में स्थापित विद्रूपताओं को रेखांकित करना मैं ज़रूरी मानता हूँ। साथ ही दलित अस्मिता की पहचान मेरे लेखक की मूलभूत ज़रूरत है।"ओमप्रकाश वाल्मीकि की कहानियों की विशेषताओं पर प्रकाश डालते हुए आलोचक हरपाल सिंह अरुष ने लिखा है, "इनकी कहानियाँ, दलित समाज के भीतर कसमसाने वाले विरोध को, उभरकर आनेवाली संवेदना को और सहज मान ली गई भारतीय जातिवादी संरचना की मनौवैज्ञानिकता को रेखांकित करती हैं।" (ओमप्रकाश वाल्मीकि की कहानियों में सामजिक लोकतंत्र: सं. हरपाल सिंह अरुष, पृ.सं.07)

यहाँ एक तो कहानीकार और दूसरे एक आलोचक के विचार दिए गए हैं। इसके आधार पर 'बैल की खा ल' की विवेचना की जा सकती है। दलित समाज की संवेदना और उनके जज़्बातों को यह समाज अनदेखा करता है।

बैल की खाल' कहानी के केंद्र में भूरे और काले नामक दो दलित हैं। वे मेहनत कश हैं, पर गरीब हैं। वे गाँव में मरने वाले जानवरों की खाल उतारकर उसे बेचते हैं और उससे उनका घर चलता है।

भूरे और काले की खोज पंडित जी इसलिए कर रहें हैं क्योंकि उन्हें अपने मरे हुए बैल को वहाँ से हटवाना है। उनकी अपनी गरज है फिर भी वे इन दोनों से प्रार्थना नहीं करते बल्कि बड़ी बदतमीजी से पेश आते हैं। गाली देकर बात करते हैं। गाँव वालों की नजर में वे निकम्मे हैं। इस कहानी में एक कटाक्ष है। सारा जीवन बैल से काम लेने वाले उसके मरते ही उसे अछूत और घृणित समझने लगते हैं। सवर्ण जाति के लोग उससे दूर भागते हैं, पर दलितों को इस काम के योग्य समझते हैं। क्या दलित ही मरे जानवरों को ढोने के लिए रह गए हैं ? अगर वो इंकार करेंगे तो क्या गाँव में रह पाएंगे ? बैल की खाल का लालच उन्हें दिया जाता है। और इस लालच में वे न जाने कब से इस काम को करते चले जा रहें हैं।

वे गाँव में फैलाई गई गंदगी को साफ करते हैं। किन्तु बदले में गंदी गालियां खाते हैं। सारे गाँव के सामने पंडित बिरिज मोहन कहते हैं, " कहाँ मर गए थे भोसड़ी के ... तड़के से ढूंढ-ढूंढ के गोड़डे टूट गए और इब आ रहे हो महाराजा की तरियो... इस बैल को कौन उठावेगा... तुम्हारा

बाप ?' कहानीकार समाज की उस स्थिति कर चोट करते हैं जिसमें बैल परिवार का सदस्य है और खेती में सहायक है,परिवार उस पर निर्भर है। पर उसे मर जाने पर उसका वह स्थान बदल जाता है। आपके मन में बैल की तुलना इन दो दलितों से करने का विचार आता है तो समझ लें कि कहानी की संवेदना ने आपको छू लिया है। ये दोनों पात्र मजबूर हैं। अपने आप को इस गाँव से दूर शहर ले जाना चाहते हैं। अपने बच्चों को पढ़ाना चाहते हैं। पर फिलहाल खुद को मजबूर पाते हैं।

बोध प्रश्न

- इस कहानी लिखने का उद्देश्य क्या है ?
- दलित समाज के प्रति सवर्ण समाज का रुख कैसा है और क्यों ?
- दलित समाज के दो प्रतिनिधि पात्र (भूरे और काले) और सवर्ण समाज के एक पात्र (पंडित बिरिज मोहन) के व्यवहार में क्या अंतर है और क्यों ?

16.3. 3 चरित्र चित्रण

किसी अच्छी कहानी में बहुत सी रेखांकित करने वाली विशेषताएं होती हैं। तभी तो वह सीधे दिल में भीतर तक उतर जाती हैं। इस कहानी में याद रह जाने लायक बातों में चरित्रों या पात्रों का समुचित संयोजन भी है। कहानी में दो मुख्य पात्र हैं और एक गौण। और भी बहुत से पात्र हैं पर उनका केवल उल्लेख होता है। वे पृष्ठभूमि में रहते हैं। गौण पात्र काइयाँ चरित्र का प्रतिनिधित्व करता है। मुख्य पात्र उत्पीड़ित हैं और गौण पात्र उत्पीड़क। किसी कहानी के पात्र या तो सपाट होते हैं या चक्राकार। सपाट पात्र द्वि-आयामी होते हैं, क्योंकि वे अपेक्षाकृत सरल होते हैं और कहानी के दौरान बदलते नहीं हैं। इसके विपरीत, चक्राकार चरित्र जटिल होते हैं और विकास से गुजरते हैं, कभी-कभी उनका जब हृदय परिवर्तन होता है तो वे चकित कर देते हैं।। भूरे और काले ही नहीं पंडित बिरिज मोहन भी सपाट पात्र हैं वे पूरी कहानी में अपने चरित्र से हटे नहीं। यह कहानी भूरे और काले दो पात्रों के सहारे आगे बढ़ती है। ये दोनों इस कहानी के मुख्य पात्र हैं। इन दो दलितों के माध्यम से लेखक अपने अनुभवों को बांटता है। अपने दुख को दिखाता है। वाल्मीकि इसे खुद 'संवेदनीय ऊहापोह' कहते हैं। उनका यह संवेदनीय ऊहापोह इन दो पात्रों में बखूबी दिखाई दे जाता है। यह एक ऐसी मानसिक स्थिति है जिसमें वे यह तय नहीं कर पा रहे कि वे करें तो क्या करें। अपना पुश्तैनी काम छोड़कर शहर चले जाएं और अपने बच्चों को ऊंची शिक्षा दिलाएं या गाँव में रहकर गाँव के सुख दुख में काम आयें।कहा जाता है कि उत्पीड़न के समाजशास्त्र पर उस समय अंकुश लगना शुरू हुआ, जब दलित मुक्ति की नयी अवधारणाएँ सामने आईं। इसका एक कारण यह भी था कि शहर और गाँव का एक दूसरे के करीब आना। इस कहानी में भी भूरे और काले शहर की ओर जाना चाहते हैं। वहाँ उन्हें अपने

और अपने परिवार के लिए बेहतर भविष्य मिलने की आशा है। पर अभी फिलहाल वे ऊहापोह की स्थिति में हैं।

यह ऊहापोह तब सामने आती है जब वे बैल की खाल निकाल कर पुलिया पर बैठे हैं और शहर जाने वाली बस का इंतजार कर रहे हैं। बस न हो तो कोई दूसरा वाहन ही हो। उनकी परेशानी की वजह यह नहीं कि कोई उधर से आ जा नहीं रहा और उन्हें कोई गाड़ी नहीं मिल पा रही। उनकी चिंता इस बात को लेकर है कि सड़क पार करते हुए एक बछिया गाड़ी के नीचे आकर कुचल जाती है और उस बछिया को बचाना लाज़िम है। बछड़ी या बछिया को कराहती देखकर काले भूरे से उसके लिए पानी लाने को कहता है। पानी न मिलने पर गाँव से डॉक्टर को बुलाने की मांग करता है। इस कहानी में प्राणी मात्र के लिए इन दो दलितों में जो संवेदना मिली है वह उनके भारतीय संस्कारों के अनुरूप है।

एक महत्वपूर्ण पात्र पंडित बिरिज मोहन हैं। वे भी अपने संस्कारों और मिजाज से बंधें हैं। लगता है कहानीकार ने इन्हें अपने गाँव के किसी पंडित जी को देखकर प्रस्तुत किया है। ठीक वैसे ही जैसे प्रेमचंद ने पंडित मोटेराम शास्त्री को गढ़ा था। खुद ओम प्रकाश वाल्मीकि ने इस पात्र के बारे में अपनी आत्मकथा 'जूठन' में इस प्रकार लिखा है, " ऐसी गालियां जिन्हें यदि मैं शब्द-बद्ध कर दूँ तो हिंदी की अभिजात्यता पर धब्बा लग जाएगा। क्योंकि मेरी एक कहानी 'बैल की खाल' में एक पात्र के मुँह से गाली दिलवा देने पर हिंदी के कई बड़े लेखकों ने नाक-भौ सिकोड़ी थी। संयोग से गाली देने वाला पात्र ब्राह्मण था। ब्राह्मण यानी ब्रह्म का ज्ञाता और गाली !"

पंडित जी जो गाली देते हैं, वह इस कहानी में है। और इतने वर्षों बाद इसको पढ़ना कोई अजीब सा नहीं लगेगा।

पंडित जी के चरित्र के दुर्बल पक्ष को यह गाली बड़ी अच्छी तरह से रेखांकित करती है और वे एक प्रकार से अपनी जाति विशेष के प्रतिनिधि बन जाते हैं।इसका तात्पर्य यह नहीं कि सब पंडित ऐसे ही होते हैं, पर ये हैं और इसलिए पाठकों के लिए इनके चरित्र को आंकना आसान हो जाता है। पंडित जी के मन में 'ऊंच नीच' की भावना प्रबल है। वे दलितों की बेइज्जती करना अपना धर्म समझते हैं। उनको धमकाना, डराना, अपमानित करना और कभी-कभार बल-प्रयोग करना वे आदतन करते हैं। पंडित जी यह भी देख समझ रहे हैं कि दलित अपनी आवाज बुलंद कर रहा है। वह अब बड़ी देर तक उनको गाली देने का मौका नहीं देने वाला। इसलिए वे कुछ घबराए भी हैं। उनके डर को भी कहानीकार इन शब्दों में व्यक्त करता है, "जब तक बैल जीवित था तो कोई बात नहीं थी। कल तक अन्न उगाने वाला बैल मरते ही अपवित्र हो गया था ...। गाँव के बड़े बूढ़े बैल को लेकर कुछ ज्यादा ही चिंतित थे।"

बैल यूँ तो इस कहानी में कोई जीवंत पात्र नहीं है जैसे प्रेमचंद की कहानी 'दो बैलों की कथा' के हीरा -मोती हैं। पर यह एक प्रतीक है। बैल को दलित के प्रतीक के रूप में प्रस्तुत करते हुए लेखक ने ग्रामीण जीवन का खाका भी पेश किया है। कृषि प्रधान देश में खेत-खलियान के लिए बैल का उपयोग अब भी होता है चाहे कितने भी यंत्र आ जाएं। पर यह भी सच है कि जब वही बैल अकर्मण्य हो जाता है या अचानक मर जाता है तो उसको देखना भी उसके मालिक लोग पाप समझते हैं। इसको ठिकाने लगाने के लिए उन्हें अपने गाँव के उस जाति के लोग चाहिए जो उनकी खाल खींचकर अपना भरण पोषण करते हैं। हिंदी में 'खाल खींचना' एक मुहावरा है जिसका अर्थ है दंड देना। इस कहानी में बैल की खाल दलितों की गुलामी की खाल का प्रतीक भी बनकर उभरती है। कहानी के दो प्रमुख पात्र भूरे और काले बैल की खाल छीलते हैं, मानों वे खुद की गुलामी की खाल को छीलकर फेंकने का प्रयास कर रहे हैं। दलित विद्रोह की इस ध्वनि को कहानीकार ने सीधे नहीं बल्कि परोक्ष रूप से कुछ यूँ चित्रित किया है - खाल अभी आधी नहीं उतरी थी कि आकाश से गिद्धों के झुंड उतरने लगे। देखते ही देखते झुंड-के- झुंड गिद्ध घेरा डालकर मंडराने लगे। ताजा उतरी खाल को लेकर वे बैल से थोड़ा दूर हट गए। उनके हटते ही गिद्ध बैल पर टूट पड़े। गिद्धों की आवाज भयानक वातावरण बना रही थी।"

बोध प्रश्न

- कहानी के पात्र दो तरह के हो सकते हैं। वे दो प्रकार के पात्र कौन कौन से हैं और इस कहानी में वे कौन कौन हैं?
- क्या वास्तव में बैल प्रतीक हैं ? कैसे ?
- पंडित और दलित दोनों डरे हुए हैं। दोनों के डर में अंतर क्या है ?

16.3.4 भाषा-शैली

इस कहानी में इसके शीर्षक से लेकर अंत तक भाषा की महत्वपूर्ण भूमिका है। कहानीकार की सधी हुई अपने परिवेश से उठाई गई भाषा पात्रानुकूल है। नरेटर के रूप में वाल्मीकि ने अपना सधा-सधाया अंदाज देखने को मिलता है। भाषा की बिम्बधर्मिता जगह जगह पर देखी जा सकती है। कुछ उदाहरण देखें –

1)तड़के मुँह –अंधेरे पंडित बिरिज मोहन का हाली हल और बैल लेकर खेत जोतने निकला ही था कि कुएं के पास से बैलों को उसने टिटकारी दी। कुएं के पास खड़ंजे पर फिसलन थी।

इस उदाहरण में तड़के, हाली, टिटकारी, खड़ंजे आदि शब्द कई पाठकों को नए लगेंगे। इन वाक्यों के द्वारा लेखक जो चित्र पाठक के दिल पर अक्स होता है वह पूरी तरह से गाँव का होता है। इस तरह के वर्णन से लेखक कथा परिवेश का निर्माण करते हैं। गाँव का कुआं हो या बाहर शहर की पुलिया ये सब ग्रामीण परिवेश का निर्माण करते हैं। गाँव के स्कूल का चित्रण जिसमें

पहाड़े रटते बच्चे हैं और 'बस्ता लिए किलकारियाँ मारते स्कूल जा रहे होते हैं। वे एक सुर में बोलते हैं। पर छुटकू के पास स्कूल जाने लायक कपड़े भी नहीं है।

2) भूरे और काले के संवादों में एक बात बड़े मार्के की है। काले जो कुछ बोलता है, वह अपेक्षाकृत बेहतर हिंदी बोलता है।भूरे ठेठ खड़ी बोली और हरियाणवी।

'काले, इब डॉक्टर आके क्या करेगा... देख लहू कितना बह गया है..."

" भूरे, तू ज्यादा अकलमंदी न दिखा... तू यहाँ ठहर ...। मैं जाता हूँ डॉक्टर को लाने। "

एक दूसरा उदाहरण है, मुख्य पात्रों के नैन-नक्श का चित्रण, उनके चेहरे मोहरे का शब्द चित्र।

> सामने गली से काले और भूरे चले आ रहे थे। उनके चेहरे बुझे हुए और आँखें गड्ढों में धँसी हुई थीं। सख्त हाथों की हथेलियाँ चौड़ी और माँसविहीन थीं। जिससे हाथों की नसें और अधिक उभरी हुई दिखाई पड़ती थीं। दोनों ने घुटनों तक मटमैली सफेद धोती का टुकड़ा लपेट रखा था। कमर से ऊपर कमीज की जगह पुराने किस्म की बंडीनुमा चीकट बनियान पहन रखी थी। जिसमें जगह-जगह छेद हो गए थे। उनके पौर-पौर से विपन्नता झलक रही थी।

इस तरह के दूसरे उदाहरण भी हैं,जैसे पंडित बिरिज मोहन (ब्रज मोहन) का नाम और उसका तथाकथित उच्च वर्ण का होने के बावजूद भद्दी गालियां देने लगना। आप जानते ही हैं कि ओम प्रकाश वाल्मीकि कवि भी अव्वल दर्जे के हैं। इसलिए उनकी भाषा में कविता के गुण हैं। उनकी कहानियों में बिम्बधर्मी काव्यभाषा की सुंदरता का भी सधा प्रयोग नजर आता है।" काले और भूरे की चिंताएं भी साँझ की तरह और गहरी हो रही थीं" जैसे वाक्य मन को प्रसन्न करते हैं क्योंकि इनसे जो बिम्ब बनाया जाता है वह पाठक को पसंद आता है।

16.4 पाठ सार

'बैल की खाल' कहानी वाल्मीकि की कहानी कला, यथार्थबोध एवं संवेदशील दृष्टिकोण का बेजोड़ नमूना है।इस कहानी में उठाए गए प्रश्नों और इसके संदेश से आप बदलते भारत की तस्वीर देख सकते हैं। वर्ण और जाति या दलित प्रश्नों के साथ एक शाश्वत प्रश्न – गरीबी का सवाल – भी यहाँ देखा जा सकता है। आखिरकार दलित के प्रति उपेक्षा और निरादर का बहव उच्च वर्ग में अपनी संपन्नता और दलित की विपन्नता के कारण भी उदित होता है। कहानी दो दलित व्यक्तियों – काले और भूरे – के मन की संवेदनशीलता को रेखांकित करती है। कहानी के ये दो पात्र मरे हुए बैलों की खाल उतारकर बेचते हैं। यह उनकी आजीविका है। एक पंडित के बैल के मरने पर जब इन दोनों की याद गाँव को आती है तो वे आकर मरे हुए बैल को गाँव से बाहर ले जाते हैं।इसकी खाल उतारने के दौरान वे गाँव में पशु चिकित्सक के आने, अपने अभाव,अपने बच्चों की शिक्षा, पुश्तैनी काम छोड़ कर शहर जाने का मौका आदि के बारे में

सोचते हैं। पर वे केवल अपना स्वार्थ ही नहीं देखते। जब अचानक एक बछिया ट्रक के सामने आकर घायल हो जाती है तो वे उसकी देखभाल करते हैं। उसे डॉक्टर के पास ले जाने को परेशान होते हैं और वे बैल की तभी उतारी गई खाल को शहर ले जाकर बेचने की चिंता छोड़ बछिया के मरने के गम में डूब गाँव की ओर चले जाते हैं। वे बछिया की खबर उसके मालिक को देना चाहते हैं। भूरे और काले जीवन का मूल्य समझते हैं, उनके अंदर मानवीय संवेदना है। देखा जा सकता है कि ये दोनों दलित गरीब जरूर हैं पर यह केवल उनकी एक परेशानी भर है। यदि यही एक मुश्किल उनकी होती तो वे शहर के लाला का कहना मानकर जानवरों को जहर देकर मारना शुरू कर देते और गरीबी से निजात पा जाते। दिन रात बैल की खालें निकालते। पर वे अपने बच्चों को पढ़ाना चाहते हैं। शहर जाकर दूसरे युवकों की तरह मौज उड़ाने की बजाय ये दोनों अपने गाँव के विकास में योगदान करना चाहते हैं। पशु चिकित्सक ने आने से खुश होते हैं जबकि वह तो उनके रास्ते का कांटा है। कह सकते हैं कि वे प्रेमचंद की कहानी 'कफन' के घीसू और माधो से बेहतर हैं क्योंकि भूरे और काले नशा करके नाचते हुए बेहोश नहीं होते, ये दोनों अपने लोगों के साथ रहकर सबका साथ और सबका विकास करना चाहते हैं। बड़ों के घटियापन और छोटे कहे जाने वालों के बड़प्पन को उजागर करने वाली यह कहानी मानवीय संवेदना को दूर तक छूती चली जाती है। इन दो भले मानुषों का चरित्र आदर्श दिखाई देने लगता है और बड़ी जाति के पंडित का चरित्र, व्यवहार और भाषा प्रयोग बुरा लगता है।

16.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात निम्नलिखित उपलब्धियां प्राप्त होती हैं –

- कथाकार के रूप में ओम प्रकाश वाल्मीकि की कहानी कला की बानगी मिली
- दलित जीवन और दलित उत्पीड़न के बदलते परिदृश्य की झलकी मिली
- भारतीय ग्रामीण समाज में दलितों के जीवन का चित्रण सामने आया।
- कहानीकार की बिम्बधर्मिता और भाषाशैली की विशेषताओं से परिचय प्राप्त हुआ।
- कहानी के माध्यम से दी गई शिक्षा और निर्देश की समझ और उसको अपने शब्दों में प्रस्तुत करने की योग्यता प्राप्त हुई।

16.6 शब्द संपदा

1. मुफलिस – गरीब, निर्धन
2. मवेशी – जानवर
3. चीकट - जिसपर चिकनाईयुक्त मैल हो, बहुत मैला, . तेल का मैल
4. विपन्न – दरिद्र, बहुत गरीब
5. ढोर डंगर - जानवर

6. ऊहापोह - आंतरिक तर्क-वितर्क,द्वंद्व की स्थिति; असमंजस, दुविधा, अनिश्चतता की अभिव्यक्ति

7. अभिजात्यता - कुलीन या अभिजात होने की अवस्था या भाव

16.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड –(अ)

दीर्घ प्रश्न

निम्न लिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1)'बैल की खाल' कहानी का सार अपने शब्दों में लिखते हुए उसके उद्देश्य को रेखांकित कीजिए।

2)'बैल की खाल' कहानी किसी 'बैल' की कहानी नहीं, तो किसकी कहानी है और कैसे ?

3)'बैल की खाल' कहानी के आधार पर ओम प्रकाश वाल्मीकि की कहानी-कला के मुख्य सरोकारों पर प्रकाश डालिए।

4)'पंडित बिरिज मोहन' ओम प्रकाश वाल्मीकि की कहानी 'बैल की खाल' में समाज के किस वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं ? उसके चरित्र और व्यवहार पर टिप्पणी कीजिए।

5)"बैल के जीवन से दलित जीवन की तुलना करके कहानीकार ने दलित चेतना को रेखांकित किया है" इस कथन की समीक्षा कीजिए।

6)भूरे और काले अपने और अपने बच्चों के भविष्य के प्रति क्या विचार रखते हैं ? उदाहरण सहित उत्तर दीजिए।

7)'बैल की खाल' कहानी में 'खाल' की प्रतीकात्मकता पर विचार व्यक्त कीजिए।

खंड –(ब)

लघु प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 250 शब्दों में दीजिए।

1) 'बैल की खाल' कहानी की मुख्य समस्या क्या है?

2) 'शहर का लाला' गाँव के दलित भूरे-काले को क्या सुझाव देता है और क्यों? भूरे काले की इस पर क्या प्रतिक्रिया होती है ?

3)गाँव की बछिया के मरने पर भूरे काले क्या करते हैं और क्यों ?

4)छुटकू कौन है और उसके प्रति भूरे काले की क्या सोच है ?

5) "भूरे हमें यू काम छोड़ देना चाहिए।" यह कौनसा कार्य है और क्यों छोड़ना चाहिए ?

6) 'बैल की खाल' कहानी की भाषा शैली पर टिप्पणी कीजिए।

खंड- (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1) ओम प्रकाश वाल्मीकि का कहानी संग्रह नहीं है –

अ) बैल की खाल आ) सलाम इ) घुसपैठिये ई) छतरी

2) 'भूरे चल कहीं चलते हैं।" ये लोग कहाँ जाना चाहते हैं ?

अ) शराब की दुकान आ) पुलिया इ) शहर ई) इनमें से कोई नहीं

3) पंडित बिरिज मोहन भूरे काले की खोज क्यों कर रहे हैं ?

अ) कर्ज वसूल करने के लिए आ) बैल की खाल के लिए इ) फटकार लगाने के लिए ई) मरे बैल को हटवाने के लिए

4) 'बैल की खाल' कहानी का उद्देश्य है –

अ) अंधविश्वासों पर प्रहार आ) दलितों की व्यथा का चित्रण इ) सवर्णों के प्रति घृणा का प्रसार (ई) ये सभी

II. रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए

1) 'बैल की खाल' कहानी किसी बैल की कहानी नहीं बल्कि _____ कहानी है।।

2) भूरे का छुटकू _____ लेकर आया था।

3) गाँव में _____के आने से इनका धंधा चौपट हो गया था।

4) बड़ों के_____ और छोटे कहे जाने वालों के _____ को उजागर करने वाली 'बैल की खाल' कहानी का उद्देश्य है _____।

5) भूरे और काले की तुलना प्रेमचंद की _____ कहानी के दो पात्रों से की जा सकती है।

6) _____ की व्यथा, छटपटाहट, सरोकार 'बैल की खाल' कहानी में साफ साफ दिखाई देती हैं।

III. सुमेल कीजिए

1. भूरे –काले	a) गड़रिया
2. पंडित बिरिज किशोर	b) दलित
3. लल्लू	c) दलित बालक

4. छुटकू d) काइयाँ

16.8 पठनीय पुस्तकें

1. ओम प्रकाश वाल्मीकि : व्यक्ति, विचारक और सृजक (2016) जय प्रकाश कर्दम (संपादक) वाणी प्रकाशन

2.'सलाम' (कहानी संग्रह) :ओम प्रकाश वाल्मीकि, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली।

3.जूठन (आत्मकथा): ओम प्रकाश वाल्मीकि, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली।

परीक्षा प्रश्नपत्र नमूना

MAULANA AZAD NATIONAL URDU UNIVERSITY

PROGRAMME: M.A –HINDI

III – SEMESTER EXAMINATION May - 2024

TITLE & PAPER CODE : विशेष अध्ययन : दलित विमर्श (MAHN302DST)

TIME: 3 HOURS TOTAL MARKS: 70

यह प्रश्न पत्र तीन भागों में विभाजित हैं- भाग -1, भाग -2 और भाग - 3 प्रत्येक प्रश्न के उत्तर निर्धारित शब्दों में दीजिए।

भाग – 1

1. निम्न लिखित विकल्पों में सही विकल्प चुनिए। 10X1=10

i. 'नो बार' कहानी का मुख्य पात्र कौन हैं?

(A) राकेश (B) राजेश (C) शीला (D) रमेश

ii. ओम प्रकाश वाल्मीकि का कहानी संग्रह नहीं है –

(A) बैल की खाल (B) सलाम (C) घुसपैठिये (D) छतरी

iii.संघर्ष कहानी किस विमर्श से संबंधित कहानी है ?

(A) मुस्लिम विमर्श (B) मार्क्सवादी (C) दलित विमर्श (D) वृद्ध विमर्श

iv. 'तिनका-तिनका आग' कविता संग्रह का प्रकाशन कब हुआ ?

(A) 2004 (B) 2005 (C) 2006 (D) 2007

v. 'दलित पैन्थर' का गठन किस वर्ष हुआ था?

(A) 1979 (B) 1960 (C) 1962 (D) 1972

vi. 'नागफनी' आत्मकथा का प्रकाशन कब हुआ था?

(A) 2007 (B) 2008 (C) 2009 (D) 2010

vii. 'बस्स बहुत हो चुका' कविता का प्रमुख स्वर है –

(A) पीड़ा (B) वेदना (C) प्रतिरोध (D) चिंता

viii. ओम प्रकाश वाल्मीकि का काव्य संग्रह नहीं है –

(A) बस्स बहुत हो चुका (B) जूठन (C) सदियों का संताप (D) अब और नहीं

ix. मराठी में दलित साहित्य के अग्रदूत कौन हैं?

(A) बाबु राव वागुल (B) नामदेव ढसाल (C) अंबेडकर (D) नारायणन

x. दलित साहित्य किस समुदाय की आवाज है?

(A) सवर्ण (B) सामंती (C) तिरस्कृत (D) मनुवादी

भाग – 2

निम्नलिखित आठ प्रश्नों में से किन्हीं पाँच प्रश्नों के उत्तर दीजिए। प्रत्येक प्रश्न का उत्तर 200 शब्दों में देना आनिवार्य है। 5X6 =30

2. 'नो बार' कहानी के पत्रों का चरित्र-चित्रण कीजिए।
3. संघर्ष कहानी का तात्विक विवेचन को समझाइए।
4. दलित कविता से आप क्या समझते हैं ?
5. अश्वेत आंदोलन के संबंध में प्रकाश डालिए।
6. सोनकर जी के नाटकों की समीक्षा कीजिये।
7. संघर्ष कहानी का तात्विक विवेचन को समझाइए।
8. 'बैल की खाल' कहानी की मुख्य समस्या क्या है?
9. सुशीला टाकभौरे का जीवन परिचय संक्षिप्त में दीजिए।

भाग- 3

निम्नलिखित पाँच प्रश्नों में से किन्हीं तीन प्रश्नों के उत्तर दीजिए। प्रत्येक प्रश्न का उत्तर 500 शब्दों में देना अनिवार्य है। 3X10=30

10. बैल की खाल' कहानी का सार अपने शब्दों में लिखते हुए उसके उद्देश्य को रेखांकित कीजिए।
11. भारतीय दलित आंदोलनों की गतिशीलता का परिचय दीजिए।
12. दलित कहानी लेखन परम्परा की चर्चा कीजिए।
13. ओमप्रकाश वाल्मीकि के साहित्य की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।
14. दलित साहित्य को परंपरागत मानदंडों के आधार पर क्यों नहीं देखा जा सकता है?

*****